दैनिक जागरण

कार्य की योजना बनाएं और फिर योजना अनुरूप कार्य करें

लंबा खिंचता युद्ध

अमेरिका-इजरायल और ईरान के बीच युद्ध छिड़े एक माह बीत चुका है, लेकिन अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप की ओर से खुद को शांति का मसीहा बताए जाने के बाद भी पूरी दुनिया को प्रभावित करने वाला यह खतरनाक सैन्य संघर्ष खत्म होने के बजाय और खिंचता ही दिख रहा है। इसका प्रमाण है अमेरिका की ओर से ईरान के परमाणु केंद्र को निशाना बनाना। ईरान के इस्फहान स्थित परमाणु केंद्र पर अमेरिका ने एक ऐसे समय बंकर बस्टर बम गिराया, जब ट्रंप ईरानी नेताओं से शांति प्रस्ताव पर कथित तौर पर वार्ता भी कर रहे हैं। या तो वे झूठ बोल रहे हैं अथवा ईरान के साथ-साथ पश्चिम एशियाई देशों और विश्व के साथ भी छल कर रहे हैं। पश्चिम एशिया संकट का समाधान करने के मामले में उनका इरादा कुछ भी हो, वे बिल्कुल भी विश्वसनीय नहीं रह गए हैं। इसी कारण अमेरिका में तो उनका विरोध बढ़ता ही जा रहा है, उनके मित्र देश और यहां तक कि नाटो राष्ट्र भी ईरान के खिलाफ युद्ध में उनका सहयोग करने को तैयार नहीं। अब यह भी स्पष्ट दिख रहा है कि ट्रंप ने बिना विचारे इजरायल संग ईरान पर हमला बोलकर अमेरिका और यूरोप समेत पूरे विश्व को संकट में डाल दिया। इसके भरे-पूरे आसार हैं कि अभी तक अपनी मनमानी करते चले आ रहे ट्रंप को इस बार अपने अहंकार की कीमत चुकानी पड़ेगी।

पश्चिम एशिया संकट जिस तरह गहराता चला जा रहा है और ट्रंप इस संकट के समक्ष जिस प्रकार असहाय-निरुपाय दिख रहे हैं, उससे उनकी जगहंसाई तो हो ही रही है, अमेरिका की प्रतिष्ठा को चोट भी पहुंच रही है। यह सही समय है कि अमेरिका के नीति-नियंता और साथ ही वहां की जनता इस पर विचार करे कि उसने ट्रंप सरीखे अस्थिर प्रवृत्ति के व्यक्ति को राष्ट्रपति चुनकर क्या हासिल किया? इसमें संदेह नहीं कि अमेरिका के साथ इजरायल की रणनीति सवालों के घेरे में है, लेकिन इसके साथ ही ईरान के रवैये को भी सही नहीं कहा जा सकता। ईरान एक तरह से यही दिखा रहा है कि अमेरिका और इजरायल का सामना करने के क्रम में उसे अपनी बर्बादी की परवाह नहीं और उसकी प्राथमिकता ऊर्जा संकट को चरम पर ले जाना और अपने पड़ोसी देशों की नाक में दम करना है। शायद उसकी इसी नीति के कारण खाड़ी के देश नुकसान उठाने के बावजूद यह चाह रहे हैं कि ईरान किसी तरह पस्त हो जाए। इससे भी बड़ी विडंबना यह है कि विश्व के प्रमुख देश अमेरिका-इजरायल और ईरान के बीच के घमासान को रोकने के लिए गंभीरता से कोई ठोस पहल करते नहीं दिख रहे हैं। अब जब सभी देश निष्प्रभावी दिख रहे हैं, तब फिर यह आवश्यक हो जाता है कि कहीं से कोई यह आवाज प्रबलता से उठे कि मानवता के हित में इस युद्ध का पटाक्षेप किया जाए। अच्छा होगा कि ऐसी आवाज उठाने का काम भारत करे।

कैग के प्रश्न

भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (कैग) की सोमवार को हिमाचल प्रदेश विधानसभा में प्रस्तुत रिपोर्ट ने वित्तीय प्रबंधन और प्रशासनिक कार्यप्रणाली में कई कमियों को इंगित किया है। रिपोर्ट ने केवल वर्तमान ही नहीं, बल्कि पूर्व सरकारों के कार्यकाल की अनियमितताओं को भी उजागर किया है। बिना बजट प्रविधान के 438 करोड़ रुपये से अधिक का खर्च तकनीकी त्रुटि नहीं, बल्कि वित्तीय अनुशासन की गंभीर अनदेखी है। संबंधित विभागों में न तो योजना निर्माण की प्रक्रिया अपनाई और न ही खर्च पर प्रभावी निगरानी रखी। अतिरिक्त व्यय को बाद में भी वैधानिक स्वीकृति नहीं दिलाई गई। जलशक्ति विभाग का लघु सिंचाई योजनाओं में बिना सर्वे के कार्य करना और फिर भी लोगों तक पानी न पहुंच पाना बताता है कि योजनाएं कागजों में अधिक और धरातल पर कम हैं। खनन क्षेत्र में स्थायित्व और पारदर्शिता पर ध्यान देना जरूरी नहीं समझा गया। आपदा प्रबंधन में राज्य आपदा प्रतिक्रिया कोष और राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया कोष के उपयोग में दिशानिर्देशों की अनदेखी उस तंत्र की पोल खोलती है जो संकट के समय सबसे अधिक जिम्मेदार होता है। हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय में नियुक्तियों में पारदर्शिता की कमी और दस्तावेज सत्यापन न होना संस्थान की साख को प्रभावित करने के सात छात्रों के भविष्य से भी खिलवाड़ है। अब आवश्यक है कि रिपोर्ट में इंगित कमियों से सबक लेकर भविष्य में वित्तीय अनुशासन को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाए। योजनाओं के निर्माण से लेकर क्रियान्वयन तक निगरानी मजबूत होनी चाहिए।

> रिपोर्ट में बताई कमियों से सबक लेकर भविष्य में वित्तीय अनुशासन की तरफ बढ़ना होगा

संतुलित विदेश नीति का सुफल

श्रीराम चौलिया

> पश्चिम एशिया संकट में भारत ही संभवतः अकेला देश है जो इजरायल, ईरान और खाड़ी देशों का बराबर विश्वासपात्र बनकर अपने राष्ट्रीय हितों को साध पा रहा है

संकट में ही वास्तविक चरित्र का परिचय मिलता है। इस संदर्भ में पश्चिम एशिया में जारी युद्ध एक ताजा पड़ाव बनकर उभरा है। अमेरिका और इजरायल बनाम ईरान युद्ध ने विश्व की सुरक्षा, आर्थिकी और स्थिरता को खतरे में डाल दिया है। हर देश को इससे उपजी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, पर भारत ने इस संकट में जैसी कूटनीति का प्रदर्शन किया, वह परिपक्व एवं फलदायी साबित हुई है। इसके परिणाम हमारे सामने हैं। देखा जाए तो पश्चिम एशिया में भारत के लिए ऊर्जा सुरक्षा, प्रवासियों का कल्याण और भूराजनीतिक तथा भूआर्थिकी से जुड़े मुद्दे अहम हैं। भारत द्वारा आयात किए जाने वाले कुल तेल का लगभग 50 प्रतिशत और कुल गैस का लगभग 60 प्रतिशत हिस्सा पश्चिम एशिया से आता है। जब ईरान ने होर्मुज जलमार्ग से तेल एवं गैस ले जाने वाले जहाजों पर हमले शुरू किए, तो नई दिल्ली ने तेहरान के साथ सीधे बातचीत का विकल्प चुना और अपने जहाजों की उस संकरे समुद्री मार्ग से सुरक्षित आवाजाही सुनिश्चित कराई। भारतीय तेल और गैस वाहक जहाजों और नाविकों की सुरक्षा इसीलिए संभव हुई, क्योंकि तेहरान ने नई दिल्ली को अपना मित्र और शत्रु खेमे से दूर माना है। ईरान ने भारत को इस श्रेणी में शामिल किया, क्योंकि भारत ने उस पर हमला करने वाले अमेरिकी-इजरायली खेमे की कोई सामरिक सहायता नहीं की। व्यावहारिक कारणों के चलते भारत ने भले ही अमेरिका-इजरायल आक्रमण की प्रत्यक्ष निंदा नहीं की हो, किंतु युद्ध की शुरुआत से ही भारत बातचीत और शांतिपूर्ण समाधान के समर्थन में खड़ा है।

भारत ने ईरान के साथ 2003 से ही रणनीतिक साझेदारी निभाई है। इसके अंतर्गत तेल खरीदारी के साथ ही चाबहार बंदरगाह के निर्माण में योगदान दिया। पिछले कुछ वर्षों में पश्चिमी आर्थिक प्रतिबंधों के कारण भारत और ईरान के बीच कारोबार कुछ सिकुड़ा है, लेकिन भारत प्रतिबंधों में ढील दिए जाने के लिए प्रयासरत रहा है। ऐसे में विपक्षी दलों के वे आरोप आधारहीन ही हैं कि मोदी सरकार ने अमेरिका-इजरायल के दबाव में ईरान को ताक पर रख दिया है। एक ओर ईरान स्वयं भारत को अपना मित्र मान रहा है तो दूसरी ओर युद्ध में ईरानी हमलों से त्रस्त खाड़ी के देशों ने भी भारत को खास दोस्त करार दिया है। संयुक्त अरब अमीरात, सऊदी अरब, कुवैत, कतर, ओमान, बहरीन आदि में एक करोड़ से अधिक भारतीय नागरिक रहते हैं। युद्ध में निरंतर बमबारी के बीच इतने विशाल भारतीय प्रवासी समुदाय की सुरक्षा की गारंटी और उनमें से लाखों की घर वापसी तभी संभव हो पाई है, क्योंकि भारत ने खाड़ी देशों की सरकारों के साथ परस्पर विश्वास आधारित संबंध विकसित किए हैं।

अवधेश राजपूत

युद्ध की शुरुआत से अब तक प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और विदेश मंत्री एस. जयशंकर ने लगातार खाड़ी के शीर्ष नेताओं से संवाद बनाए रखा है। खाड़ी देशों ने केवल प्रवासियों के मुद्दे को लेकर ही भारत का साथ नहीं दिया है, अपितु आपात स्थितियों में काम आने वाले भारत के रणनीतिक पेट्रोलियम भंडार को भरने में अमीरात और सऊदी की अहम भूमिका भी रही है। ओशियानिया और एशिया से लेकर यूरोप तक जब युद्ध के चलते पेट्रोल और डीजल के दाम आसमानी ऊंचाइयों पर पहुंच गए, तब भारत में कोई वृद्धि नहीं दिखी है। केवल प्रीमियम उत्पादों में मामूली बढ़ोतरी हुई है। संकट में ऐसे चमत्कारिक परिणाम का पूरा श्रेय हमारी बहुआयामी और संतुलित विदेश नीति को जाता है। इस युद्ध में भारत ही संभवतः ऐसा अकेला देश है जो इजरायल, ईरान और खाड़ी देशों का एकसमान विश्वासपात्र बनकर अपने राष्ट्रीय हितों को साध पा रहा है।

जहां तक मध्यस्थता के मुद्दे की बात है तो पाकिस्तान की सक्रियता के चलते कुछ आलोचकों ने भारत की कूटनीति पर सवाल उठाए हैं, लेकिन यह कसौटी उचित नहीं है। एक तो ईरान ने पाकिस्तानी मध्यस्थता को किसी भी समर्थन से इन्कार कर दिया है और दूसरा इसे लेकर भारत और पाकिस्तान की तुलना अतार्किक है। अमेरिका ने पाकिस्तान को हमेशा एक मोहरे के रूप में इस्तेमाल किया है। रिचर्ड निक्सन और रोनाल्ड रीगन से लेकर जार्ज डब्ल्यू बुश एवं बराक ओबामा तक कई अमेरिकी राष्ट्रपतियों ने पाकिस्तान का इस्तेमाल करके चीन, अफगानिस्तान और ईरान में अमेरिकी हितों को ही आगे बढ़ाया है। जबकि इस्लामिक भाईचारे और सहानुभूति का मुखौटा पहनते हुए भी पाकिस्तान ने अमेरिकी आर्थिक और सैन्य सहयोग के लोभ में इस्लामी पड़ोसियों की पीठ में कई बार छुरा भोंका है। ट्रंप पाकिस्तान के इस दोहरे रवैये से बखूबी वाकिफ हैं जिसका उदाहरण उनका यह बयान भी रहा कि उन्हें इसी प्रकार के कमजोर सौदेबाज देश पसंद हैं। ट्रंप ने एक सवाल के जवाब में यही कहा कि 'मुझे हमेशा हारे हुए लोग अच्छे लगते हैं, क्योंकि वे मेरी सफलता की कहानियां सुनते हैं और गुणगान करते हैं।' उनका इशारा पाकिस्तान की ओर ही था। इससे पहले पाकिस्तान ने ट्रंप को नोबेल शांति पुरस्कार के लिए नामांकित करके, उन्हें भारत के साथ परमाणु युद्ध रोकने वाले मसीहा के रूप में सम्मानित करके और रियल एस्टेट, क्रिप्टोकरेंसी तथा खनिजों में संदिग्ध सौदों की पेशकश करके उनके अहं की भरसक तुष्टि का प्रयास किया है। पाकिस्तान के जैसे पैंतरे भारत सरीखे स्वाभिमानी और उभरती महाशक्ति को शोभा नहीं देते। जिन तौर-तरीकों से पाकिस्तान पश्चिम एशिया के युद्ध में समाधान प्रदाता के रूप में पेश आ रहा है, उनसे स्वायत्तता और संप्रभुता का नुकसान होता है। वैसे भी ट्रंप जैसे अस्थिर व्यक्ति का चापलूस बनकर पश्चिम एशिया में मध्यस्थता करना खतरों से खाली नहीं है और भारत ने इस मामले में परहेज करके अपने आप को अनावश्यक उलझनों से बचाने का ही काम किया है।

वस्तुतः, इस युद्ध में भारत की कारगर रणनीति ने पश्चिम एशिया और अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था में अपनी स्थिति को और मजबूत करने की संभावनाओं को खुला रखा है। किसी भी बड़े अंतरराष्ट्रीय संकट में विकल्प सरल नहीं होते हैं और भारत ने सबसे तर्कसंगत मार्ग चुना है, जिससे दीर्घकालिक लाभ प्राप्त होंगे।

(लेखक जिंदल स्कूल आफ इंटरनेशनल अफेयर्स में प्रोफेसर एवं डीन हैं)

response@jagran.com

ध्वस्त हुआ लाल गलियारे का सपना

हरेंद्र प्रताप

> नेपाल में भारत विरोधी शक्तियों का पस्त पड़ना द्विपक्षीय संबंधों में नई शुरुआत के लिए शुभ संकेत है

लोकसभा में गृह मंत्री अमित शाह की ओर से दिए गए इस कथन को चुनौती देना कठिन है कि मैं कह सकता हूं कि हम माओवाद से मुक्त हो चुके हैं। माओवाद के अंतिम सांसें गिनने की स्थिति में पहुंचने के साथ ही माओवादियों के लाल गलियारा बनाने का सपना चकनाचूर हो गया। माओवादियों द्वारा भारत में लाल गलियारे की संकल्पना असल में चीनी विस्तारवाद का ही एक हिस्सा था। यह गलियारा नेपाल से शुरू होकर भारत के बिहार, बंगाल, झारखंड, ओडिशा, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र और आंध्र प्रदेश होते हुए कर्नाटक तक फैला हुआ था। एक समय में माओवादियों ने देश के लगभग 100 जिलों में अपनी समानांतर सरकारें स्थापित कर ली थीं। उस दौर में "मेरे नेता माओ" जैसे नारे दीवारों पर लिखे जाते थे। उस स्थिति के उलट 31 मार्च की समयसीमा के अनुसार भारत में माओवादियों में आत्मसमर्पण की होड़ दिखी।

भारत से इतर नेपाल के परिदृश्य को देखा जाए तो 1994 में माओवादियों ने वहां सशस्त्र संघर्ष शुरू किया। सरकार को मजबूरन उनके साथ समझौता करना पड़ा। 25 मई 2006 को नेपाल सरकार और माओवादियों के बीच युद्धविराम हुआ। इस युद्धविराम को लेकर उनकी कुछ प्रमुख शर्तें थीं। इनमें नेपाल में राजशाही का अंत, संसदीय लोकतंत्र की स्थापना, नया संविधान, माओवादियों के हिंसक दस्ते पीएलए की सेना में भर्ती और हिंदू राष्ट्र रहे नेपाल को एक सेक्युलर देश बनाने जैसी शर्तें शामिल थीं।। चीन का समर्थन प्राप्त करने के लिए नेपाल के माओवादी भारत विरोध का एजेंडा चलाते थे। उनके साहित्य में भारत को एक अजगर सांप के रूप में दर्शाया गया था, जो सिक्किम और नेपाल को हड़पने की कोशिश कर रहा था। यह दुष्प्रचार इसलिए प्रभावी था, क्योंकि नेपाल के लोग भारत की तुलना में अपने देश को गरीब और पिछड़ा मानते थे। माओवादी चीन के विकास की प्रशंसा करते हुए नेपाल को चीन के करीब ले गए।

इसी क्रम में नेपाल के माओवादी नेता सत्या और भारत के माओवादी नेता आजाद ने 8 अगस्त 2006 को एक बयान जारी किया, जिससे यह स्पष्ट हुआ कि दोनों का आपसी गठबंधन है। यानी दोनों चीनी विस्तारवाद के एजेंट हैं। पाकिस्तान की गुप्तचर संस्था आइएसआइ और नेपाल तथा भारत के माओवादियों की बैठक संबंधी समाचार जनवरी 2000 में प्रकाशित हुआ था, जिसमें कहा गया था कि दोनों मिलकर एक 'रिवोल्यूशनरी जोन' बनाने की योजना पर काम कर रहे हैं। नेपाल में मिली सफलता के बाद, 27 जुलाई 2009 को भारत के माओवादियों ने यह घोषित किया कि वे भारत की सत्ता छीनने के लिए अपना ढांचा खड़ा कर रहे हैं।

माओवाद और भ्रष्ट राजनीति पर जनता का प्रहार। फाइल

माओवादियों द्वारा देश के अलगाववादियों का समर्थन और हिंदू संगठनों का विरोध सार्वजनिक था, इसलिए नेपाल को हिंदू राष्ट्र के बजाय सेक्युलर देश बनाया गया। अपनी विचारधारा के प्रचार-प्रसार के लिए उन्होंने देश के उच्च शिक्षण संस्थानों, विशेषकर दिल्ली के जे.एन.यू. में अपनी नर्सरी खोली थी। भारत के माओवादी लेवी वसूली से प्राप्त संपत्ति के मालिक बन गए। नेपाल में एक ऐसा दौर भी आया जब माओवादी होना गर्व का विषय बन गया था। पुष्प कमल दहाल उर्फ प्रचंड, बाबूराम भट्टराई, केपी शर्मा ओली जैसे माओवादियों की सभाओं में जन सैलाब उमड़ता था। हालांकि, भारत के बाद नेपाल में इनकी सच्चाई सामने आने पर नेपाली जनता उनके प्रति आक्रोश से भर गई और इन्हें भागने पर मजबूर होना पड़ा। माओवादियों के प्रति घृणा का एक उबाल भी सभी ने देखा।

कुछ ही समय पहले नेपाल के संसदीय चुनाव का परिणाम सामने आए। नेपाल में कुल सात प्रदेश, 77 जिले और 165 सीटों पर हुए चुनाव में माओवादी प्रचंड की नेपाली कम्युनिस्ट पार्टी केवल 4 प्रदेश के 7 जिलों की 7 सीटों पर जीत पाई। केपी शर्मा ओली की एकीकृत मार्क्सवादी लेनिनवादी कम्युनिस्ट पार्टी 5 प्रदेश के 9 जिलों की 9 सीटों पर ही चुनाव जीत सकी। प्रचंड किसी तरह चुनाव जीत गए, लेकिन ओली की पराजय चर्चा का विषय बन गई है। नेपाल के चुनाव में जीतने वाले 11 सदस्यों की आयु 30 वर्ष से कम है। 31 से 35 वर्ष के 15 सदस्य और 36 से 40 वर्ष के 31 सदस्य चुनाव जीतकर आए हैं। कुल 108 निर्वाचित सदस्यों की आयु 50 वर्ष से कम है, यानी यह एक युवा संसद होगी। युवा जोश का रचनात्मक प्रयास नेपाल के भाग्य को बदलने की उम्मीद जगाता है। नए प्रधानमंत्री बालेंद्र शाह भी युवा आकांक्षाओं के प्रतीक बनकर उभरे हैं।

नेपाल भारत का न केवल एक पड़ोसी देश है, बल्कि दोनों के बीच सांस्कृतिक संबंध भी हैं। नेपाल में अनेक विदेशी ताकतें सक्रिय रही हैं, जो दोनों देशों के रिश्ते को खराब करना चाहती हैं। कभी-कभी 'वृहद नेपाल' का नारा उछालकर भारत विरोध को भड़काने का काम किया जाता रहा है। माओवादी घायल सांप हैं। जिस तरह भारत में माओवाद के खिलाफ प्रभावी अभियान चलाया गया, उसी तरह नेपाल में भी इनका फन कुचलना होगा। यह भी स्मरण रहे कि नेपाल हिंदू राष्ट्र है और भविष्य में भी रहना चाहिए। इसके लिए नेपाल को बांग्लादेशी मुस्लिम घुसपैठ पर रोक लगाने के साथ ही तेजी से हो रहे ईसाईकरण को भी रोकना होगा। भारत नेपाल के आर्थिक विकास में सहयोग करे ताकि विदेशी ताकतें भारत विरोध को हवा न दे सकें। राष्ट्रीय और सांस्कृतिक दृष्टि से दोनों देशों का मधुर संबंध आज के समय की मांग है।

(लेखक बिहार विधान परिषद के पूर्व सदस्य हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

स्थितप्रज्ञता

स्थितप्रज्ञता से आशय है बुद्धि का स्थिर होना। वस्तुतः किसी भी प्रकार की परिस्थिति से चित्त एवं बुद्धि का अप्रभावित रहना ही स्थितप्रज्ञता है। यह एक ऐसी विशेष अवस्था है, जहां व्यक्ति बाहरी परिस्थितियों, अस्थिरताओं एवं असंतुलन से विचलित हुए बिना शांत बना रहता है। द्वंद्वात्मक दशाओं में समभाव रख पाना एक नितांत दुष्कर कार्य है, किंतु जो इसको सिद्ध कर लेता है, वही सच्चे अर्थों में स्थितप्रज्ञ होता है। प्रतिस्पर्धात्मक परिवेश एवं तुलनात्मक प्रवृत्ति सदैव व्यक्ति को निराशा एवं अवसाद की ओर धकेलती है। ऐसे में स्थितप्रज्ञता एक मानसिक कवच की तरह कार्य करती है, जो व्यक्ति को भीतर से मजबूत बनाते हुए उसे परिस्थितियों का दास बनने से बचाती है।

स्थितप्रज्ञता का अर्थ यह नहीं है कि व्यक्ति संवेदनहीन अथवा जीवन के प्रति उदासीन बन जाए। इसका अर्थ है-भावनाओं को समझते हुए एवं उनके मध्य रहते हुए भी उनकी अधीनता को स्वीकार न करना। स्थितप्रज्ञ व्यक्ति प्रसन्नता में अति उत्साहित नहीं होता और दुख में टूटता नहीं है। वह हर स्थिति को जीवन के एक अध्याय एवं शिक्षा के रूप में ग्रहण करता है। स्थितप्रज्ञता भावनात्मक प्रतिक्रिया के स्थान पर आत्ममंथन एवं आत्मसुधार को प्रेरित करती है। व्यक्तित्व में स्थितप्रज्ञता के विकास हेतु आत्मानुशासन एवं आत्मचिंतन नितांत आवश्यक है। ध्यान, योग, सकारात्मक दृष्टिकोण, आत्मसंतोष और नियमित आत्मविश्लेषण इसके प्रमुख अवयव हैं। विचारों एवं भावनाओं का नियंत्रित होना तथा शरीर एवं मन का पारस्परिक संतुलन ही स्थितप्रज्ञता के विकास का आधार है। असीमित एवं अनियंत्रित इच्छाएं असंतोष और अशांति की जननी हैं। स्थितप्रज्ञ व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को समझते हुए व्यर्थ की लालसाओं से सदैव दूर रहता है। स्थितप्रज्ञता शांति एवं संतुलन का स्रोत तथा जीवन की चुनौतियों का समाधान है।

प्रेरणा अवस्थी

श्रमिकों को भी मिले 'जलवायु अवकाश'

सुधीर कुमार

> स्पेन की 'जलवायु अवकाश' संकल्पना बढ़ती जलवायविक चुनौतियों के दौर में श्रमिकों की सुरक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक कदम है

स्पेन श्रमिकों के लिए 'जलवायु अवकाश' का प्रविधान लागू करने वाला दुनिया का पहला देश बन गया है। इसके तहत चरम मौसमी दशाओं में श्रमिक अधिकतम चार दिनों की सवैतनिक छुट्टी ले सकेंगे। स्पेन की यह पहल आपात जलवायविक स्थितियों में श्रमिकों के जीवन और अधिकार की रक्षा करने के साथ ही उन्हें कार्यस्थल पर किसी भी हाल में पहुंचने की बाध्यता से भी राहत पहुंचाती है।

स्पेन की 'जलवायु अवकाश' संकल्पना बढ़ती जलवायविक चुनौतियों के दौर में श्रमिकों की सुरक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक कदम है। स्पेन ने यह कदम तब उठाया है, जब 2024 में वहां आए तूफान और बाढ़ ने 225 लोगों की जान ले ली थी। कठोर मौसमी दशाओं और प्रशासन द्वारा 'रेड अलर्ट' जारी किए जाने के बाद भी श्रमिकों को काम पर बुलाने पर कंपनियों और नियोक्ताओं की न सिर्फ आलोचना हुई, बल्कि सरकार से श्रमिकों के लिए जलवायु अनुकूल नीतियों को लागू करने की मांग भी की गई। स्पेन के श्रम मंत्रालय ने इन मांगों का स्वागत करते हुए श्रम-कानून में संशोधन करके आपदा, कठोर मौसमी दशाओं और जलवायु आपातकाल जैसी स्थितियों में श्रमिकों को अधिकतम चार दिनों की छुट्टी लेने का अधिकार प्रदान किया। इस छुट्टी के लिए उन्हें पूरे वेतन दिए जाने का प्रविधान भी है।

यह पहल न सिर्फ श्रमिकों की सुरक्षा को प्राथमिकता देती है, बल्कि मानवाधिकार और सामाजिक न्याय जैसी मानवीय मूल्यों से गहरा सरोकार भी रखती है। जलवायु परिवर्तन समाज के सभी वर्गों के लिए एक संवेदनशील मुद्दा बन चुका है। दुर्भाग्यवश, हाशियाकृत आबादी पर इसके दुष्प्रभावों पर अक्सर ध्यान नहीं दिया जाता है। जलवायु परिवर्तन के कारण चरम मौसमी घटनाओं में वृद्धि ने श्रमिकों के रोजगार, कार्य क्षमता, कार्यावधि, उत्पादकता, स्वास्थ्य और जीवन को प्रभावित किया है। चरम मौसमी घटनाओं के कारण जब आम लोग घर से बाहर निकलने की हिम्मत भी नहीं जुटा पाते हैं, वैसी स्थिति में भी श्रमिक रोजगार की खोज में दर-दर भटक रहे होते हैं। निम्न पर्यावरणीय दशाओं में कार्य करने को विवश श्रमिक स्वास्थ्य के साथ-साथ जीवन की हानि के रूप में बड़ी कीमत चुकाता है।

बहरहाल, 'जलवायु अवकाश' की इस अनोखी पहल ने वैश्विक समुदाय का ध्यान जलवायु परिवर्तन से श्रमिकों के जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों की ओर आकृष्ट हुआ है। श्रमिक किसी भी देश की आर्थिक व्यवस्था की रीढ़ होते हैं। जलवायु परिवर्तन ने इस तबके को गहरे तौर पर प्रभावित किया है। ऐसे में समाज व सरकार को उनके जीवन एवं अधिकार के बारे में सोचना ही होगा।

(लेखक बीएचयू में शोधार्थी हैं)

मेलबाक्स

सुनिश्चित हो माओवाद से पूर्ण मुक्ति

उमेश चतुर्वेदी का आलेख 'लाल आतंक पर पूर्ण विराम' भारत से माओवादी उग्रवाद और 'लाल आतंक' के खात्मे की दिशा में प्राप्त हुई सफलता को रेखांकित करता है। निःसंदेह यह केवल एक प्रशासनिक उपलब्धि नहीं, बल्कि केंद्र सरकार की अडिग राजनीतिक इच्छाशक्ति और सुरक्षा बलों के सर्वोच्च बलिदान का परिणाम है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और गृहमंत्री अमित शाह के नेतृत्व में सरकार ने जिस शून्य सहिष्णुता की नीति को अपनाया, उसने दशकों से चली आ रही इस समस्या की जड़ें हिला दी हैं। गृहमंत्री शाह द्वारा मार्च 2026 तक देश को माओवाद से मुक्त करने का जो लक्ष्य निर्धारित किया गया था, वह आज एक निर्णायक मोड़ तक पहुंचा है। इस संकल्प को सिद्ध करने में 'समाधान' जैसी एकीकृत रणनीतियों और 'आपरेशन डबल बुल' व 'चक्रव्यूह' जैसे खुफिया अभियानों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सुरक्षा बलों के जवानों ने दुर्गम जंगलों और कठिन भौगोलिक परिस्थितियों में अपने प्राणों की आहुति देकर लोकतंत्र की रक्षा की है। सुरक्षा बलों ने न केवल माओवादी नेटवर्क की कमर तोड़ी, बल्कि उसके शीर्ष नेतृत्व को भी निष्प्रभावी कर यह संदेश दिया कि हिंसा के बल पर राज्य को चुनौती देना अब संभव नहीं है। भविष्य में माओवाद पुनः न पनपे, इसके लिए बहुआयामी विकास और निरंतर सतर्कता की आवश्यकता है। सरकार को प्रभावित क्षेत्रों में सड़क कनेक्टिविटी, दूरसंचार (मोबाइल टावर) और बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार और अधिक तीव्र गति से करना चाहिए ताकि 'विकासात्मक निर्वात' को भरा जा सके। शिक्षा और रोजगार के स्थानीय अवसर पैदा करना अनिवार्य है, ताकि भटके हुए युवाओं को मुख्यधारा में जोड़ा जा सके। आत्मसमर्पण करने वाले माओवादियों के लिए पुनर्वास की ऐसी प्रभावी योजनाएं होनी चाहिए जो उन्हें सम्मानजनक जीवन का विकल्प दें। अंततः, सुरक्षा बलों को आधुनिक तकनीक और स्थानीय खुफिया तंत्र से लैस रखना होगा ताकि विचारधारा की आड़ में छिपी हिंसा की कोई भी सुगबुगाहट फिर से सिर न उठा सके। सामाजिक न्याय और सुदृढ़ सुरक्षा का यह संतुलन ही माओवाद से पूर्ण मुक्ति को सुनिश्चित करेगा।

सुशील कुमार बतरा, मेरठ

सपना या सच्चाई? चीन का सच

वर्तमान में चीन पूरी दुनिया में, खासकर जेन-जी युवाओं के बीच, ट्रेंड कर रहा है। "चाइना मैक्सिंग" के कारण यह ट्रेंड अमेरिका और अन्य देशों में भी काफी चर्चा में है। इस ट्रेंड में सुबह गर्म पानी पीना, किचन में ताई-ची करना और चापस्टिक का इस्तेमाल सीखना जैसी चीजें शामिल हैं। यह एक नया लाइफस्टाइल ट्रेंड है, जिसमें चीनी जीवनशैली को रोमांटिक रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। हालांकि "चाइना मैक्सिंग" पूरी सच्चाई नहीं दिखाता। चीन में सरकार की आलोचना करना जोखिम भरा हो सकता है। साथ ही, चीन की अर्थव्यवस्था कई चुनौतियों का सामना कर रही है, जिसमें युवाओं में 15 प्रतिशत से अधिक बेरोजगारी और काम के दबाव से 'बर्नआउट' शामिल है। ऐसे में सवाल उठता है। क्या इन समस्याओं से ध्यान हटाने के लिए इस ट्रेंड को जानबूझकर बढ़ावा दिया जा रहा है?

दत्तप्रसाद शिरोडकर, मुंबई

पुस्तकालयों की खराब स्थिति

हाल में पूर्वोत्तर रेलवे ने प्रमुख ट्रेनों में पुस्तकालय स्थापित करने की योजना बनाई है। यह सराहनीय पहल है, वहीं दूसरी ओर यदि उत्तर प्रदेश में पुस्तकालयों की स्थिति का अवलोकन किया जाए, तो स्पष्ट होता है कि विभिन्न सरकारों के दौरान पुस्तकालयों की निरंतर उपेक्षा हुई है। उत्तर प्रदेश में जूनियर हाईस्कूल और इंटरमीडिएट स्तर के विद्यालयों में प्रायः पुस्तकालयों का अभाव है। न ही विद्यालयों में विद्यार्थियों के लिए नियमित रूप से पुस्तकालय कक्षाएं संचालित की जाती हैं। यहां तक कि आज तक लाइब्रेरी शिक्षक का पद भी सृजित नहीं किया गया है। ऐसी परिस्थितियों में विद्यार्थियों में पठन-पाठन की रुचि कैसे विकसित की जाए, यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है।

ankitdhiman650@gmail.com

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें:
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा-201309 से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

1.21 लाख मामले दर्ज किए गए हैं पिछले पांच साल में बच्चों के लापता होने के देश में, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के मुताबिक। इनमें 74 प्रतिशत बच्चियां हैं।

लालजी जायसवाल
शोधार्थी

आजकल

अदालतों में एआइ के उपयोग की सीमा

जैसे-जैसे अदालतें एआइ को न्यायिक प्रक्रियाओं में अपनाने का प्रयास कर रही हैं, वैसे-वैसे सतर्कता और सजगता की आवश्यकता भी बढ़ती जा रही है। न्याय में एआइ का उपयोग किस सीमा तक किया जाना चाहिए, यह आज के समय का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और विचारणीय प्रश्न है। अस्तित्वहीन या गलत फैसलों का हवाला न केवल न्यायिक प्रक्रिया को गुमराह करता है, बल्कि न्याय की बुनियादी नींव-जैसे सत्य, तर्क और विश्वसनीयता को भी कमजोर करता है

अदालतों में लंबित मामलों की बढ़ती संख्या। फाइल

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआइ) के तेजी से बढ़ते प्रभाव के बीच हाल में सुप्रीम कोर्ट की सख्त चेतावनी ने न्याय व्यवस्था के सामने उभर रहे एक नए और गंभीर खतरे को सामने लाया है। अदालत ने कहा है कि एआइ से उत्पन्न अस्तित्वहीन या गलत फैसलों का हवाला देना न केवल न्यायिक प्रक्रिया को गुमराह करता है, बल्कि न्याय की बुनियादी नींव-जैसे सत्य, तर्क और विश्वसनीयता को भी कमजोर करता है। डिजिटल युग में जहां सूचना तक पहुंच पहले से कहीं अधिक आसान हो गई है, वहीं गलत या मनगढ़ंत जानकारी का प्रसार भी उतनी ही तेजी से बढ़ा है। आज चैटजीपीटी जैसे एआइ टूल्स आम लोगों से लेकर पेशेवरों तक के कार्य का हिस्सा बन चुके हैं, लेकिन बिना सत्यापन के इन पर अत्यधिक निर्भरता खतरनाक परिणाम ला सकती है। विशेषकर न्यायपालिका जैसे संवेदनशील क्षेत्र में जहां हर तथ्य और तर्क का सटीक होना अनिवार्य है। एआइ द्वारा गढ़े गए नकली निर्णयों और संदर्भों को अदालत में प्रस्तुत किए जाने से न केवल न्यायिक समय की बर्बादी हुई, बल्कि न्याय प्रक्रिया की विश्वसनीयता पर भी प्रश्नचिह्न लगा। यह स्थिति केवल भारत तक सीमित नहीं है, बल्कि वैश्विक स्तर पर न्यायालयों के सामने एक नई चुनौती के रूप में उभर रही है। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि तकनीक के उपयोग और उसकी सीमाओं के बीच स्पष्ट संतुलन स्थापित किया जाए। एआइ एक सहायक तकनीकी हो सकती है, लेकिन इसे अंतिम सत्य मान लेना गंभीर भूल साबित हो सकती है। इसलिए समय की मांग है कि तकनीकी प्रगति के साथ-साथ जिम्मेदारी और सतर्कता को भी समान प्राथमिकता दी जाए, ताकि न्याय की गरिमा और निष्पक्षता अक्षुण्ण बनी रहे। एआइ न्यायिक प्रणाली में सहायक हो सकता है, जैसे डाटा का प्रबंधन करना, पैटर्न पहचानना और देरी को कम करना, लेकिन निर्णय सुनाना और अंतिम फैसला हमेशा मानव न्यायाधीश के हाथ में ही होना चाहिए, ताकि पारदर्शिता और जवाबदेही बनी रहे।

अदालतों में एआइ जनित तर्कों के बढ़ते उपयोग का न्यायिक प्रक्रिया पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है। यदि एआइ द्वारा प्रस्तुत की गई जानकारी अपूर्ण, त्रुटिपूर्ण या तथाकथित फर्जी मिसालों पर आधारित हो, तो इससे न्यायाधीशों के निर्णय प्रभावित होने का खतरा बढ़ जाता है। न्याय एक संवेदनशील प्रक्रिया है, जहां प्रत्येक तथ्य और प्रमाण की शुद्धता अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। ऐसे में एआइ की त्रुटियां गलत फैसलों को जन्म दे सकती हैं। इससे निर्दोष व्यक्ति दंडित हो सकता है या दोषी सजा से बच सकता है। न्यायपालिका की विश्वसनीयता और पारदर्शिता पर भी प्रश्नचिह्न लग सकता है, जिससे आम जनता का विश्वास कमजोर होगा। एआइ में काल्पनिक तथ्यों को प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति एक गंभीर चुनौती है, जो न्यायिक प्रक्रिया को भ्रमित कर सकती है। इसलिए यह आवश्यक है कि एआइ का उपयोग केवल सहायक साधन के रूप में ही किया जाए, न कि अंतिम निर्णय के आधार के रूप में। न्याय सुनिश्चित करने के लिए मानव विवेक, अनुभव और गहन परीक्षण को सर्वोपरि रखना ही इस चुनौती का सबसे प्रभावी समाधान है। एआइ का उपयोग न्याय प्रणाली में दक्षता बढ़ाने का एक शक्तिशाली साधन हो सकता है, किंतु इसके नैतिक और तकनीकी जोखिमों का समाधान करना आवश्यक है।

एआइ का गलत इस्तेमाल एक गंभीर चिंता का विषय है, लेकिन इसका यह अर्थ भी नहीं है कि न्यायिक व्यवस्था पूरी तरह से तकनीक से दूरी बना ले। उचित यही है कि एआइ का उपयोग समझदारी, नैतिक जिम्मेदारी और पेशेवर मानकों के अनुरूप किया जाए। इसके माध्यम से न्याय तक लोगों की पहुंच बढ़ सकती है और कार्यप्रणाली में पारदर्शिता भी आ सकती है। किंतु इससे असमानता बढ़ने का खतरा है या तथ्यों को तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत किया जा सकता है। हाल के समय में ऐसी घटनाएं सामने आई हैं, जब एआइ से तैयार सामग्री को बिना जांच-परख के अदालत में प्रस्तुत कर दिया गया। सर्वोच्च न्यायालय में भी ऐसे उदाहरण सामने आए हैं, जहां ऐसी कानूनी मिसालों और फैसलों का हवाला दिया गया, जो वास्तव में अस्तित्व में ही नहीं थे। जैसे-जैसे एआइ तकनीक का विस्तार होगा, वैसे-वैसे डाटा सुरक्षा, गोपनीयता, मानवाधिकार और नैतिकता से जुड़ी चिंताएं नई चुनौतियां प्रस्तुत करेंगी। इनसे निपटने के लिए तकनीकी कंपनियों को सावधानी बरतनी होगी। साथ ही विधायिका द्वारा उपयुक्त कानून और नियम बनाए जाने तथा न्यायपालिका द्वारा न्यायिक समीक्षा और संवैधानिक मानकों के माध्यम से विनियमन सुनिश्चित किए जाने की भी आवश्यकता होगी।

एआइ कानूनी उदाहरणों और मुकदमों का विश्लेषण करने के साथ-साथ ऐतिहासिक डाटा भी उपलब्ध करा सकती है, जो उचित निर्णय लेने तथा मुकदमेबाजी की रणनीति विकसित करने में सहायक होती है। एआइ साक्ष्य के संग्रहण, सत्यापन और विश्लेषण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है, विशेषकर बड़े डाटा सेट, फोरेंसिक साक्ष्य या डिजिटल धोखाधड़ी से जुड़े जटिल मामलों में। गुजरात स्थित राष्ट्रीय फोरेंसिक विज्ञान विश्वविद्यालय डिजिटल साक्ष्यों के विश्लेषण के लिए एआइ का एकीकरण कर रहा है, जिससे साइबर अपराध की जांच में तेजी आने की संभावना है। इसी प्रकार दिल्ली के तीस हजारी जिला न्यायालय ने स्पीच-टू-टेक्स्ट सुविधा से युक्त अपना पहला एआइ-सुसज्जित पायलट हाइब्रिड कोर्ट शुरू किया है। एआइ-संचालित प्लेटफार्म संचार और संवाद की ट्रैकिंग को स्वचालित कर मध्यस्थता एवं पंचनिर्णय (आर्बिट्रेशन) प्रक्रियाओं को भी सरल बना सकते हैं। वर्तमान में भारत के न्यायालयों में विशेष रूप से वकीलों द्वारा एआइ का सबसे अधिक उपयोग ड्राफ्टिंग के लिए किया जा रहा है। इसमें केस ब्रीफ, कांट्रैक्ट, दस्तावेज, आदेश, निर्णय (जजमेंट) और डिक्री आदि तैयार करना शामिल है। पहले यह कार्य मुख्यतः मैन्युअल किया जाता था, जिसमें ला क्लर्क और सचिवालय स्टाफ की सहायता ली जाती थी। समय की बचत और बेहतर समर्थन प्रदान करने की क्षमता के कारण एआइ भारतीय न्यायपालिका जैसी विशाल प्रणाली के लिए अत्यंत आकर्षक विकल्प बनकर उभर रही है। लंबित मामलों की समस्या जैसी चुनौतियों को एआइ टूल्स के उपयोग से काफी हद तक कम किया जा सकता है। दिसंबर 2025 तक भारत के जिला और उच्च न्यायालयों में लगभग 5.5 करोड़ मामले लंबित थे, जिसने न्यायिक प्रणाली में एआइ के उपयोग की आवश्यकता को और अधिक प्रबल बना दिया है। एआइ-संचालित उपकरण न्यायिक प्रक्रियाओं में तेजी लाकर इनका बोझ कम कर सकते हैं, जिससे न्यायाधीशों को मूल मामलों पर अधिक ध्यान केंद्रित करने की स्वतंत्रता मिलेगी।

जोखिम भरी है एआइ पर अतिशय निर्भरता

गत दिनों ब्रिटेन के एक कोर्ट में वकीलों ने एआइ द्वारा तैयार किए गए ऐसे कानूनी तर्क प्रस्तुत किए, जिनमें उन मामलों का उल्लेख था, जो वास्तव में अस्तित्व में ही नहीं थे। यह घटना एआइ पर बिना सत्यापन के निर्भर रहने के गंभीर जोखिम को उजागर करती है। ऐसे में सुप्रीम कोर्ट की चिंता स्वाभाविक है कि यदि देश में न्यायालयों में इस प्रकार की तकनीक पर निर्भरता बढ़ती है, तो भविष्य में न्यायिक तंत्र संदेह के घेरे में आ सकता है। यदि एआइ सिस्टम गलत तरीके से विकसित या लागू किए जाएं, तो वे व्यक्तियों या समूहों के साथ असंगत, असमान या पक्षपातपूर्ण व्यवहार कर सकते हैं। कई एआइ एल्गोरिदम ब्लैक बाक्स की तरह कार्य करते हैं। अर्थात एआइ टूल ने कोई परिणाम कैसे और किन मानकों के आधार पर दिया, इसे समझ पाना कठिन होता है। यह स्थिति न्यायिक प्रक्रिया की निष्पक्षता, जवाबदेही एवं विश्वसनीयता को प्रभावित कर सकती है।

आधुनिक तकनीकें एक ओर कानूनी कार्यप्रणाली को सरल बना सकती हैं और अपराध नियंत्रण में सहायक हो सकती हैं, वहीं दूसरी ओर इन्हीं तकनीकों का दुरुपयोग कर नए प्रकार के अपराध भी किए जा सकते हैं। यही वर्तमान समय की सबसे बड़ी विडंबना है। अंततः कानून का शासन इस बात पर निर्भर नहीं करता कि हम कितनी उन्नत तकनीक का उपयोग कर रहे हैं, बल्कि इस पर निर्भर करता है कि हमारी संस्थाएं कितनी मजबूत हैं और उनमें कार्यरत लोग कितनी ईमानदारी और जिम्मेदारी से कर्तव्यों का निर्वहन करते हैं। अदालतों के पास संवेदनशील जानकारी होती है। इसलिए बाहरी संस्थाओं या व्यक्तियों के साथ डाटा साझा करते समय सावधानी बरतना आवश्यक है, क्योंकि वे वही नैतिक और सार्वजनिक उत्तरदायित्व नहीं निभाते, जो न्यायपालिका निभाती है। पक्षपात, त्रुटिपूर्ण जानकारी, पारदर्शिता की कमी तथा आधारभूत डाटा-सेट की सीमाएं-ये सभी कारक न्यायपालिका की वैधता के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न कर सकते हैं।

वर्तमान में एआइ का उपयोग मुख्यतः व्यक्तिगत स्तर पर अधिक हो रहा है, न कि संस्थागत स्तर पर। ऐसे में यदि संबंधित व्यक्ति का स्थानांतरण हो जाए या वह सेवानिवृत्त हो जाए, तो प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न हो सकती है। इसके अतिरिक्त प्रशासनिक क्षमता की कमी तथा सुरक्षा, सटीकता और नैतिकता से जुड़े मुद्दे भी चुनौती बने रहते हैं। इन सभी कारणों से अदालतों के प्रति सार्वजनिक विश्वास प्रभावित हो सकता है और न्यायपालिका की वैधता पर प्रश्नचिह्न लग सकते हैं। यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि जैसे-जैसे भारत का लीगल-टेक बाजार विस्तार कर रहा है और अदालतें एआइ को न्यायिक प्रक्रियाओं में अपनाने का प्रयास कर रही हैं, वैसे-वैसे सतर्कता और सजगता की आवश्यकता भी बढ़ती जा रही है। न्याय में एआइ का उपयोग किस सीमा तक किया जाना चाहिए, यह आज के समय का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और विचारणीय प्रश्न है।

खरी-खरी

चर्चा में बने रहने की कला

राजेंद्र बज

राजनीति में चर्चा में बने रहने का एक महत्वपूर्ण साधन आक्रामकता है। यहां विरोधी को बदनाम करने का सिलसिला निरंतर जारी रहता है। चाहे रंग कच्चा हो या पक्का, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। कुछ राजनीतिक व्यक्तित्व दूसरों पर आरोप लगाकर ही अपनी पहचान बनाते हैं।

आमतौर पर, जो व्यक्ति अपने विरोधियों पर पक्का रंग चढ़ाता है, वह न केवल अपने विरोधियों को दबाता है, बल्कि अपने समर्थकों को भी चुप रहने पर मजबूर कर देता है। इस प्रकार का दबदबा इतना प्रभावी होता है कि कोई भी सवाल नहीं पूछता। अपने लोग, भले ही वे एक ही राजनीतिक विचारधारा के हों, कभी-कभी अपने हितों के लिए एक-दूसरे पर भी आरोप लगाने से नहीं चूकते। यदि आम आदमी इस खेल में शामिल हो जाए, तो उसे गंभीर परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। राजनीति में, जो जी में आए, वह कहने या करने की स्वतंत्रता होती है।

राजनीति का असली मजा यही है कि आप अपने विरोधियों के खिलाफ जितनी चाहें भड़ास निकाल सकते हैं। हालांकि कभी-कभी किसी का मानहानि का मुकदमा भी हो सकता है। चतुर सुजान कहते हैं कि मानहानि का आरोप उसी पर लगता है, जिसकी मानहानि हुई हो। यह एक नाजुक मामला है, इसलिए आमतौर पर कोई इसमें नहीं पड़ता। रंगने-पुताने के बाद राजनीतिक खिलाड़ी इस पर भी खुश हो जाते हैं कि रंगने वाला खेद प्रकट कर दे या माफी मांग ले। कुछ चतुर खिलाड़ी इस कारण से विरोधियों को रंगने से नहीं चूकते। जो लोग राजनीतिक रंग-गुलाल से डरते हैं, वे राजनीति से दूर रहते हैं।

राजनीति में चर्चा में बने रहना महत्वपूर्ण है, क्योंकि नाम होने पर वह बिकने लगता है। यही कारण है कि राजनीतिक खिलाड़ी आरोपों की परवाह नहीं करते। राजनीति में चर्चित होना आसान नहीं है, और बहुचर्चित होना पिछले जन्मों के पुण्य का फल होता है। कमजोर दिल वाले लोग इस खेल में नहीं टिक पाते। इसलिए राजनीति में सफल होने के लिए मोटी चमड़ी होना आवश्यक है।

X पोस्ट

क्रिकेट ही जीवन नहीं है। यह जीवन का एक हिस्सा ही हो सकता है। जीवन का वास्तविक लक्ष्य तो मोक्ष की प्राप्ति में स्वयं को समर्पित कर देना है।
लक्ष्मण शिवरामकृष्णन@LaxmanSivarama1

अभी तक यह बात गले नहीं उतर पा रही कि डोनाल्ड ट्रंप ने बिना किसी बात के ही वैश्विक अर्थव्यवस्था को अंधकार के दौर में धकेल दिया है। रियान ग्रिम@ryangrim

डोनाल्ड ट्रंप की विरासत इस रूप में भी याद रखी जाएगी कि उन्होंने अमेरिकी साम्राज्यवाद की संकल्पना को पूरी तरह ध्वस्त कर दिया है।
तवलीन सिंह@tavleen_singh

वर्तमान स्थितियों में भी भारत और चीन दोनों को रूस से तेल, गैस, उर्वरक और अन्य वस्तुओं की आपूर्ति बनी रहेगी। वहीं, नए दौर के शीत युद्ध में भारत पश्चिमी देशों और उनके विरोधियों के बीच एक भू-राजनीतिक सेतु के रूप में भी स्थापित होता जाएगा। चूंकि भारत दोनों खेमों से लाभ उठाएगा, इसलिए मैं उसकी तेज तरक्की पर दांव लगाना चाहूंगी।
वेलिना@vtchakarova

जागरण जनमत कल का परिणाम

क्या पेट्रोल पंपों पर केरोसिन की व्यवस्था करने से लोगों की मुश्किलें कम होंगी?

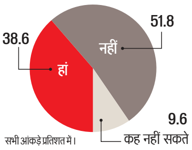

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल
क्या नालंदा के मंदिर में भगदड़ प्रशासनिक लापरवाही का परिणाम है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

मुस्लिम भाई तय करें वे हैं किसके साथ,
इक बाजू ईरान है दूजे सऊदी भ्रात।
दूजे सऊदी भ्रात है किससे अधिक सगापा,
तय कर लो फिर आप शौक से करना स्यापा।
भारत का क्या रोल कहीं भी चले लड़ाई,
उबल रहे बेकार यहां के मुस्लिम भाई!
- ओमप्रकाश तिवारी

रविंद्र बड़थ्वाल
राज्य ब्यूरो प्रमुख, देहरादून

उत्तराखंड डायरी

जीत या हार, हैटट्रिक पर लगा दांव

उत्तराखंड में अगला विधानसभा चुनाव यह तय करेगा कि जीत की हैटट्रिक लगेगी या हार की हैटट्रिक थमेगी। सतह पर चाहे जो भी नजर आए, लेकिन वर्ष 2027 के चुनावी रण में दांव पर दोनों ओर से ही दलों के केंद्रीय नेतृत्व का रणनीतिक कौशल और प्रदेश नेतृत्व की युद्धक क्षमता है। मुख्यमंत्री पुष्कर सिंह धामी स्वयं मैदान में मोर्चा संभाल चुके हैं। पांचवें एवं अंतिम वर्ष में मंत्रिमंडल में रिक्त पांच सीटें भरने में भी क्षेत्रीय और सामाजिक समीकरण को साधने की रणनीति से कांग्रेस के खेमे में हलचल देखी जा रही है। जवाब में कांग्रेस ने भी सप्ताहभर में ही दो पूर्व विधायकों समेत प्रदेश के जिन छह नेताओं को नई दिल्ली में पार्टी में शामिल कराया, उसमें अनुसूचित जाति समेत कोर वोट बैंक को जोड़े रखने की खासतौर पर मशक्कत की गई। यद्यपि इस कवायद में भी अंतर्कलह सतह पर आ ही गया। कांग्रेस अपनी इस कमजोरी का तोड़ अब तक नहीं मिल सका है।

जीत या हार की हैटट्रिक के केंद्र में आने से चुनावी महासमर सत्ताधारी भाजपा और मुख्य विपक्षी दल कांग्रेस के लिए अग्नि परीक्षा से कम नहीं रहने जा रहा है। सत्तारूढ़ दल भाजपा लगातार तीसरी जीत को केंद्र में रखकर चुनावी तैयारी काफी पहले से ही प्रारंभ कर चुकी है। वहीं लगभग 10 वर्ष की अवधि में एक अदद जीत के लिए तरस गई कांग्रेस सांगठनिक स्तर पर कील-कांटे दुरुस्त कर रही है। चुनावी तैयारी में भाजपा फिलहाल बढ़त लिए हुए दिखती है तो उसका बड़ा कारण कमजोरियों को पहचानने और उन्हें दूर करने की पार्टी की रणनीति ही है। विपक्षियों खासतौर पर कांग्रेस के हर दांव को बारीकी से भांपकर काट ढूंढ़ने की वर्षों की मेहनत से हासिल की गई कुव्वत अब उसकी ताकत बन चुकी है।

लगातार शासनकाल के 10वें वर्ष में प्रवेश कर चुकी भाजपा ने जो भी कमजोरियां सामने आईं, उन्हें दुरुस्त करने में ढिलाई नहीं होने दी, साथ ही उन पर तेजी से काम कर विपक्ष के लिए नई चुनौती पेश करने में देर नहीं लगाई। भर्ती घोटाले से लेकर विभागीय स्तर पर भ्रष्टाचार या अनियमितता के मामले हों या कानून व्यवस्था को लेकर उठती अंगुली, कार्रवाई को लेकर हिचक नहीं दिखाने के पीछे एंटी इनकंबेंसी को प्रो इनकंबेंसी में बदलने की इच्छाशक्ति रही है। राजनीतिक अस्थिरता को मुद्दा बनाने की कांग्रेस की कोशिशों को समय रहते निस्तेज करने के लिए भाजपा हाईकमान ने मुख्यमंत्री धामी के चार वर्ष का कार्यकाल पूरा होने से पहले ही सरकार की उपलब्धियों को लेकर चुनावी शंखनाद कर पार्टी के भीतर और बाहर होने वाली चर्चाओं पर विराम लगा दिया। यही नहीं मात्र 10 दिन पहले मंत्रिमंडल की रिक्त पांच सीट भरकर पार्टी ने कांग्रेस के हाथ से मुद्दा छीनने में अधिक देर नहीं लगाई।

आम जन से संवाद कायम करने के लिए मैदान में मुख्यमंत्री पुष्कर सिंह धामी। फाइल

चुनाव के दृष्टिगत उठाए गए इस कदम में कांग्रेस में प्रदेश स्तर पर सांगठनिक दृष्टि से किए गए बदलाव का ध्यान रखा गया। साथ ही राजनीतिक स्थायित्व को लेकर भी संदेश देने की कोशिश की गई है। चार वर्ष के कार्यकाल में धामी सरकार के नीतिगत निर्णयों से लेकर प्रशासनिक कार्यवाही एवं विकास कार्यों के केंद्र में प्रो इनकंबेंसी पर जोर रहा ही, केंद्र सरकार के डबल इंजन ने भी इसमें भरपूर मदद की है। मुख्यमंत्री जनसंपर्क से लेकर छोटी-छोटी जनसभाओं को लेकर आम जन से संवाद के माध्यम से माहौल बनाने से लेकर कार्यकर्ताओं का मनोबल बढ़ाने में ताकत झोंक रहे हैं।

दूसरी ओर, कांग्रेस एंटी इनकंबेंसी को भुनाने का हरसंभव प्रयास कर रही है। हालांकि, कांग्रेस के सामने सबसे बड़ी चुनौती यही है कि उसे दबाव में रखने की भाजपा की रणनीति की ठोस काट तैयार की जाए। धामी मंत्रिमंडल में नए मंत्रियों को शामिल करने के कुछ दिन बाद ही कांग्रेस ने भाजपा से पहले जुड़े रहे, लेकिन अब पार्टी छोड़ चुके नेताओं को सम्मिलित किया है। इस रणनीति के पीछे जिलेवार सीटों को साधने का गणित है। यह अलग बात है कि कांग्रेस में इन नेताओं के सम्मिलित होने के बाद मनमुटाव भी उजागर हुआ। नई दिल्ली में हुए इस कार्यक्रम से पूर्व मुख्यमंत्री हरीश रावत ने दूरी बनाए रखी। हरीश रावत इस कार्यक्रम में रामनगर क्षेत्र से एक और नेता को सम्मिलित कराने के इच्छुक थे, लेकिन पार्टी में अंतर्विरोध के कारण उनकी यह इच्छा अधूरी रह गई। अब वह नाराज बताए जा रहे हैं। अंतर्कलह का यह रोग कांग्रेस के लिए चिंता का विषय है।

मंथन

जया लक्ष्मी तिवारी
सामाजिक मामलों की जानकार

बाल तस्करी पर लगे लगाम

बच्चों की गुमशुदगी के पीछे गरीबी, खाद्य असुरक्षा, रोजगार की तलाश, विस्थापन, अंगों की तस्करी, यौन हिंसा, बाल श्रम और भिक्षावृत्ति जैसे संगठित अपराध मुख्य वजह हैं

अहमदाबाद पुलिस ने कुछ दिन पहले बच्चों की तस्करी के एक अंतर्राज्यी गिरोह को पकड़ा। इस गिरोह के सदस्य आइवीएफ सेंटरों से बच्चे चोरी कर दूसरे राज्यों में बेच देते थे। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के मुताबिक पिछले पांच साल में बच्चों के लापता होने के एक लाख 21 हजार 351 दर्ज किए गए हैं। इनमें 65 से 74 प्रतिशत बच्चियां हैं। बच्चों की गुमशुदगी के पीछे गरीबी, खाद्य असुरक्षा, रोजगार की तलाश, विस्थापन, अंगों की तस्करी, यौन हिंसा, बाल श्रम, भिक्षावृत्ति जैसे संगठित अपराध मुख्य वजह हैं। नाबालिग बच्चों को अक्सर दूसरे शहरों में ले जाकर बालश्रम में झोंक दिया जाता है। बच्चों के लापता होने की बड़ी वजहों में घरेलू झगड़े, हम उम्र साथियों के बहकावे में आना भी शामिल है। बाल तस्करी के कई मामलों में स्किन टोन और लिंग के आधार पर बच्चों की कीमत तय किया जाना पाया गया है।

बच्चों की गुमशुदगी के कई मामले या तो दर्ज ही नहीं हो पाते हैं या काफी देरी से इसकी सूचना पुलिस और संबंधित एजेंसियों को दी जाती है। सामाजिक रूप से अलग-थलग पड़ने की चिंता के साथ ही जागरूकता का अभाव इसकी बड़ी वजह हैं। भ्रष्टाचार, भय और संरक्षण के अभाव से बच्चे और उनके अभिभावक ऐसे मामलों को सक्षम एजेंसियों तक ले जाने से बचते हैं। बच्चों की गुमशुदगी और मानव तस्करी का मुद्दा मुख्य रूप से कानून व्यवस्था के अंतर्गत राज्यों के दायरे में आता है। बच्चों की तस्करी से जुड़े बहुत कम मामलों में अपराध सिद्ध हो पाते हैं और इसके दोषी दंडमुक्ति की भावना का फायदा उठाते हैं। कई बार यह भी देखने में आता है कि तस्करी कर विस्थापन का शिकार बनाए गए बच्चों का सुरक्षित पुनर्वास भी नहीं हो पाता है।

विश्व में बच्चों की कुल जनसंख्या का 19 प्रतिशत भारत के पास है। ऐसे में बच्चों के भविष्य को सुरक्षित बनाने के लिए मानव तस्करी जैसे अभिशाप से उन्हें बचाना होगा। केंद्रीय गृह मंत्रालय द्वारा समय-समय पर राज्यों/संघ शासित प्रदेशों में जिला स्तर पर मानव तस्करी रोधी इकाइयों (एएचटीयू) की स्थापना के लिए धन उपलब्ध करवाया जाता है। उन्हें मानव तस्करी के मामलों की जांच करने और इनमें शामिल अपराधियों सहित डाटाबेस तैयार करने का काम सौंपा गया है। देश में 807 एएचटीयू संदिग्ध मामलों की न सिर्फ जांच करती हैं, बल्कि अन्य एजेंसियों से समन्वय स्थापित कर बच्चों की सकुशल रिहाई सुनिश्चित करती हैं। राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग ने बच्चों की तस्करी पर रोक लगाने के लिए एंटी चाइल्ड ट्रैफिकिंग सेल गठित की गई है। इस सेल के गठन से अब तक लगभग एक हजार बच्चों को सुरक्षित रिहा कराया जा चुका है। केंद्र सरकार की पहल पर गृह मंत्रालय ने एंटी ह्यूमन ट्रैफिकिंग यूनिट स्थापित की है। रेलवे सुरक्षा बल मानव तस्करी रोकने के लिए जिस तरह स्थानीय प्रशासन के साथ मिलकर काम कर रहा है, उसके सार्थक परिणाम देखने को मिले हैं। पिछले चार साल में आरपीएफ ने अकेले 65 हजार से अधिक बच्चों को बचाया है। ऐसा समन्वय अन्य विभागों के बीच स्थापित किया जाना चाहिए।

बच्चों को बाल श्रम, यौन हिंसा एवं अन्य अपराधों से बचाने के लिए किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015, लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 और भारतीय न्याय संहिता (बीएनएस), 2023 की धारा 143 और 144 महत्वपूर्ण कानूनी ढांचा हैं। इन कानूनों के उचित क्रियान्वयन में मानव संसाधन की कमी के साथ कई बार तकनीकी दक्षता का अभाव चुनौती पैदा करता है। डिजिटल दुनिया में बच्चों की मौजूदगी भी बाल तस्करी को बढ़ावा दे रही है। डिजिटल और ह्यूमन इंटेलिजेंस को बढ़ाकर बच्चों को इस संगठित अपराध से बचाया जा सकता है। बच्चों को तस्करों से बचाने के लिए जोखिमग्रस्त समुदायों की पहचान कर वहां निगरानी बढ़ाए जाने की जरूरत है। जागरूकता, नीतिगत हस्तक्षेप बढ़ाने के साथ साइबर सुरक्षा भी अहम साबित होगा। मानव तस्करी रोकने के लिए केंद्र सरकार ने बांग्लादेश, यूएई, म्यांमार के साथ द्विपक्षीय समझौता किया है। ऐसे में सीमावर्ती जिलों में निगरानी तंत्र बढ़ाने से इसके पीछे काम करने वाले अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क को ध्वस्त करने में मदद मिलेगी। बाल तस्करी पर रोक लगाने में पुलिस और सक्षम एजेंसियों के साथ सबसे बड़ी निर्णायक भूमिका अभिभावकों की है। उनके बीच जागरूकता लाने में सामाजिक एवं शैक्षणिक संगठनों की क्षमता को पहचानना होगा। बच्चों को प्रारंभिक कक्षाओं में ही यदि बाल तस्करी से बचाव के उपाय बताए जाएं तो उन्हें शोषण के इस जाल से बचाया जा सकता है।

बाल तस्करी रोकने में पुलिस और सक्षम एजेंसियों के साथ अभिभावक भी निभाएं भूमिका। फाइल

हिन्दुस्तान
1936
सत्य • सार्थक • सदैव

मंदिर में भगदड़

बिहार में नालंदा जिले के शीतला माता मंदिर में मची भगदड़ और उनमें आठ महिलाओं की मौत की घटना जितनी मर्मांतक है, उतनी ही क्षुब्ध करने वाली भी। आखिर ऐसी कितनी घटनाएं और घटेंगी, तब जाकर तंत्र संवेदनशील बनेगा? हर बार, जब ऐसी कोई घटना घटती है, कुछ दिनों तक उसका असर दिखता है और फिर सब कुछ पुराने ढर्रे पर लौट आता है। जैसे कि ब्योरे हैं, हरेक मंगलवार को इस मंदिर में देवी-दर्शन के लिए भीड़ उमड़ती है और चैत्र माह का आखिरी मंगलवार होने के कारण इस बार भारी संख्या में श्रद्धालु उमड़ पड़े, जिनका प्रबंधन नहीं हो सका और यह हादसा हो गया। यह अच्छी बात है कि मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने प्रत्येक मृतक के आश्रितों के लिए छह लाख व केंद्र सरकार ने दो लाख रुपये के मुआवजे और घायलों के पूरे इलाज का भार उठाने का एलान किया है, मगर इन सबसे परे जाकर यह जांच करने की जरूरत है कि मंदिर में उमड़ने वाली भीड़ के प्रबंधन में क्या-क्या चूक हुईं, ताकि उनके आधार पर पुख्ता दिशा-निर्देश तय किए जाएं और राज्य के तमाम उपासना स्थलों के कर्ता-धर्ताओं व मेला प्रशासन के लिए उनके अनुपालन को बाध्यकारी बनाया जा सके।

भीड़ का प्रबंधन हमारे देश में लगातार एक चुनौती बना हुआ है। अभी बहुत ज्यादा दिन नहीं हुए हैं, जब तमिलनाडु के करूर में अभिनेता विजय की राजनीतिक रैली में मची भगदड़ ने 40 से अधिक लोगों की जान ले ली थी, जबकि 100 से अधिक घायल हुए थे। उसके कुछ ही महीने पहले आईपीएल क्रिकेट टीम रॉयल चैलेंजर्स बेंगलुरु के विजय जुलूस में भगदड़ से 11 लोग अपनी जान गंवा बैठे थे। कुंभ मेले के दौरान प्रयागराज और नई दिल्ली रेलवे स्टेशन के हादसे भी हम भूले नहीं हैं। ये तमाम घटनाएं इस बात की तस्दीक करती हैं कि ढांचागत विकास व तकनीकी तरक्की के बावजूद प्रशासन के स्तर पर आपराधिक लापरवाही की प्रवृत्ति दूर नहीं हो रही और इसकी सबसे बड़ी कीमत बेकसूर आम लोग चुका रहे हैं।

नालंदा में शीतला माता मंदिर हादसा भीड़ प्रबंधन को लेकर हमारी कमियों को फिर से उजागर कर गया। इसे लेकर एक सख्त दिशा-निर्देश लागू करने में देरी नहीं होनी चाहिए।

शीतला माता मंदिर की ये पीड़िताएं वहां अपनी और अपनों की सलामती-समृद्धि के लिए प्रार्थना करने पहुंची थीं। उन्हें क्या पता था कि वह खुद आखिरी दर्शन वाली देह बनकर लौटेंगी? यह घटना एक श्रद्धालु के रूप में भी हमारी कमियों को उजागर करती है। देव-दर्शन के आकांक्षी भक्तों को यह समझने की जरूरत है कि धर्म का आधार ही धीरज और करुणा है। एक-दूसरे को धक्का देकर, शारीरिक चोट पहुंचाकर कोई पुण्य कैसे कमाया जा सकता है? दुर्योग से, देश के ज्यादातर धर्मस्थल अराजकता के शिकार हैं और वे न सिर्फ प्रशासन, बल्कि नागरिकों, दर्शनार्थियों के स्तर पर भी अधिक संजीदगी की मांग करते हैं। यह जिला प्रशासन की जवाबदेही है कि वह अपने भौगोलिक दायरे के तमाम उपासना स्थलों, वहां होने वाले आयोजनों और उनमें जुटने वाली अनुमानित भीड़ का लेखा-जोखा तैयार करे। इससे न सिर्फ उनका बेहतर प्रबंधन मुमकिन होगा, बल्कि श्रद्धालुओं की शिकायतें भी कम की जा सकेंगी। हम एक बहुधार्मिक देश हैं, जहां पूरे साल विभिन्न धर्मों के आयोजन होते रहते हैं और जिनमें बड़ी संख्या में लोगों की भागीदारी होती है। इनको निरापद बनाने की जितनी जिम्मेदारी शासन-प्रशासन की है, उतनी ही नागरिक समाज की भी है। इन कार्यों में धर्मगुरुओं का भी पूरा सहयोग लेना चाहिए। धर्मस्थलों की कल्पना पीड़ा-शमन के केंद्र के तौर पर की गई है, उनको किसी श्रद्धालु और उसके परिजनों की दुखदायी अनुभूति का स्थल नहीं बनने देना चाहिए।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 01 अप्रैल, 1951

गंभीर स्थिति में दुनिया

अमरीका के एक उच्चाधिकारी ने अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को गत तीन महीनों की स्थिति से अधिक गम्भीर बताया है। हालात के ज्यादा बिगड़ने के कई कारण हो सकते हैं, किन्तु दो जटिल मामलों में अमरीका तथा ब्रिटेन ने जिस अदूरदर्शिता का परिचय दिया है, उसके दुष्परिणामों की जिम्मेदारी से वे बरी नहीं हो सकते।

काश्मीर के प्रश्न पर आंग्ल-अमरीकी प्रस्ताव के रूप में ब्रिटिश व अमरीकी प्रतिनिधियों तथा कोरिया के मामले में जनरल मैकार्थर ने चीन के सामने युद्ध विराम का धमकी भरा हुआ प्रस्ताव रखकर गुत्थी को और उलझा दिया है। संयुक्त राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद में ब्रिटेन तथा अमरीका द्वारा प्रस्तुत जो प्रस्ताव स्वीकार किया गया है, वह पाकिस्तान के प्रति पक्षपात की भावना प्रकट करता है। तथ्यों की ओर से मुंह मोड़कर पाकिस्तान के पिछले आक्रमणकारी कुकृत्यों को क्षमा ही नहीं किया गया है बल्कि उसके तुष्टीकरण की ओर एक और पग उठाया गया है। भारत पंच-निर्णय का सिद्धान्ततः विरोधी नहीं, किन्तु वर्तमान स्थिति में आंग्ल-अमरीकी प्रस्ताव की स्वीकृति का अर्थ संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्वीकृत पिछले प्रस्तावों का खंडन है। यह अत्यन्त खेद की बात है कि सुरक्षा परिषद ने श्री डिक्सन के सुझावों पर पानी फेर दिया। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा नियुक्त इस प्रतिनिधि ने काश्मीर की पेचीदा स्थिति पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने और पाकिस्तान के दुराग्रह को ध्यान में रखने के बाद ही यह परामर्श दिया था कि दोनों पक्षों को पारस्परिक बातचीत द्वारा यह समस्या हल करने दी जाये। यदि सुरक्षा परिषद उनकी नेक सलाह मान लेती, तो पाकिस्तान जोर-जबर्दस्ती का अपना रवैया बदलने के लिए मजबूर होता। श्री राव का यह कथन बिलकुल ठीक है कि प्रस्ताव की स्वीकृति से 'स्थिति और विषम बन गई है।' भारत का इस मामले में आगामी कदम क्या होगा, यह अभी पता नहीं, किन्तु पिछले सप्ताह संसद में तथा आगरा की एक सार्वजनिक सभा में नेहरूजी ने जो भाषण किये उनसे स्पष्ट संकेत मिलता है कि भारत सरकार काश्मीर के मामले को न्याय तथा आत्मसम्मान का मामला समझती है और वह किसी प्रकार की अनुचित धमकी के आगे सिर न झुकाएगी। संसद में प्रधानमंत्री ने स्पष्ट शब्दों में कहा: 'पाकिस्तान अथवा उससे सहानुभूति रखनेवालों को सन्तुष्ट करने के लिए हम काश्मीर में एक रिक्तता के निर्माण के लिए राजी नहीं हो सकते।'

बालेन शाह की शैली पर कुछ सवाल

नेपाल की नई सरकार के पास पांच साल का जनादेश है, उससे ज्यादा जल्दबाजी की अपेक्षा नहीं है, खासतौर से तब, जब बात विधि-सम्मत काम करने की हो।

यहां स्कैन करें

एस डी मुनि | पूर्व राजनयिक

नेपाल के 40वें प्रधानमंत्री के रूप में युवा बालेंद्र शाह की ताजपोशी से लोगों में उत्साह की जो लहर पैदा हुई है, वह उनके कुछ हालिया फैसलों से दम तोड़ सकती है। सत्ता संभालते ही उन्होंने 15 मंत्रियों की अपनी कैबिनेट बनाई और 100 बिंदुओं वाला सुधार का एक एजेंडा जारी किया। बेशक इनमें कमजोर पड़ती आर्थिकी में नई जान फूंकने से लेकर विश्वविद्यालयों और सरकारी तंत्र में बढ़ते राजनीतिक हस्तक्षेप को कम करने के उपाय शामिल हैं, लेकिन बदलाव की हड़बड़ी उनके विरोधियों को मौका दे सकती है। यहां तक कि उनके कुछ 'अपने' भी इससे नाराज हो गए हैं।

बालेन शाह की मंशा पर सवाल नहीं है। वह एक करिश्माई नेता हैं, जिन्होंने पिछले साल के एक बड़े जनांदोलन का नेतृत्व किया है। वह नेपाल के लोगों की अपेक्षाओं को समझ भी रहे हैं, मगर पांच साल का जनादेश होने के कारण उनकी सरकार से किसी जल्दबाजी की उम्मीद नहीं है, खासकर तब, जब बात विधि-सम्मत काम करने की हो। ऐसा जान पड़ रहा है, बालेन सब कुछ जल्द पा लेना चाहते हैं। कार्की आयोग की सिफारिशों के आधार पर उन्होंने पूर्व प्रधानमंत्री केपी शर्मा 'ओली' और पूर्व गृह मंत्री रमेश लेखक को गिरफ्तार करा लिया, लेकिन सवाल उठने लगे हैं कि ऐसा करने से पूर्व क्या उनको अदालत से मंजूरी नहीं लेनी चाहिए थी? इसी तरह, नए गृह मंत्री सूडान गुरुंग पर पूर्वाग्रह के तहत काम करने के आरोप लग रहे हैं।

मुखर सिर्फ उनके विरोधी नहीं हैं। हर्क संपांग जैसे 'जेन जी' के नेता भी उनके आलोचकों में शुमार हैं। संपांग के मुताबिक, बालेन के काम करने का तरीका साम्राज्यवादी व तानाशाही भरा है। वह लोगों पर हुक्म चलाना चाहते हैं। यहां तक कि कैबिनेट के फैसले से इतर उन्होंने हर मंत्री को अलग से व्यक्तिगत निर्देश दिए हैं और परिणाम न दे पाने पर उनकी कुर्सी छीन लेने की चेतावनी भी दी गई है। तमाम सरकारी कर्मचारियों के लिए भी इसी तरह के 'दंड' के प्रावधान किए गए हैं।

बेशक, सभी कर्मचारी ईमानदार नहीं होंगे, पर उनके पास प्रशासन का लंबा अनुभव है, जिनका फायदा बालेन सरकार को उठाना चाहिए।

इसी तरह, राजनीतिक संगठनों को भी शिक्षण संस्थानों से बाहर करने का फैसला जारी किया गया है, जबकि युवा वोट बालेन की जीत के मुख्य आधार रहे हैं। हालांकि, यह प्रतिबंध सिर्फ छात्रों पर नहीं है, प्रशासनिक कर्मचारियों और मजदूर संघों को भी इसी तरह के निर्देश दिए गए हैं। इसके कारण दबी जुबान यह चर्चा होने लगी है कि बालेन उसी आधार को काटने लगे हैं, जिन पर उनकी जीत की इमारत खड़ी है।

जाहिर है, लंबे समय तक प्रभावी बने रहने के लिए उनको सावधानी से कदम बढ़ाना होगा। मुश्किल यह है कि उन्होंने सभी मोर्चे एक साथ खोल दिए हैं, जबकि जरूरत एक-एक कर सीढ़ी चढ़ने की थी। अगर वह अब भी नहीं संभले, तो पुरानी राजनीतिक पार्टियां गोलबंद हो सकती हैं और जिस राजनीतिक कुव्यवस्था के खिलाफ नेपाल ने जेन जी आंदोलन देखा है, ठीक उसी तरह का एक आंदोलन मौजूदा निजाम के खिलाफ आने वाले समय में खड़ा हो सकता है। इससे नेपाल में फिर से अस्थिरता पैदा हो सकती है।

सवालों में जेन जी आंदोलन नहीं, बल्कि बालेन शाह की कार्यशैली है। सितंबर 2025 का विरोध-प्रदर्शन भ्रष्टाचार के खिलाफ शुरू किया गया था। उसमें न तो सरकार बदलने की बात थी, न संविधान बदलने की और न ही व्यवस्था को बदलने की। वह आंदोलन हिंसक भी पुलिसिया कार्रवाई के खिलाफ हुआ था। यही कारण है कि उससे उपजे कई नेता नेपाल की नई सरकार के साथ अपने कदम नहीं मिला पा रहे हैं। एकाध ने तो मंत्री पद तक स्वीकार नहीं किया है।

यही नहीं, कई 'अयोग्य' लोगों को मंत्री पद देने के आरोप भी बालेन शाह पर लग रहे हैं। मसलन, शिशिर खनाल को विदेश मंत्री बनाया गया है, जबकि उनका काम शिक्षा पर है। यहां तक कि गृह मंत्री सूडान गुरुंग को 'एनजीओ मैन' कहा जा रहा है, जिनको अमेरिका समर्थित एनजीओ का साथ हासिल है। इतना ही नहीं, पांचवीं बार संसद में पहुंचे अनुभवी नेता अमरेश कुमार सिंह को उद्योग मंत्रालय देने की जिद ठान ली गई, जिसके कारण उन्होंने मंत्री पद अस्वीकार कर दिया। पद की जिम्मेदारी के हिसाब से योग्य नेताओं का चयन बालेन को करना चाहिए।

कबीर का एक दोहा है- *धीरे-धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय।* बालेन को इसी पर अमल करना चाहिए। सवाल उनकी नीयत पर नहीं, काम करने के तरीके पर है। यहां बांग्लादेश का उदाहरण उनके सामने है। बांग्लादेश भी कमोबेश वैसे ही हालात से उबरा है, जिनका अनुभव नेपाल ने किया है, लेकिन ढाका में तारिक रहमान ने आक्रामक नीति अपनाने के बजाय, सबको साथ लेकर चलने का प्रयास किया। उन्होंने न सिर्फ उन अल्पसंख्यक समुदायों का भरोसा जीतने की कोशिश की, जिनका बांग्लादेश की हुकूमत पर से ऐतबार जा रहा था, बल्कि राजनीतिक सहमति बनाने का भी प्रयास किया है। प्रतिद्वंद्वी अवामी लीग की पुरानी स्वस्थ परंपराओं को जारी रखा। इसका फायदा बांग्लादेश को मिला है और यह मुल्क फिर से स्थिरता की ओर बढ़ चला है।

जल्दबाजी में लिए गए फैसले कितने खतरनाक होते हैं, इसका एहसास अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के कदमों से भी होता है। पहले नए-नए टैरिफ के जरिये और अब ईरान पर हवाई हमला बोलकर उन्होंने पूरी दुनिया में उथल-पुथल मचा दी है। इसका नुकसान खुद अमेरिका को भी खूब हो रहा है।

नेपाल में भारतीय कूटनीति की भी परीक्षा हो सकती है। बालेन ने कई सांकेतिक कदम उठाए हैं। वह तमाम धार्मिक रीति-रिवाजों को पूरा कर रहे हैं। इन सबसे नेपाल को 'हिंदू राष्ट्र' बनाने का सपना शायद ही पूरा हो सकेगा, पर इससे वहां सांप्रदायिक विभेद बढ़ सकता है। श्रीलंका और म्यांमार की तरह यहां भी जातीय संघर्ष छिड़ सकता है। नए प्रधानमंत्री राजशाही के हिमायती जान पड़ते हैं, जबकि नेपाल नरेश के खिलाफ लोगों में नाराजगी रही है। बालेन दृढ़-निश्चयी नेता हैं, जिसके कारण भारत के साथ सीमा-विवाद पर वह राष्ट्रवादी रुख भी अपना सकते हैं। इन सबको देखते हुए हमें अपनी नेपाल-नीति को नया रूप देना होगा। इस काम में राजनयिकों से अपेक्षा अधिक होगी, इसलिए उन्हें मामले की संवेदनशीलता को देखते हुए अपने आंख-कान हमेशा खुले रखने होंगे।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

हम कैसे मिटा पाएंगे गोरे और सांवले का अंतर

यहां स्कैन करें

मनु जोसेफ | पत्रकार और उपन्यासकार

भारत के किशोर लेग-स्पिनर लक्ष्मण शिवरामकृष्णन को 1980 के दशक में बहुत पसंद किया जाता था। एक समय था जब उनकी गिनती देश के होनहार खिलाड़ियों में होती थी, लेकिन कुछ समय में ही वह सार्वजनिक जीवन से गायब हो गए और बाद में कमेंटेटर के तौर पर वापस आए। कुछ दिन पहले, उन्होंने यह कहते हुए कमेंट्री छोड़ दी कि सांवले रंग की वजह से उन्हें लगातार नीचा दिखाया जाता है। उनकी बातें सच लगीं। लक्ष्मण ने कहा कि ताकतवर लोग उन्हें फोटो सेशन के समय नहीं आने देते थे और टॉस के लिए बुलाने से हिचकते थे। उन्हें प्रकारांतर से एहसास कराया गया कि उनकी शक्ल-सूरत आकर्षक नहीं है। उन्होंने इस बारे में मीडिया के सामने खुलकर बात की और कहा कि उनकी जिंदगी हमेशा से ऐसी ही रही है। तब भी जब वह एक युवा क्रिकेट स्टार थे।

भारत में चमड़ी के रंग को लेकर लोग बहुत मोहित हैं। सच तो यह है कि हममें से ज्यादातर लोग सांवले रंग को नापसंद करते हैं। हमारे यहां पहले चमड़ी के रंग को गरीबी से जोड़ा जाता है और सांवले लोगों को निम्न वर्ग का माना जाता है, उनको कोई इज्जत नहीं दी जाती है। यहां तो जीवन के हर क्षेत्र में बहुत आकर्षक लोग ही भरे हुए हैं, चाहे वह दंत चिकित्सा हो या न्यूज एंकरिंग। क्रिकेटर शिवरामकृष्णन खुशकिस्मत थे कि उनकी प्रतिभा खेल के क्षेत्र में थी, कला के क्षेत्र में नहीं। कला के क्षेत्र में तो हालत और बुरी है। हालांकि, खेल में भी इस बात से बहुत फर्क पड़ता है कि आप किस वर्ग या रंग के हैं।

भारत में चमड़ी के रंग को लेकर लोग बहुत मोहित हैं। सच तो यह है कि हममें से ज्यादातर लोग सांवले रंग को भीतर से नापसंद करते हैं।

सच तो यह है कि भारत में सवर्ण जाति समुदाय में सांवला होना और भी बुरा है। वंचित तबके के लोगों को कम से कम एक सुकून रहता है कि वे अपने ही लोगों के बीच हैं। उनके आस-पास हर कोई उनकी जैसी ही बुरी स्थिति में है। यहां तो हालात यह है कि ऊंची जाति के लोग भी अपने ही लोगों से नफरत करते हैं। ऐसे व्यक्ति से जो अपनी जाति के बाकी लोगों जैसा नहीं दिखता।

लक्ष्मण जब 14 साल के थे, तो वह चेन्नई के चेपॉक स्टेडियम में इंडियन टीम के लिए नेट्स पर प्रैक्टिस करने गए थे, तब एक खिलाड़ी ने उन्हें सपोर्ट स्टाफ समझकर अपने जूते साफ करने को कहा। ऐसी घटनाएं अक्सर यूरोप में घूमने जाने वाले भारतीयों के साथ होती हैं। कम से कम तीन बार तो मुझे ही वहां ड्राइवर समझा गया, सिर्फ इसलिए कि मैं उनसे बहुत अलग दिखता हूं। साहित्य और मानवाधिकारों के मोर्चे पर काम करने वाली न्यूयॉर्क की संस्था 'पेन' ने मुझे 'अमेरिका में प्रकाशित अश्वेत लेखकों' के लिए दिया जाने वाला एक अवॉर्ड दिया, तब मैंने उन्हें लिखा कि पैसे देने से पहले आपको मेरा रंग पता होना चाहिए। मेरे प्रकाशक ने समारोह के दौरान मेरी इस बात को जोर देकर पढ़ा।

लक्ष्मण शिवरामकृष्णन इस रंगभेद को लेकर बहुत सदमे में रहते थे। एक बार अपना बर्थडे केक काटते समय वह फूट-फूटकर रो पड़े, क्योंकि वहां मौजूद किसी ने कह दिया कि चॉकलेट केक उनके रंग से मैच करता हुआ है। जिंदगी भर मजाक उड़ाए जाने की वजह से वह अपनी सूरत को लेकर बहुत संजीदा हो गए। लक्ष्मण का कहना है कि अगर उनकी चमड़ी गेहुंआ होती, तो उनके अपने समुदाय में उनकी ज्यादा इज्जत होती। उनकी सवर्ण जाति का जिक्र सिर्फ तभी होता था, जब आम तौर पर सवर्ण जातियों के लेखक टीम इंडिया में कथित ऊंची जातियों के दबदबे पर टिप्पणी करते थे। हालांकि, लक्ष्मण को लगता था कि वह तो वंचितों में ही शामिल हैं।

भारत में सांवले लोग दुनिया के दूसरे इलाकों के सांवले लोगों की तुलना में एक खास वजह से ज्यादा नुकसान उठाते रहते हैं। मुझे मुंबई में रहने वाले एक अफ्रीकी की हैरानी याद है। उस अफ्रीकी नागरिक ने बताया कि जब वह रेलवे प्लेटफॉर्म पर खड़े होते थे और ट्रेन आती थी, तो पहले डिब्बे से लेकर आखिरी डिब्बे तक, दरवाजों से लटके लोग उन्हें देखकर 'कालू' चिल्लाते थे। उन्हें हैरानी इस बात की थी कि चिल्लाने वाले ज्यादातर लोग खुद अश्वेत थे। हालांकि, वह लक्ष्मण जितने आहत नहीं हुए, क्योंकि उनके साथ बड़ा समुदाय था, जो उनके रंग को लेकर पूर्वाग्रही नहीं है, क्योंकि वे सभी एक ही रंग के होते हैं। भारत में एक ही नस्ल और जाति के लोग अलग-अलग रंगों के हो सकते हैं। फिर भी, यहां भेदभाव अपने क्रूरतम रूप में है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं।)

मनसा वाचा कर्मणा

एक ही चेतना का विस्तार

एक साधक ने मुझसे बेहद रोचक प्रश्न किया कि बाबा, हम प्रकृति, ईश्वर, पेड़-पौधे में अलग-अलग बांटकर जीवन को देखते हैं। आखिर जीवन को किस तरह देखना चाहिए?

ब्रह्मांड को समझने की सबसे गहरी कोशिश हमें ऐसे विचार तक ले जाती है, जिसे 'ब्रह्मांडीय चेतना' कहा जाता है। सरल शब्दों में कहें, तो यही वह मूल शक्ति है, जिससे सब कुछ उत्पन्न हुआ है और जो हर क्षण इस सृष्टि को देख रही है। हम हैं, क्योंकि वह है और शायद इसलिए भी कि वह हमें इस अस्तित्व में देखना चाहती है। अक्सर हम जीवन को अलग-अलग हिस्सों में बांटकर देखते हैं- मैं, तुम, प्रकृति, ईश्वर। आध्यात्मिक दृष्टि कहती है कि यह विभाजन हमारी समझ की सीमा है। वास्तव में, सब कुछ एक ही चेतना का विस्तार है। जब हम इस सत्य को भूल जाते हैं और मान लेते हैं कि ईश्वर के अलावा भी बहुत कुछ स्वतंत्र रूप से मौजूद है, तब यह सीमित दृष्टिकोण होता है। जब भीतर से यह अनुभव होने लगे कि जो कुछ भी है, वह उसी एक चेतना का रूप है, तब हम समग्र दृष्टि की ओर बढ़ते हैं।

यही समग्र दृष्टिकोण साधना की ऊंची अवस्थाओं- जैसे सविकल्प, निर्विकल्प और संप्रज्ञात समाधि की ओर ले जाता है। यह कोई अचानक मिल जाने वाला अनुभव नहीं है, बल्कि धीरे-धीरे विकसित होने वाली समझ है, जिसमें व्यक्ति अपने भीतर और बाहर एक ही सत्य को पहचानने लगता है।

आज की एक बड़ी विडंबना यह है कि आध्यात्मिक ज्ञान की कमी नहीं है, किताबें, प्रवचन और विभिन्न साधन आसानी से उपलब्ध हैं, फिर भी सच्चे साधक और योग्य मार्गदर्शक कम दिखाई देते हैं। कारण यह है कि अध्यात्म को समझने के बजाय कई लोग उसे दिखावे या लाभ का साधन बना लेते हैं। ऐसे तथाकथित गुरु अक्सर लोगों को उलझा देते हैं। जैसे, ईश्वर का रूप कैसा है? कौन-से देवता श्रेष्ठ हैं या स्वर्ग-नरक की कल्पनाएं क्या हैं? इन चर्चाओं में उलझकर साधक मूल प्रश्न से दूर हो जाता है। कुछ लोग भय व लालच का सहारा लेकर भोले-भाले लोगों को नियंत्रित करने की कोशिश भी करते हैं।

सच्चा साधक हर जीव में उसी एक चेतना को देखता है। आध्यात्मिक यात्रा का सार ही यही है- भ्रम से निकलकर उस चेतना को पहचानना, जो हर जगह, हर रूप में, हर क्षण विद्यमान है।

अध्यात्म इसके बिल्कुल विपरीत है। वह बांटता नहीं, बल्कि जोड़ता है। एक सच्चा साधक हर व्यक्ति, हर जीव में उसी एक चेतना को देखता है। उसके लिए न जाति का भेद होता है, न धर्म का, न देश का। वह पशु-पक्षी व पेड़-पौधों को भी अपने ही अस्तित्व का हिस्सा मानता है। यही एकात्म दृष्टिकोण है।

आध्यात्मिक यात्रा का सार ही यही है- बाहरी भ्रमों से निकलकर उस एक चेतना को पहचानना, जो हर जगह, हर रूप में, हर क्षण विद्यमान है।

श्री श्री आनंदमूर्ति

केर स्टार्मर | ब्रिटिश प्रधानमंत्री

मेरा जितना चाहे मजाक उड़ा लो, लेकिन मैं हमेशा देश के हित में फैसले लूंगा। इसीलिए मैं ईरान के खिलाफ आक्रामक कार्रवाई में शामिल नहीं हो रहा हूं। मैं ब्रिटिश बच्चों को तुम्हारी हवस की खातिर मरने के लिए नहीं भेज सकता।

आत्ममंथन कर इसे अवसर बनाया जाए

पहली अप्रैल, जिसे मूर्ख दिवस के रूप में जानते हैं, हर वर्ष हंसी-मजाक के साथ मनाई जाती है। किंतु यदि इस दिन को केवल दूसरों को मूर्ख बनाने तक सीमित न रखकर, स्वयं के मंथन का अवसर बनाएं, तो शायद हम एक गहरी सच्चाई को पहचान सकेंगे। आज का मानव धीरे-धीरे मशीन बनता जा रहा है, और विडंबना यह है कि उसे इसका एहसास तक नहीं है। जिस मस्तिष्क को प्रकृति ने संवेदनशीलता, स्मरण शक्ति और तर्क क्षमता का अद्भुत वरदान दिया था, वही आज निष्क्रियता की ओर बढ़ रहा है। आज तकनीक की वजह से हमारी नैसर्गिक क्षमताएं धीरे-धीरे खत्म हो रही हैं।

निस्संदेह, तकनीक ने जीवन को सरल बनाया है, लेकिन यह सरलता कहीं-न-कहीं हमारी मानसिक सक्रियता को कुंद कर रही है। हर छोटी-बड़ी जानकारी के लिए गूगल पर निर्भरता ने हमारी सोचने और समझने की क्षमता को प्रभावित किया है। अब तो स्थिति यह है कि 'एआई टूल्स' पर हमारी निर्भरता बढ़ चली है, जिस कारण मस्तिष्क का थोड़ा-बहुत उपयोग भी हम करने से बचने लगे हैं। यदि यही प्रवृत्ति जारी रही, तो वह दिन दूर नहीं, जब मानव का मस्तिष्क केवल एक निष्क्रिय अंग बनकर रह जाएगा, जो बिना किसी प्रयास के, बिना किसी दिशा के, मंजिल की तलाश में भटकता रहेगा। यह तकनीकी गुलामी का एक ऐसा रूप होगा, जहां सुविधा के नाम पर हम अपनी मूल क्षमताओं को खो देंगे। अतः 1 अप्रैल को, दूसरों को मूर्ख बनाने से पहले, हमें स्वयं से यह प्रश्न पूछना चाहिए कि क्या हम सच में बुद्धिमान बन रहे हैं या केवल सुविधाओं के लोभ में अपने विवेक को खोते जा रहे हैं? हम तकनीक का उपयोग जरूर करें, लेकिन उसका गुलाम होने से बचें। अपने मस्तिष्क को सक्रिय रखना, स्मरण-शक्ति का अभ्यास करना और तर्कशीलता को बनाए रखना ही इस चुनौती से निपटने का एकमात्र उपाय है।

अब हमें अपने दैनिक जीवन में छोटे-मोटे बदलाव करने ही चाहिए। ये परिवर्तन ऐसे हों, जिनसे हम अपनी खोती हुई क्षमताओं को फिर से जागृत कर सकें। जरूरत न हो, तो तकनीक का इस्तेमाल न करें और कुछ जोर अपने दिमाग पर भी डालें। एक छोटी शुरुआत फोन नंबरों को याद रखने से की जा सकती है। गुणा-भाग करने के लिए कैलकुलेटर से दूरी भी इन उपायों में एक है। तकनीक हमारे जीवन का सहायक बने, स्वामी नहीं। यही संतुलन हमें बुद्धिमान मानव के रूप में स्थापित करेगा। शायद तभी, हम सही मायने में मूर्ख दिवस मनाने के हकदार होंगे। मूर्ख दिवस का संदेश भी यही है कि दूसरों को बनाए नहीं, खुद को मूर्ख बनने से बचाएं।

मुनीष भाटिया, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम

अप्रैल फूल

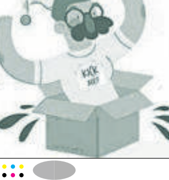

अब हर कोई एक-दूसरे को मूर्ख बना रहा

संसार के कई हिस्सों में साल में केवल एक दिन, यानी 1 अप्रैल को एक-दूसरे को मूर्ख बनाने का अघोषित प्रावधान है, पर आर्यावर्त भू-खंड पर 'फूल' बनने-बनाने का यह महापर्व किसी भी मौसम में और किसी भी अवसर पर विधि-विधान से मनाया जाता है। यहां बनने वाले को मामू/ गधा/ फूल/ अप्रैल-फूल की संज्ञा मिलती है, जबकि बनाने वाले को स्याना, शाना और कभी-कभी डेढ़-शाना भी कहा जाता है। हमारा देश सचमुच शिल्पकारों का देश है, जहां हर नागरिक किसी-न-किसी को 'बनाने की कला' में सिद्धहस्त है।

मिसाल के तौर पर, दशकों से माननीय वोटों की लालसा में लोक-लुभावन वादों का ऐसा झुनझुना बजाते आ रहे हैं कि भोली जनता 'मामू' बनती आ रही है। बदले में लोग भी कम नहीं हैं। महंगाई और बेरोजगारी की मार झेलते हुए मुफ्त राशन-पानी-बिजली के सपने देखकर खादी-मानवों की सरकार बनाती चली आ रही है। यानी, दोनों ओर से बराबरी का खेल चल रहा है। एक ओर बड़े साहब अपने कर्मचारियों पर अतिरिक्त काम का बोझ डालकर उसे नकारा साबित करने जुटे रहते हैं, तो दूसरी ओर काम से बचने के माहिर कर्मचारी चाटुकारिता के चुकंदर से बॉस का हीमोग्लोबिन बढ़ाते रहते हैं। ऑनलाइन गेम कंपनियां नौजवानों को खिलाड़ी-सह-जुआरी बनाने में व्यस्त हैं, तो बाबाजी-मौलानाजी पापियों को 'एक पैकेज में निर्मल हृदय' बनाने की मुहिम में लगे हुए हैं। कोई ब्लॉग बना रहा है, कोई ठुमका लगाकर रील बना रहा है और कोई अपनी जान पर खेलकर फॉलोअर्स बढ़ा रहा है। बाबू लोग काम न करने के एवज में मासिक वेतन बना रहे हैं, तो कुछ मुलाजिम सरकारी सेवा को चाय-पानी का स्थायी साधन बना चुके हैं। 'वाट्सएप यूनिवर्सिटी' अपुष्ट आंकड़ों से आम नागरिकों को 'विद्वान' बना रही हैं, तो कॉपी-पेस्ट की तपस्या में रत प्रकाशक ऐसे हैं, जो साहित्य-ज्ञान से पैदल लोगों को नामी लेखक-साहित्यकार बनाने का पुण्य कमा रहे हैं। इस बनाने-बनने की भागदौड़ में जनप्रतिनिधि अपनी संपत्ति बनाते जा रहे हैं और जनता रील-शॉर्ट-वीडियो। लोकतंत्र का कमाल देखिए- गरीब व्यक्ति भी अपने मत से किसी को विधायक-सांसद बना सकता है। यानी, यहां हर कोई किसी-न-किसी को 'बना' ही रहा है।

सबसे रोचक बात यह कि हमारे देश में अप्रैल फूल बनने-बनाने के लिए अप्रैल का इंतज़ार नहीं करना पड़ता। यहां परिस्थिति के अनुसार एक-दूसरे को वेबकूफ बनाने का प्रोग्राम बारहों मास चलता रहता है। इसमें जन से लेकर जन-नायक तक, सभी पूरे उत्साह के साथ अपनी भागीदारी निभाते हैं।

विनोद कुमार, टिप्पणीकार

जागरूक संपादकीय

जागरूक टाइम्स। मुंबई। बुधवार, 1 अप्रैल 2026

श्रीरामचरितमानस

पुलक बाटिका बाग बन सुख सुबिहंग बिहारु।
माली सुमन सनेह जल सींचत लोचन चारु॥

भावार्थ : कथा में जो रोमांच होता है, वही वाटिका, बाग और वन है और जो सुख होता है, वही सुंदर पक्षियों का विहार है। निर्मल मन ही माली है, जो प्रेमरूपी जल से सुंदर नेत्रों द्वारा उनको सींचता है॥

मेड इन इंडिया मेक फॉर द वर्ल्ड

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने गुजरात के साणंद में केन्स सेमीकॉन प्लांट का उद्घाटन किया। यह देश का दूसरा ऐसा प्लांट है जो सेमीकंडक्टर क्षेत्र में भारत की आत्मनिर्भरता को मजबूत करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। उद्घाटन के बाद पीएम मोदी ने प्लांट का जायजा लिया। साथ ही उन्होंने ऑपरेटर्स और इंजीनियरों से बातचीत की। अपने संबोधन में पीएम ने कहा कि पिछले महीने के अंतिम दिन भी मैं साणंद में था और इस महीने के अंतिम दिन भी मैं साणंद में हूं। यह केवल संयोग नहीं है बल्कि यह संकेत देता है कि भारत कितनी तेज गति से सेमीकंडक्टर क्षेत्र में आगे बढ़े रहा है। साणंद और सिलिकॉन वैली के बीच एक नया सेतु स्थापित हुआ है। यहां निर्मित उत्पादों का बड़ा हिस्सा निर्यात के लिए पहले ही बुक हो चुका है, जिससे मेक इन इंडिया, मेक फॉर द वर्ल्ड का संदेश वैश्विक स्तर पर गूंजेगा। पीएम मोदी ने कहा कि केन्स जैसी भारतीय कंपनी अब वैश्विक सेमीकंडक्टर सप्लाई चेन का मजबूत हिस्सा बन चुकी है। आने वाले समय में कई भारतीय कंपनियां दुनिया को एक भरोसेमंद और मजबूत सेमीकंडक्टर सप्लाई चेन उपलब्ध कराएंगी। उन्होंने कहा कि इस प्लांट में उत्पादन शुरू होने के साथ ही भारत ने खुद को एक विश्वसनीय सेमीकंडक्टर सप्लायर के रूप में स्थापित करने की दिशा में बड़ा कदम बढ़ाया है। मोदी ने कहा कि इस दशक में महामारी, संघर्ष और वैश्विक सप्लाई चेन बाधाओं ने दुनिया को प्रभावित किया है, खासकर चिप्स, रेयर अर्थ मिनरल्स और ऊर्जा क्षेत्र में। ऐसे समय में भारत जैसे लोकतांत्रिक देश का इस दिशा में आगे बढ़ना वैश्विक विकास के लिए बेहद महत्वपूर्ण है। उन्होंने यह भी बताया कि क्रिटिकल मिनरल्स में आत्मनिर्भरता के लिए नेशनल क्रिटिकल मिनरल्स मिशन शुरू किया गया है, जिसके तहत माइनिंग, प्रोडक्शन और रिसाइक्लिंग पर जोर दिया जा रहा है। साथ ही, ओडिशा, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और केरल जैसे तटीय राज्यों में रेयर अर्थ कॉरिडोर विकसित करने की योजना है, जिससे एक मजबूत सप्लाई चेन तैयार होगी। मोदी ने कहा कि उद्योग के अनुमानों के अनुसार भारत का सेमीकंडक्टर बाजार इस समय करीब 50 अरब डॉलर का है, जो इस दशक के अंत तक बढ़कर 100 अरब डॉलर तक पहुंच सकता है। यह वृद्धि इस क्षेत्र की अपार संभावनाओं को दर्शाती है। उन्होंने बताया कि 2021 में शुरू किया गया इंडिया सेमीकंडक्टर मिशन केवल एक औद्योगिक नीति नहीं, बल्कि देश के आत्मविश्वास का प्रतीक है। भारत अब इस क्षेत्र में मिशन मोड में तेजी से काम कर रहा है और तकनीकी क्षेत्र में उठाए जा रहे कदम आने वाले दशकों में देश की वैश्विक नेतृत्व क्षमता को मजबूत करेंगे।

खतरनाक हो चली खाद्य मिलावट

सरकार को सख्ती से निपटना चाहिए

सुभाषचंद्र अग्रवाल

> यह काफी आम बात है कि हानिकारक तेलों और पशु-चर्बी का व्यापक रूप से इस्तेमाल सड़क किनारे के ढाबों और कुछ भोजनालयों में मक्खन के रूप में किया जाता है। केंद्र और राज्य सरकारों को इस संबंध में आवश्यक कदम उठाने चाहिए, जिससे देश में मिलावटी 'मक्खन' का उपभोग संभव न हो सके। तिरुमाला तिरुपति देवस्थानम में कुछ साल पहले लड्डुओं के पवित्र प्रसाद में मिलावटी घी के उपयोग की चौंकाने वाली घटना सामने आई थी, जिससे यह साफ हो गया है कि ऐसे निवारक कदम उठाए जाएं जिससे हलवाइयों और भोजनालयों द्वारा इस प्रकार का मिलावटी देसी घी उपयोग में न लाया जा सके। देसी घी के निर्माता का ब्रांड-नाम और दूसरी जरूरी जानकारी अनिवार्य रूप से भारतीय खाद्य सुरक्षा तथा मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) के साथ साझा की जानी चाहिएं। साथ ही ऐसी जानकारियों को भी सार्वजनिक किया जाना चाहिए, जिसमें घी और तेल सहित ब्रांडेट कच्चे माल का विवरण मौजूद हो। ये विवरण हलवाइयों के दुकानों और भोजनालयों में प्रमुख स्थानों पर प्रदर्शित की जानी चाहिए।

उत्तर प्रदेश में खाद्य पदार्थों में थूकने और मूत्र मिलाने की कथित घटनाओं को संज्ञान में लेते हुए, मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने सही दिशा में निर्देश दिया कि सभी खाद्य केंद्रों के संचालकों, मालिकों और प्रबंधकों का नाम और पता प्रदर्शित किया जाए, साथ ही रसोइयों और वेटरों के लिए मास्क व दस्ताने पहनना अनिवार्य किया जाए। इसके साथ ही होटलों और रेस्तरां में सीसीटीवी कैमरे लगाया जाना भी जरूरी है। यहां तक कि कांग्रेस-शासित हिमाचल प्रदेश सरकार में मंत्री विक्रमादित्य सिंह ने भी इसी नियम के पालन की इच्छा जताई है। भारत में इतने अधिक रोहिंग्या और बांग्लादेशियों की मौजूदगी को देखते हुए, छद्म-धर्मनिरपेक्षता से ऊपर उठकर सभी राज्यों को ये कदम उठाने चाहिए। भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण द्वारा सभी भोजनालयों के लिए उनके दरवाजों पर स्वच्छता-रेटिंग प्रदर्शित करना अनिवार्य बनाने की दिशा में जो कदम उठाया है, वह प्रशंसनीय है। लेकिन यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि ऐसा सचमुच हो, सिर्फ बातें भर न हों और इस रेटिंग में रसोई व भंडारण क्षेत्रों को भी शामिल किया जाना चाहिए। यह इसलिए जरूरी है, क्योंकि हमारे यहां भोजनालयों के भंडारों में चूहों का भागना-दौड़ना बहुत आम है, जिससे रसोई गंदी होती हैं। एफएसएसएआई ने खाना पकाने के लिए बार-बार तले जाने वाले तेल के नियंत्रण पर महत्वपूर्ण कदम उठाया है। क्योंकि बार-बार ऐसा करने से यह तेल हमारे स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा बन जाता है। समय आ गया है कि भोजनालय चाहे कितना छोटा क्यों न हो, वहां आरओ जल-शुद्धिकरण यंत्र लगाना जरूरी है। इसे अनिवार्य किया जाए कि प्रत्येक भोजनालय इस नियम का पालन कर रहा है और एफएसएसएआई को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि शाकाहारी और मांसाहारी भोजन के लिए रसोई के बर्तन अलग-अलग हों, ताकि शाकाहारी लोगों की भावनाओं का सम्मान किया जा सके। इस बात को भी सभी भोजनालयों में प्रमुख रूप से प्रदर्शित करना जरूरी हो। केंद्र सरकार को चाहिए कि वह योग की तरह अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर

इमेज

शाकाहारी भोजन को बढ़ावा दे और सभी सरकारी आयोजनों में केवल शाकाहारी भोजन ही परोसा जाए, इसे सुनिश्चित किया जाना चाहिए। यहां तक कि विदेशी गणमान्य व्यक्ति भी प्रसिद्ध भारतीय शाकाहारी भोजन का स्वाद लेकर इसे सुखद परिवर्तन के रूप में लेंगे। अयोध्या और मथुरा जैसे पवित्र शहरों में, जहां बहुसंख्यक हिंदुओं की भावनाओं के अनुरूप मांस की बिक्री पहले से ही प्रतिबंधित है, वहां शाकाहार को बढ़ावा मिल रहा है। इसलिए भारत सरकार को संयुक्त राष्ट्र से संपर्क करके 1 अक्टूबर को विश्व शाकाहार दिवस मनाए जाने का अनुरोध करना चाहिए। केंद्र और राज्य सरकारों को निर्देश देना चाहिए कि शाकाहारी व मांसहारी भोजन पकाने के लिए अलग-अलग बर्तन ही नहीं, अलग-अलग रसोईयों का भी इस्तेमाल हो। इस व्यवस्था को उनके परिसर के अंदर और बाहर प्रमुख रूप से प्रदर्शित किया जाए। ऐसे में ग्राहक बढ़ेंगे, क्योंकि दोनों ही किस्म के ग्राहक नहीं चाहते कि उनके भोजन के साथ घालमेल हो। स्कूलों और रेलगाड़ियों में ताजा पकाए गए भोजन की जगह ब्रांडेड पैक्ड खाद्य पदार्थ मिलने चाहिए। क्योंकि आए दिन समाचारों में ऐसी रिपोर्ट्स देखने को मिलती हैं कि स्कूलों में मध्याह्न भोजन के रूप में पकाए गए चावल और दाल घटिया क्वालिटी के हैं। यहीं नहीं उनमें कीड़े-मकोड़े, मेंढक, छिपकली और चूहे तक पाए जाते हैं। कई ऐसी घटनाएं हुई हैं कि स्कूल के बच्चे ताजा पका खाने के बाद बीमार पड़ गए। इसलिए पैक्ड भोजन ज्यादा भरोसेमंद होगा और हां, इसमें कुछ बच्चों के प्याज और लहसुन के न खाने की बात को भी ध्यान में रखा जाए। एक बार 30 सांसदों ने सरकार से अपील की थी कि मुंबई स्थित बिस्कुट मैन्युफैक्चरर्स वेलफेयर एसोसिएशन द्वारा अनुशंसित प्रतिष्ठित कंपनियों से खरीदे गए पैकेज्ड बिस्कुट को मध्याह्न भोजन योजना में पके हुए भोजन की जगह शामिल किया जाए। इससे सरकार का बजट नियंत्रण में रहेगा और कारपोरेट कंपनियां अपनी सोशल रिस्पोंसबिल्टी के चलते पैकेज्ड भोजन उपलब्ध कराकर अपनी जिम्मेदारी को पूरा कर सकते हैं। सरकार को चाहिए कि वो भारतीय रेलवे कैटरिंग एंड टूरिज्म कॉरपोरेशन लिमिटेड की इकाइयां देश के हर जिले में स्थापित करे, जहां वे बड़े पैमाने पर बेक्ड उत्पाद बनाएं, जिसे स्कूलों और रेलगाड़ियों में उपलब्ध कराया जाए। क्योंकि ताजे पके भोजन को लेकर अकसर शिकायतें आती रहती हैं। भारत के सर्वोच्च न्यायालय (सुप्रीम कोर्ट) ने 19 अप्रैल 2021 को केंद्र और राज्य सरकारों से उन रिपोर्टों पर टिप्पणी मांगी थी, जिनमें कहा गया था कि भारत में प्रसिद्ध कंपनियों के लोकप्रिय ब्रांडों में भी मिलावटी शहद बेचा जा रहा है। पाया गया था कि चीन से आयातित एक विशेष प्रकार की चीनी को शहद में मिलाकर एफएसएसएआई के परीक्षण मानक को भी पास किया जा सकता है। राजधानी दिल्ली स्थित सेंटर फॉर साइंस एंड इनवार्यन्मेंट द्वारा किए गए शोध के अनुसार भारत में बेचे जा रहे शहद के 70 नमूनों में से केवल 3 ही अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत हो सके थे। यह भारतीय लोगों के जीवन के साथ खिलवाड़ है। क्योंकि मधुमेह से पीड़ित लोग शहद का सेवन करते हैं। शहद उनके लिए सुरक्षित माना जाता है, लेकिन मिलावटी शहद बेहद खतरनाक हो सकता है।

गीता सार

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः॥

भावार्थ : कोई भी मनुष्य किसी भी समय में क्षण-मात्र भी कर्म किए बिना नहीं रह सकता है क्योंकि प्रत्येक मनुष्य प्रकृति से उत्पन्न गुणों द्वारा विवश होकर कर्म करता है।

फन विद फिजिक्स

उलटे तीर का जादू

निकहत कुंवर

बच्चो! आज मैं तुम्हें एक दिलचस्प प्रयोग के बारे में बताऊंगी, जो है तो विज्ञान पर आधारित लेकिन जादू सा प्रतीत होता है। इसे दिखाने पर लोग आपको जादूगर समझेंगे और उन्हें मजा भी बहुत आएगा। इस प्रयोग को करने के लिए हमें बहुत साधारण चीजों की जरूरत पड़ेगी। एक गिलास या जार, जिसकी साइड एकदम सीधी हों। कागज, एक मार्कर पेन और जग या बोतल में पानी। इस प्रयोग को करने से पहले कुछ चीजों के बारे में जानना जरूरी है। यह प्रयोग उसी समय सफल होता है, जब उसे उचित जगह से देखा जाए या तो अपने परिवार के सदस्यों के लिए कुर्सियां उस उचित कोण के अनुसार लगाएं या अगर आप इसे ऑनलाइन कर रहे हैं, तो अपने लैपटॉप या फोन पर कैमरा इस तरह से फिट करें कि आपको मालूम होना चाहिए कि डेमो किस जगह से देखा जाएगा। इस तरह अब आप शुरू करने के लिए तैयार हैं। सबसे पहले कागज पर दो छोटे हॉरिजॉंटल (क्षैतिज) तीर ड्रा कर लें, जो समान दिशा में जा रहे हों। वह इतने लम्बे होने चाहिएं जितना कि आपका गिलास चौड़ा हो। फिर कोई तरीका निकालें कि आपका कागज खड़ा हो जाए- उसके कोनों को मोड़ दें ताकि वह दीवार, बॉक्स या किताब आदि के सहारे खड़ा हो जाए। गिलास को अपने तीरों के आगे रख दें और उसके बाद गिलास में पानी डालें कि पानी का स्तर एक तीर के ऊपर हो, लेकिन दूसरे तीर से नीचे। गिलास को अपनी कुर्सी/वेबकैम की तरफ या उससे दूर सरकाएं जब तक कि आपको वह स्पॉट न मिल जाए जहां निचला तीर उलटा हो गया है और साइज में ऊपर के तीर के बराबर लगे। जब आपको यह स्पॉट मिल जाए तो उसे मार्क कर दें। पानी को वापस जार में डाल दें और खाली गिलास को वापस मार्क की गई पोजीशन पर रख दें। अब आपका सेटअप हो गया है। अपने परिवार को व्यक्तिगत रूप से ऑनलाइन पोजीशन में बैठा दें। ट्रिक को करने के लिए आपको सिर्फ गिलास में पानी डालना और अपने दर्शकों के आश्चर्य में पड़े चेहरों को देखना है कि तीर की दिशा उनकी आंखों के सामने पलट जाएगी। यह ऑप्टिकल इल्यूजन है, जिसमें हम जो इमेज या तस्वीर 'देखते' हैं वह अपनी वास्तविक अवस्था से एकदम अलग दिखायी देती है, जैसा कि हमारा उलटने या रिवर्स होने वाला तीर। बिना पानी के हम दोनों तीरों को वैसे ही देखते हैं जैसे कि वह हैं। लेकिन जब हम गिलास में पानी डाल देते हैं तो स्थिति जटिल हो जाती है। रोशनी सीधी लाइनों में फैलने की बजाय गिलास के पानी में प्रवेश करने व बाहर निकलने पर दिशा बदलती है।

तिथि विशेष

उत्पल दत्त

उत्पल दत्त भारतीय सिनेमा और रंगमंच के एक अत्यंत प्रतिभाशाली, प्रभावशाली और बहुमुखी कलाकार थे। उनका जन्म 1 अप्रैल 1929 को हुआ था। वे केवल एक अभिनेता ही नहीं, बल्कि लेखक, निर्देशक और सामाजिक विचारक भी थे। उन्होंने अपने करियर की शुरुआत थिएटर से की और धीरे-धीरे फिल्मों में भी अपनी अलग पहचान बनाई। उत्पल दत्त का रंगमंच से गहरा जुड़ाव था। वे खासतौर पर राजनीतिक और सामाजिक विषयों पर आधारित नाटकों के लिए जाने जाते थे। उन्होंने कई नाटकों का लेखन और निर्देशन किया, जिनमें समाज की सच्चाइयों और समस्याओं को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया गया। उनका मानना था कि कला केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि समाज को जागरूक करने का एक सशक्त साधन है। फिल्मों की बात करें तो उत्पल दत्त ने हिंदी और बंगाली दोनों भाषाओं की फिल्मों में शानदार अभिनय किया। हिंदी सिनेमा में उनकी पहचान एक उत्कृष्ट चरित्र अभिनेता के रूप में बनी। "गोलमाल", "नरम गरम" और "शौकीन" जैसी फिल्मों में उनके कॉमिक अभिनय ने दर्शकों को खूब हंसाया, जबकि गंभीर भूमिकाओं में भी उन्होंने अपनी अदाकारी का लोहा मनवाया। उनकी आवाज, संवाद अदायगी और अभिनय की गहराई उन्हें अन्य कलाकारों से अलग बनाती थी। वे हर किरदार में पूरी तरह ढल जाते थे, चाहे वह हास्य भूमिका हो या गंभीर चरित्र। उनकी अभिनय शैली आज भी नए कलाकारों के लिए प्रेरणा का स्रोत है। उत्पल दत्त को उनके उत्कृष्ट योगदान के लिए कई सम्मान और पुरस्कार प्राप्त हुए। उन्होंने भारतीय सिनेमा और रंगमंच दोनों क्षेत्रों में अमिट छाप छोड़ी। 19 अगस्त 1993 को उनका निधन हो गया।

हर अवसर पर एक अलग मिष्ठी

जीत में रसगुल्ला तो मय्यत में संदेश

डॉ.अनिता राठौर

> दूध, चीनी, चावल के आटे और गुड़ के साधारण मिश्रण का कितना अर्थ हो सकता है? पश्चिम बंगाल व बांग्लादेश में मिष्ठी या मिठाई परंपरा हैं, जज्बात हैं, विरासत हैं, कला हैं, व्यापार हैं और इससे भी बढ़कर यह कि विरोधाभासों से भरी हुई हैं। हर अवसर व बजट के लिए रेसिपी है और दाम एक रुपए से 1,000 रुपए या उससे भी अधिक हो सकते हैं। अगर चुनावी जीत व अच्छे रिपोर्ट कार्ड के लिए रसगुल्ला है, तो शादी के लिए चमचम। रविवार के लिए तली हुई बूंदी है, तो अचानक बिना खबर किए आए महमान के लिए मुंह में घुलने वाला बताशा। हद तो यह है कि मय्यत व श्रद्धांजली के लिए शंख के आकार का संदेश है। सवाल यह है कि बंगाल में हर अवसर के लिए मिठाई क्यों है? यह परंपरा विपत्ति, जाति, कला व लिंग से किस तरह विकसित हुई है?

दरअसल, मिष्ठी की सामाजिकता जरूरत, पोषण व तर्क से बहुत आगे की बात है। बंगाल में मिठाई की लत की शुरुआत का आधार यह माना जाता है कि इस क्षेत्र में गन्ने की पैदावार बहुत अधिक होती थी। इस फसल की खेती के विस्तार के साथ ही पामिरा ताड़ का रस निकालना और शुगर की देशज वैरायटी व दानेदार भुरा से मोंडा या बताशा जैसी मिठाई बनाने की वजह से मिष्ठी संस्कृति को आकार मिला है। ऐसा दिल्ली की साउथ एशियन यूनिवर्सिटी में समाजशास्त्र की सहायक प्रोफेसर इशिता डे ने अपनी पुस्तक 'स्वीट एक्ससेसः क्राफ्टिंग मिष्ठी इन बंगाल' में लिखा है। मिठाई की दुकानों, घरेलू रसोइयों, उत्सवों, रेसिपी पुस्तकों आदि से इतर देखें तो मिष्ठी संस्कृति के विकास में जाति, धर्म, विज्ञान और हद तो यह है कि क़ानून व नीति ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। मसलन, यह देखने की बात है कि जब पश्चिम बंगाल में 1960 के दशक में दुग्ध नियंत्रण आदेश के तहत छेना के उत्पादन को सीमित कर दिया गया, तब भी मिष्ठी उद्योग ने खुद को बचाए रखा। उस समय 1943 के अकाल के प्रभावों से यह राज्य फूड की कमी, अनियमित राशन सप्लाई व महंगाई से जूझ रहा था। नतीजतन छेना उत्पादन पर रोक लगानी पड़ी ताकि दूध की सप्लाई को बढ़ाया जा सके, जोकि आवश्यक समझा जाता था, जबकि छेना व छेना-निर्मित उत्पादों को 'बर्बादी' व संसाधनों का 'दुरूपयोग' माना जाता था।

इस आदेश के खिलाफ जबरदस्त आंदोलन हुए और कलकत्ता हाईकोर्ट ने इस आदेश को निरस्त कर दिया। आज भी बंगाल में उस दौर को काले युग के रूप में याद किया जाता है, जिससे बंगाल में मिष्ठी के महत्व का सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है। यह सबक ऐसा रहा जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। यही वजह रही कि कोविड-19 महामारी के दौरान जब मार्च 2020 में पहला लॉकडाउन लगाया गया था तो एक माह के भीतर ही मिठाई की दुकानों को निर्धारित घंटों के लिए खोलने की अनुमति दी गई ताकि दूध, छेना व मिठाई बनाने वाला श्रम ध्वस्त न हो। लेकिन मिष्ठी संस्कृति की अन्य दिलचस्प बातें भी हैं। मिष्ठी उद्योग में अधिकतर पुरुष कारीगरों को ही नियुक्त किया जाता है; क्योंकि काम रात में ही होता है दूध व छेना की सप्लाई चेन से तालमेल बैठाने के लिए। इसलिए अगर आपको मिष्ठी का इतिहास समझना है, तो उसके श्रम, लिंग व कला की राजनीति का अध्ययन करना होगा। वैसे मिठाइयों में छेना के अत्यधिक इस्तेमाल का इतिहास ज्यादा पुराना नहीं है। सोलहवीं शताब्दी में पुर्तगालियों व डच के आगमन के बाद छेना का अधिक प्रयोग होने लगा। इससे पहले दानेदार छेना का इस्तेमाल सुगंधित व स्वादयुक्त मिठाइयों जैसे छेना बोरा में ही किया जाता था। कोलोनियल संपर्क ने रिफाइंड वाइट शुगर व नई क्रिस्टल तकनीक से परिचय कराया, जिसे जब छेना में मिलाया गया तो मिठाई बनाने का तरीका ही बदल गया। यह छेना चिकना था यानी मिठाई को आकार, जज्ब और ढालने के लिए आदर्श था। यह जानना भी दिलचस्प है कि मिठाइयों के नाम कैसे पड़े। 1856 में तत्कालीन गवर्नर जनरल चार्ल्स कैनिंग की पत्नी लेडी शार्लेट कैनिंग के आगमन के सम्मान में विख्यात हलवाई भीमचंद्र नाग ने शीरे व डीप-फ्राई वाली एक मिठाई तैयार की, जिसे लेडीकेनी नाम दिया गया। हालांकि लगभग ऐसी ही एक मिठाई पहले से ही मौजूद थी, लेकिन विशेष मेहमान के लिए इसे बीच में से थोड़ा मोटा कर दिया गया और इसे एक अन्य अर्थ मिल गया। यह नाम ऐसा चर्चित हुआ कि आज 150 साल से अधिक गुजर गए हैं लेकिन बाजार में लेडीकेनी के डिब्बे धड़ल्ले से बिकते हैं। कलकत्ता में हर हलवाई कुछ न कुछ नया बनाने के प्रयास में लगा रहता था और इसी कोशिश के चलते रसगुल्ला की खोज हुई, जो आज बंगाल की पहचान बन गया है। इन मिश्रण का पश्चिम बंगाल में इतना अधिक महत्व है कि कुछ तत्व मिष्ठी या शादी की मिठाइयां तो दहेज का भी हिस्सा बनती हैं।

वायरल

सोशल मीडिया : लड़के ने दिल्ली में बेच दी पहाड़ों की शुद्ध 'हवा'

आजकल सोशल मीडिया पर एक ऐसा ही वीडियो छाया हुआ है जिसमें एक युवक दिल्ली के लोगों को बोतल बंद ताजी हवा बेचते हुए दिखाई दे रहा है। मजे की बात तो ये है कि लोग इसे खरीदने के लिए 50 रुपए तक देने को तैयार हैं। युवक का कहना है कि दिल्ली वाले धुएं में जी रहे हैं, तो सोचा चलो उन्हें भी ताजगी का अहसास कराया जाए। सुनने में अजीब लगे, पर इस लड़के ने इसे हकीकत में बना दिया। वीडियो के शुरुआत में दिखाया गया है कि लड़का जब हिमाचल घूमने गया, तो उसने वहां प्रेशर स्प्रेयर की मदद से वादियों की ताजी हवा को कुछ बोतलों में भर लिया। फिर 50 रुपए में इसे पहाड़ों वाली 'प्योर ऑक्सीजन' के नाम पर दिल्ली वालों को बेचना शुरू कर दिया। वीडियो में कई लोगों को ताजी हवा का लुत्फ उठाते हुए देखा जा सकता है और देखते ही देखते लड़के की 'हवा' हाथों-हाथ बिक गई। सोशल मीडिया यूजर्स इस अनोखे स्टार्टअप को देखकर हक्के-बक्के रह गए हैं। जहां कुछ लोगों ने युवक को मार्केटिंग का बाप बताया।

पंचांग

1 अप्रैल 2026

- विक्रम संवत् - 2083
- शक संवत् - 1948
- रवि - उत्तरायण
- ऋतु - वसंत
- मास - चैत्र
- पक्ष - शुक्ल
- तिथि - चतुर्दषी 07.07 तक
- वार - बुधवार
- नक्षत्र - उत्तराफाल्गुनी 16.18 तक
- योग - वृद्धि 14.51 तक
- करण - विष्टि 19.22 तक
- सूर्योदय - 06.34 प्रातः (मुंबई)
- सूर्यास्त - 06.50 शाम (मुंबई)
- सूर्योदय - 06.33 प्रातः (भीनमाल)
- सूर्यास्त - 06.57 शाम (भीनमाल)
- चंद्र राशि - कन्या
- अभिजीत - नहीं
- राहु काल - 12.42 से 14.15
- दिशा शूल - उत्तर
- व्रत त्यौहार - हाटकेश्वर जयंती,

हनुमान जन्मोत्सव उपवास, व्रत की पूनम, भद्रा 07.07 से 19.22, रवियोग 16.18 तक

• **शास्त्री प्रवीण त्रिवेदी, भीनमाल**

X का एक्सरे

आने वाले समय में भारत की कई कंपनियां ग्लोबल सहयोग के जरिए दुनिया को एक मजबूत सेमीकंडक्टर सप्लाई चेन देने में अहम भूमिका निभाएंगी। आज का दिन 'मेक इन इंडिया, मेक फॉर द वर्ल्ड' के विजन को सही मायनों में साकार कर रहा है।

नरेंद्र मोदी

ईरान-युद्ध की वर्तमान स्थिति को काफी विशेषज्ञ कोरोनावायरस महामारी से भी बदतर मान रहे हैं। ईरान संघर्ष में शामिल पक्ष भी यह नहीं बता सकते कि आगे क्या होगा, क्योंकि वैश्विक अर्थव्यवस्था तेजी से दरक रही है। ईरानी संघर्ष के प्रतिभागी भी अगले घटनाक्रम की भविष्यवाणी नहीं कर सकते।

ब्लादिमीर पुतिन

कांग्रेस के कुछ नेताओं ने माओवादियों से मुलाकात भी की थी और उनसे संपर्क बनाए रखा था। यह बहुत ही गंभीर मामला और देश की सुरक्षा से जुड़ा हुआ मुद्दा है। यह स्थिति बेदह चिंताजनक है और इसकी जांच जरूर होनी चाहिए।

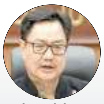

किरण रिजिजू

राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ईरान को हॉर्मुज जलडमरूमध्य पर स्थायी नियंत्रण या वहां 'टोलिंग सिस्टम' चलाने की अनुमति कभी नहीं देंगे। अमेरिका अगले कुछ हफ्तों में अपने सैन्य और रणनीतिक उद्देश्यों को हासिल कर लेगा। अमेरिका ईरान के मिसाइल लॉन्चर्स और नौसेना को बड़े स्तर पर नष्ट कर रहा है।

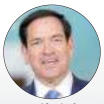

मार्को रुबियो

नारायण पब्लिकेशन प्रा. लि. के लिए मुद्रक-प्रकाशक-हेमल पुरोहित द्वारा एआईएस प्रिंटिंग सोल्यूशंस, प्लॉट नं. ए-544, टीटीसी इंडस्ट्रीयल एरिया, ठाणे-बेलापुर रोड, महापे, नवी मुंबई 400709 से मुद्रित एवं प्रिमाइसेस नं. 1303/चेंबर्स, 13वां माला, वेस्टर्न एक्सप्रेस हाईवे मेट्रो स्टेशन के पास, अंधेरी-कुर्ला रोड, अंधेरी (पूर्व), मुंबई 400 099 से प्रकाशित, पोस्टल रजि. MCN/325/2023-24, (चकाला MIDC पी.ओ.) रजि. नं. MAHHIN/2004/13755, संपादक-हेमल पुरोहित, स्थानीय संपादक-नीरज दवे, फोन : 022-46024646, ईमेल : jagruktimes@gmail.com

नक्सलवाद से मुक्ति के आगे

लोकसभा में सोमवार को केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने घोषणा की कि देष अब नक्सलवाद से मुक्त हो चुका है। उनका यह ऐलान निर्धारित तारीख 31 मार्च 2026 से ठीक एक दिन पहले किया गया है। दरअसल, देश एक लंबे समय से रेड कॉरिडोर के आतंक से प्रभावित रहा है। जो कि राष्ट्र की आंतरिक सुरक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती बना रहा। लेकिन इससे मुक्ति पाना, अपने आप में एक ऐतिहासिक और महत्वपूर्ण उपलब्धि तो माना ही जाएगा। इस महा अभियान में सुरक्षा बलों की रणनीति कौशल और आदिवासियों का सहयोग प्रशंसनीय और महत्वपूर्ण रहा। शाह की ओर से दी गई यह चुनौती भी काफी मायने रखती है कि अब कोई हथियार उठाएगा तो उसका हिसाब चुकता कर दिया जाएगा। वार्ता उसी से होती है जो हथियार डालता है। नक्सलवाद विकास की कमी और अन्याय के खिलाफ नहीं, बल्कि विचारधारा के चलते पनपा। वर्ष 2024 से पहले बिहार, ओडिषा, महाराष्ट्र की एक-एक तहसील और झारखंड का एक जिला छोड़कर शेष राज्य नक्सल मुक्त हो चुका था। वर्ष 2024 से 2026 में अब तक 706 नक्सली मारे गए। 2218 गिरफ्तार हुए और 4839 ने आत्मसमर्पण किया। पोलित ब्यूरो और सेंट्रल कमेटी के 21 सदस्यों में से 20 ने आत्मसमर्पण किया। एक करोड़ का इनामी सिर्फ एक नक्सली मिसिर बेसरा है, जो अभी फ रार है। एक समय था जब नक्सलवाद से देश का 94 हजार वर्ग किलोमीटर जंगल क्षेत्र प्रभावित था। लेकिन अब मात्र 1200 किलोमीटर लंबा कॉरिडोर रह गया। यह सरकार की जीरो टॉलरेंस नीति के कारण अब अपने अंतिम चरण में है। लाल आतंक पर नियंत्रण पाने का श्रेय सुरक्षा बलों की कार्यक्षमता, आधुनिक तकनीक के उपयोग और बेहतर समन्वय को जाता है। महत्वपूर्ण पहलू सुरक्षा के साथ विकास मॉडल रहा। सड़क, बिजली, षिक्षा और स्वास्थ्य जैसी बुनियादी सुविधाओं के विस्तार से नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में लोगों का विश्वास बढ़ा है। सरकार ने आकांक्षी जिला कार्यक्रम जैसे प्रयासों के माध्यम से पिछड़े इलाकों में विकास को तेज करने की कोशिश की है। इससे स्थानीय युवाओं को मुख्यधारा में जोड़ने में मदद मिली है। नक्सलियों के लिए आत्मसमर्पण और पुनर्वास की नीति को भी सफ लता का बड़ा कारण रहा है। सरकारी दावों के विपरीत अभी भी कई विशेषज्ञ मानते हैं कि नक्सलवाद पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है, बल्कि कमजोर हुआ है। कुछ क्षेत्रों में इसकी संरचना बदली है। अभी भी यह चुनौतीपूर्ण है। इन चुनौतियों के समाधान के लिए केवल सुरक्षा बलों पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं होगा, बल्कि समावेशी विकास और जनभागीदारी को और मजबूत करना होगा। कहा जाता है विद्रोह को समाप्त करना एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है, इसे दोबारा पनपने से रोकना दूसरी। यह सोचना होगा कि यह क्षण एक निर्णायक अंत है या केवल एक विराम। नक्सलवाद की जड़ें गहरी सामाजिक-आर्थिक समस्याओं में भी निहित है। भविष्य की नीति 'बंदूक के साथ विकास नहीं' बल्कि 'विकास के माध्यम से शांति' को प्राथमिकता को दी जानी चाहिए। इस क्रम में नक्सलवाद की पूर्ण समाप्ति के लिए सरकार की ओर से निरंतर संवाद, सुरक्षा और समन्वय की नीति को अपनाए जाने की जरूरत है।

विकसित राजस्थान-2047

औद्योगिक क्रांति का शंखनाद और प्रगति पथ पर राजस्थान

के के विश्नोई
उद्योग राज्य मंत्री, राजस्थान

प्रदेश की वर्तमान विकास यात्रा से स्पष्ट है कि राजस्थान अब अपनी सांस्कृतिक विरासत के साथ ही भविष्य की तकनीक, हरित ऊर्जा और वैश्विक निवेश के लिए पूरी तरह तैयार है। मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा के नेतृत्व में यह मरुधरा के आत्मविश्वास राज्य सरकार की प्रगतिशील नीतियों और सुशासन के मंत्र का ही प्रतिफल है।

हमारी रेतीली धोरों वाली धरती में हो रहे ऐतिहासिक बदलाव की गूंज अब वैश्विक व्यापारिक मंचों पर स्पष्ट सुनाई दे रही है। प्रदेश में हुए औद्योगिक क्रांति के शंखनाद से राजस्थान ने प्रगति पथ पर तेजी से अपने कदम बढ़ाए हैं। प्रदेश की वर्तमान विकास यात्रा से स्पष्ट है कि राजस्थान अब अपनी सांस्कृतिक विरासत के साथ ही भविष्य की तकनीक, हरित ऊर्जा और वैश्विक निवेश के लिए पूरी तरह तैयार है। मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा के नेतृत्व में यह मरुधरा के आत्मविश्वास राज्य सरकार की प्रगतिशील नीतियों और सुशासन के मंत्र का ही प्रतिफल है। राजस्थान आज निवेश के लिए देश का सबसे सुरक्षित और आकर्षक स्थल बनकर उभरा है।

आधुनिक नीतिगत ढांचा

प्रदेश के औद्योगिक इतिहास में पहली बार सरकार ने भविष्य की जरूरतों को भांपते हुए अत्यंत साहसिक और आधुनिक नीतिगत ढांचा तैयार किया है। चिप से लेकर जेट इंजन तक के निर्माण के लिए जमीन तैयार की जा रही है। राजस्थान इंडस्ट्रियल पार्क प्रमोशन पॉलिसी बुनियादी ढांचे की बाधाओं को जड़ से खत्म करन की दिशा में अत्यंत उपयोगी प्रयास है। राजस्थान सेमीकंडक्टर पॉलिसी का आगाज प्रदेश को इलेक्ट्रॉनिक्स वैल्यू चेन का वैश्विक केंद्र बनाने की दिशा में एक क्रांतिकारी कदम है। इसके साथ ही एयरोस्पेस एंड डिफेंस पॉलिसी राजस्थान को रक्षा विनिर्माण का प्रमुख हब बनाने का मार्ग प्रशस्त करेगी। इन नीतियों से स्पष्ट है कि राज्य नेतृत्व की सोच सकारात्मक होने के साथ ही वर्तमान आवश्यकता के मध्यनजर अत्यंत आधुनिक है।

राजस्थान की सफलता अभूतपूर्व

मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा की पहल पर निवेश के मोर्चे पर राजस्थान की सफलता अभूतपूर्व है। राइजिंग राजस्थान ग्लोबल इन्वेस्टमेंट समिट के दौरान 35 लाख करोड़ रुपये के ऐतिहासिक एमओयू होना इस बात का प्रमाण है कि राजस्थान पर निवेशकों का भरोसा बढ़ा है। इनमें से 8 लाख करोड़ रुपये की परियोजनाओं का धरातल पर उतरना यह सिद्ध करता है कि वर्तमान कार्यशैली डिलीवरी और परिणाम पर आधारित है। जापान जैसी वैश्विक शक्तियों के साथ मिलकर इलेक्ट्रिक वाहन निर्माण और उच्च तकनीक के क्षेत्रों में हाथ मिलाना राजस्थान को वैश्विक सप्लाई चेन का एक अटूट हिस्सा बना रहा है।

अत्यंत महत्त्वपूर्ण प्रयास

नवीकरणीय ऊर्जा उपकरणों के निर्माण के लिए इंटीग्रेटेड सोलर सेल एंड मॉड्यूल इकाइयों को विशेष प्रोत्साहन देना राजस्थान को देश की क्लीन एनर्जी राजधानी बनाने की दिशा में बड़ा कदम है। औद्योगिक क्रांति की सफलता उसकी प्रशासनिक सुगमता पर निर्भर करती है। राजस्थान ने ईज ऑफ डूइंग बिजनेस के मानकों को धरातल पर उतारते हुए भूमि उपयोग परिवर्तन की समय सीमा को 60 दिन से घटाकर मात्र 30 दिन कर दिया है।

औद्योगिक आधारशिला

इस वर्ष के बजटीय प्रावधान प्रदेश की औद्योगिक आधारशिला को और मजबूती प्रदान करने वाले हैं। सरकार की दूरगामी सोच इन प्रावधानों में स्पष्ट झलकती है। जोधपुर पाली मारवाड़ औद्योगिक क्षेत्र में 3,600 हेक्टेयर भूमि का विकास और 600 करोड़ रुपये का निवेश आने वाले समय में राजस्थान को देश के सबसे बड़े लॉजिस्टिक हब के रूप में स्थापित करेगा। छोटे उद्योगों के लिए करीब 350 करोड़ रुपये की लागत से प्लग एंड प्ले सुविधाओं का विकास संजीवनी सिद्ध होगा। प्रदेश में 11 लाख से अधिक नई एमएसएमई इकाइयों की स्थापना से स्पष्ट है कि स्वरोजगार अब प्रदेश के युवाओं की पहली पसंद बन रहा है।

डीम्ड अनुमोदन का प्रावधान लाना प्रशासनिक जवाबदेही तय करने की दिशा में अत्यंत महत्त्वपूर्ण प्रयास है।

राष्ट्रीय सिंगल विंडो सिस्टम

राजनिवेश पोर्टल का राष्ट्रीय सिंगल विंडो सिस्टम से जुड़ना और एक ही छत के नीचे 143 से अधिक सेवाओं की उपलब्धता निवेशकों के लिए रेड कारपेट बिछाने जैसा है। क्षेत्रीय शक्ति और लोकल फॉर ग्लोबल सरकार का ध्यान बड़े शहरों के साथ ही प्रत्येक जिले की विशिष्ट ताकत को औद्योगिक शक्ति में बदला जा रहा है। बीकानेर में सिरेमिक पार्क और रोहट, पाली में सोलर पैनल मैन्यूफैक्चरिंग पार्क का विकास स्थानीय संसाधनों के सर्वोत्तम उपयोग का उदाहरण है। जोधपुर में हैंडीक्राफ्ट पार्क और किशनगढ़ में टाइल्स मैन्यूफैक्चरिंग पार्क के जरिए स्थानीय उत्पादों को वैश्विक बाजार से जोड़ा जा रहा है। बाड़मेर, उदयपुर और बूंदी में श्रीराम जानकी औद्योगिक क्षेत्र का विकास औद्योगिक विकेंद्रीकरण की एक नई कहानी लिख रहा है।

असली लाभ युवाओं के लिए

औद्योगिक विकास का असली लाभ युवाओं के लिए अवसर पैदा करना है। निजी क्षेत्र में 3 लाख युवाओं को रोजगार मिला है। राजस्थान युवा नीति 2025 और राज्य कौशल नीति 2025 के माध्यम से युवाओं को भविष्य की चुनौतियों के लिए तैयार किया है। आई स्टार्ट जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से 3,300 से अधिक स्टार्टअप्स का पंजीकरण हो चुका है। राजस्थान के युवा अब जॉब सीकर के बजाय जॉब क्रिएटर बन रहे हैं। मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा के कुशल नेतृत्व में राजस्थान आज अपनी नियति खुद लिख रहा है। परंपरा और आधुनिकता के इस संगम ने प्रदेश को आर्थिक उन्नति के पथ पर अग्रसर किया है। विकसित राजस्थान 2047 का विजन अब एक ठोस हकीकत है। इसमें हर उद्यमी, हर युवा और हर नागरिक एक साझीदार है। सुशासन, पारदर्शिता और भविष्योन्मुखी नीतियों के दम पर राजस्थान देश की अर्थव्यवस्था का नया इंजन बनने की ओर अग्रसर है।

जीवन बोध

भक्तिभावना से

भक्तजन भक्तिभावना से युक्त हो कर जब सेवा करते हैं, तो उन्हें अपार आनन्द प्राप्त होता है। जिस तरह से कोई जल में उतरता है या नदी में छलांग लगाता है तो उसको जो ठण्डक मिलती है, उसको वही जानता है। लेकिन जो उस पानी में उतरता नहीं, वो उस ठण्डक का अनुमान नहीं लगा सकता है। इसी प्रकार से भक्तजन महापुरुष, जो पूरी लगन के साथ इस सेवा के मैदान में उतरते हैं, वे भरपूर खुशी वा आनन्द का आभास करते हैं। इसी प्रकार से धन की सेवा में भी पूर्ण योगदान देते हैं। दातार की कृपा से मेहनत मुशक्कत से हासिल किया हुआ धन, भी परोपकार में लगा रहे हैं। इसको देने वाला भी भरपूर खुशी प्राप्त कर रहा है। लेकिन जो इसमें योगदान नहीं देता, वह उसकी महत्ता का अहसास नहीं करता। भक्तजन महापुरुष जानते हैं कि जितनी शक्कर डालते हैं, उतना ही मीठा होता है। जितनी जितनी यह सेवा करते हैं, उतना उतना आनन्द भी ले जाते हैं। खुशी भी वह उतनी ही ले जाते हैं। इस प्रकार से संसार ने सोचा कि शायद बातों से ही काम चलता है। बातों से ही सिलसिले निभ जाते हैं। बातों के बारे में तो कहा ही है, कि बने बातों से बात, फिर बात ही क्या है। लेकिन बातों से काम नहीं चला करते हैं।

निरंकारी बाबा।

जल तरंग

प्रतीक्षा शांति की घंटी की

दो प्रेमियों का मन यही कहता है, तू मेरा मैं तेरी दुनिया जले तो जले। आज अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप अपना यही सोच बनाये हुए हैं। सत्ता और उन के बीच ऐसी ही नजदीकियां बनी हुई हैं। आज भले ही उन्हें ईरान ने छठी का दूध याद दिला दिया। और अरबों डालर का नुकसान हो गया हो। सैनिक मर रहे हों। पर इससे उनकी सेहत में कोई फर्क पड़ने वाला नहीं। उनका तो सोच ही अलग है। वह तो इस बार जब से राष्ट्रपति बने तभी से देश दुनिया में अपनी विशेष छवि बनाए रखने के लिए अपनी विशेष लाइन पर चलने का मन बनाये हुए हैं। अमेरिका में महंगाई बढ़ने से जनता में उथल पुथल मचने लगी है। युद्ध में बने रहने और भारी भरकम नुकसान के चलते अमेरिका के विभिन्न राज्यों में लोग ट्रंप की नीतियों का भारी विरोध करते सड़कों पर उतर आए। पर उन्हें इससे क्या मतलब, वह तो जो सोचे बैठे हैं उसी दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। ट्रंप जानते हैं कि अब आगे तो राष्ट्रपति बनना नहीं, इसलिए अब जो यह दूसरी बार अवसर मिला है उसी में ऐसा कुछ कर जाओ कि देश दुनिया बरसों तक याद करती रहे। वह अपनी कारगुजारी में कलाकार हैं। झूठ बोलने में उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता। वह अपनी कही गई बात पर निश्चित नहीं रहते। पल में तोला पल में माशा। कभी तराजू की तरह दोनों पलड़ों का बैलेंस बनाए रखना उनके चिड़ चिड़े स्वभाव को रास नहीं आता। युद्ध में फंसे हुए हैं। पहले उन्होंने सोचा था कि वह इजरायल के साथ मिलकर जल्द ही ईरान के घुटने टिका देंगे और अपनी बात मनवा लेंगे। पर ऐसा तो हुआ नहीं। वह तो पिछले एक माह से इसी प्रतीक्षा में बने हुए हैं। पर उनकी सारी उम्मीद पर पानी फिर गया। कहां तो वह सोच रहे थे कि दुनिया में उनका वर्चस्व बना रहेगा। पर अब सब कुछ इसका उलट हो रहा है। अब तो ट्रंप चारों और से घिरते जा रहे हैं। अपने देश में तगड़ा जन विरोध होने लगा है। विश्व में अमेरिका के सहयोगी नाटो वाले भी मुंह फेर के बैठे हुए हैं। इधर अकेला ईरान, इजरायल और अमेरिका को धूल चटाने लगा है। इतना नुकसान उठाने के बाद भी युद्ध रत है। अमेरिका ने तो यह कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि ईरान इस तरह मुकाबले में खड़ा हो जायेगा और हार मानने को तैयार नहीं होगा। भले ही वहां कितनी ही जान माल और प्रमुख लोगों का अंत हो गया हो लेकिन वह बिना डरे अभी भी दोनों देशों को मजा चखा रहा है। वह इस बार अमेरिका को साफ बता देना चाहता है कि जिस ईरान को तुम हल्के में ले रहे थे उसी ने ही तुम्हारे पसीने छुड़ा दिये। अब अमेरिका अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए यह कोशिश कर रहा है कि युद्ध विराम हो जाए। निर्णय यह रहे कि, न तुम जीते और न हम हारे। बस जो कुछ हुआ है उसे सपना मानकर जीलो और दुनिया में शांति भरा सोच फिर से बहाल कर दो।

दिनेश विजयवर्गीय
यह लेखक के अपने विचार हैं।

आज का विचार

ध्यान में बैठने से ज्यादा जरूरी है, मन को केन्द्रित करना। केन्द्रित मन ही ध्यान को गहराई देता है।

श्री चन्द्रप्रभ जी।

विंडो टू द वर्ल्ड

धोलावीरा, गुजरात

धोलावीरा गुजरात के कच्छ ज़िले की भचाऊ तालुका में स्थित एक पुरातत्व स्थल है। धोलावीरा में सिन्धु घाटी सभ्यता के अवशेष हैं, यह मात्र एक ऐसा पुरातत्व स्थल है, जो यूनेस्को में शामिल किया गया है। 1960 के दशक में इसकी खोज हुई। यह नगर 47 हेक्टर के चतुर्भुजीय क्षेत्रफल पर फैला हुआ था। धोलावीरा पांच हजार साल पहले विश्व के सबसे व्यस्त महानगर में गिना जाता था।

हेल्थ इज वेल्थ

- गर्मी का मौसम आते ही मलेरिया के मामलों में तेजी से बढ़ोतरी देखने को मिलती है। ये एक मच्छरजनित रोग है, जो व्यक्ति के स्वास्थ्य पर गंभीर असर डाल सकता है। अक्सर लोग इसके बारे में पूरी तरह से जागरूक नहीं होते और शुरूआती लक्षणों को हल्के में ले लेते हैं। गर्मियों में पानी जमा होने और मच्छरों के प्रजनन के कारण यह बीमारी तेजी से फैलती है।
- गर्मी का ये समय बच्चों, बुजुर्गों और गर्भवती महिलाओं के लिए विशेष रूप से संवेदनशील होता है। इसलिए इस मौसम में सावधानी रखना और मलेरिया के प्रति सचेत रहना बेहद जरूरी है। मलेरिया के प्रमुख लक्षणों में बुखार, ठंड लगना, सिरदर्द, शरीर में दर्द और कमजोरी शामिल हैं।
- बचाव के लिए मच्छरदानी का उपयोग, शरीर को ढककर कपड़े पहनना, पानी के जमा स्थानों को साफ रखना और मच्छरदानी वाली स्प्रे का इस्तेमाल करना चाहिए।

अपनों से अपनी सी बात

ऊंचाई के लिए त्याग

दिव्यता को प्राप्त करने के लिए त्यागशील होकर जिओ, त्यागी होकर रहो। चीजों को जोड़जोड़कर अपने पास रखने, मुट्ठी बन्द रखने जैसी आदतें आरम्भ से ही होती है। प्रकृति ने ही यह आदत दी है। जन्म के समय मुट्ठी बन्द होती है इसलिए बांधने की आदत है। धीरे धीरे इस आदत से छुटकारा पाइये, हाथ को खोलना सीखिये। प्रयास करिए कि हाथ ऐसे खुल जाए कि सब कुछ स्वाभाविक रूप से छूटता चला जाए। घर, मकान, खेत, खलिहान, सम्पति और व्यापार व्यक्ति अपने बच्चों को देता है, लेकिन बदले में एक मोह बना लेता है। बच्चों से यह अपेक्षा करने लगता है कि ये सब मेरे ही आदेश पर चलें। होना यह चाहिए कि जब सब सम्पदा त्यागी है तो फ़िर मोह भी क्यों रखना। इसलिए मन को समझाइये कि यह देह भी छूटने वाली है। बहुत पाया, बहुत संग्रह किया, अब त्यागने की बारी है। सारे सम्बन्धों को छोड़कर केवल परब्रम्ह से सम्बन्ध रखिये। केवल उसी को अपना बनाइए, फ़िर न परिवार से न व्यक्ति विशेष से ही मोह ममता रह जाएगी। यह त्याग ही सच्चा आनन्द देता है। त्याग एक ऐसा दिव्य गुण है जो मनुष्य को ऊंचाई की ओर ले जाता है। एक न एक दिन हमें सब चीजों का त्याग करना ही है चाहें हम संसार के पदार्थों न भी छोड़ना चाहें और संसार में लिप्त होकर ही जीने की कामना रखें तब भी कुदरत का अपना नियम है। प्रकृति संसार की सब चीजों को स्वतः छुड़वाती है। परमात्मा जैसे देता हैं वैसे ले भी लेता है। जिस तरह फूल डाली पर टिकते हैं, मुस्कुराते हुए सुगन्ध बिखरते हैं और फ़िर झड़ जाते हैं, जीवन ऐसे ही खिले, मुस्कुराए, सुगन्ध बिखरे और समाप्त हो जाए।

ललित अकिंचन

Feedback@dainiknavajyoti.com

दिवस विशेष

परंपरा, बाजार और मूर्ख दिवस

हास्य की शक्ति को कम करके नहीं आंकें

हंसी एक मानवीय गरिमा है और उसे उत्सव में बदलने की कला हर सभ्यता ने अपने अपने ढंग से विकसित की है। एक अप्रैल उसी कला की एक अभिव्यक्ति है, भले ही उसकी जड़ें हमारी मिट्टी में नहीं हैं। इस दिन को लेकर दो प्रकार के लोग मिलते हैं, एक वे जो इसे निरर्थक विदेशी परंपरा कहकर खारिज कर देते हैं और दूसरे वे जो बिना सोचे विचारे इसमें डूब जाते हैं।

हंसी एक मानवीय गरिमा है और उसे उत्सव में बदलने की कला हर सभ्यता ने अपने अपने ढंग से विकसित की है। एक अप्रैल उसी कला की एक अभिव्यक्ति है, भले ही उसकी जड़ें हमारी मिट्टी में नहीं हैं। इस दिन को लेकर दो प्रकार के लोग मिलते हैं, एक वे जो इसे निरर्थक विदेशी परंपरा कहकर खारिज कर देते हैं और दूसरे वे जो बिना सोचे विचारे इसमें डूब जाते हैं। दोनों के बीच एक तीसरा रास्ता भी है और वह रास्ता विवेक का है। यह दिन न तो सिरे से अस्वीकार करने योग्य है और न ही आंखें मूंदकर मनाने योग्य। इसे समझने की जरूरत है और समझकर मनाने में ही इसकी सार्थकता है। यह परंपरा सोलहवीं शताब्दी के यूरोप से आई है। फ्रांस में जब 1564 में नववर्ष की तिथि बदली तो जो लोग पुरानी परंपरा पर टिके रहे उनका मखौल उड़ाया गया और धीरे धीरे यह मखौल एक सामूहिक उत्सव में बदल गया। यह परंपरा औपनिवेशिक काल में भारत पहुंची और यहां की मिट्टी में इस तरह घुल मिल गई कि आज इसे विदेशी कहना कई लोगों को अटपटा लगता है। किंतु यह स्वीकृति अपने आप में एक सांस्कृतिक प्रश्न उठाती है कि क्या हम हर उस चीज को अपना लेते हैं जो बाहर से आती है और क्या हम अपनी परंपराओं के प्रति उतने ही उदार और उत्साही हैं।

हास्य की शक्ति

हास्य की शक्ति को कम करके नहीं आंकना चाहिए। मनोविज्ञान यह प्रमाणित करता है कि हंसी मनुष्य के मानसिक स्वास्थ्य के लिए उतनी ही आवश्यक है जितना शरीर के लिए जल। जो समाज हंस नहीं सकता वह जीवित तो रह सकता है किंतु जीवंत नहीं रह सकता। इस दृष्टि से एक अप्रैल का वह पक्ष निश्चित रूप से स्वीकार्य और आनंददायक है जो लोगों को एक साथ हंसाता है, जो रिश्तों में हल्कापन लाता है और जो जीवन की गंभीरता के बोझ को एक दिन के लिए हल्का कर देता है। किंतु हर सिक्के के दो पहलू होते हैं और एक अप्रैल का दूसरा पहलू उतना निर्दोष नहीं है जितना दिखता है। हास्य जब किसी की गरिमा की कीमत पर आता है तो वह हास्य नहीं रहता। हम यह देखते हैं कि इस दिन का निशाना प्रायः वही बनता है जो कमजोर है, जो नया है, जो सहज विश्वास करने वाला है। दफ्तर में नया आया कर्मचारी, घर का सबसे भोला सदस्य, मोहल्ले का वह व्यक्ति जिसकी सरलता को लोग उसकी कमजोरी समझते हैं। इस पैटर्न में एक सूक्ष्म क्रूरता छिपी है जिसे हम हंसी के शोर में नहीं सुन पाते। भारतीय दर्शन में अतिथि देवो भव का जो भाव है, दूसरे की पीड़ा को अपनी पीड़ा मानने का जो संस्कार है, वह इस प्रकार के हास्य से मेल नहीं खाता। इसलिए हंसी और संवेदनशीलता के बीच का संतुलन बनाए रखना इस दिन की सबसे बड़ी मांग है।

परंपरा से कुछ सीखें

डिजिटल युग ने एक अप्रैल को एक नया और जटिल आयाम दे दिया है। आज इस दिन सोशल मीडिया पर जो होता है वह केवल व्यक्तिगत मजाक तक सीमित नहीं रहता। बड़ी कंपनियां इस दिन को एक विपणन अवसर के रूप में देखती हैं और करोड़ों रुपये की योजनाएं बनाकर उपभोक्ताओं को अपने प्रचार का माध्यम बना लेती हैं। उपभोक्ता यह जानते हुए भी कि वह एक व्यावसायिक खेल का हिस्सा बन रहा है, प्रसन्नतापूर्वक उसमें भाग लेता है। यह आधुनिक उपभोक्तावाद की वह चतुराई है जो मनुष्य की हंसी को भी बाजार की वस्तु बना देती है। इससे भी बड़ी चिंता यह है कि इस दिन जानबूझकर फैलाई गई झूठी सूचनाएं उन लोगों तक भी पहुंचती हैं जो खेल के नियम से परिचित नहीं हैं और जो उन्हें सच मानकर आहत हो जाते हैं। भारत जैसे विशाल और विविध देश में जहां डिजिटल जागरूकता अभी भी असमान है, यह समस्या और गहरी हो जाती है। भारत की अपनी हास्य परंपरा पर एक बार फिर लौटना आवश्यक है, न इसलिए कि हम अतीत में जीएं बल्कि इसलिए कि उस परंपरा से कुछ सीखा जा सके।

वह हंसी अमूल्य है

कबीर के दोहों में जो व्यंग्य था वह समाज की रूढ़ियों पर था, व्यक्ति की कमजोरी पर नहीं। तेनालीराम और बीरबल की बुद्धि राजा की मूर्खता को उजागर करती थी और इस प्रक्रिया में सत्ता से सत्य कहने का साहस था। लोककथाओं का विदूषक वह कहता था जो कोई सभासद नहीं कह सकता था और उसकी हंसी में एक नैतिक संदेश होता था। उस परंपरा में हास्य एक ऐसा अस्त्र था जो समाज को जगाता था, सुलाता नहीं था। यदि हम एक अप्रैल को भी उस भावना से जोड़ सकें तो यह दिन केवल छल का उत्सव नहीं रहेगा, बल्कि एक ऐसे सामूहिक आत्मावलोकन का अवसर बनेगा जिसमें हम खुद पर हंसना सीखें, व्यवस्था की विसंगतियों पर हंसें और उस हंसी से एक बेहतर समाज बनाने की प्रेरणा लें। जो हंसी सबको साथ लेकर चलती है, जो संबंधों को गहरा करती है और जो जीवन की कठिनाइयों के सामने मनुष्य को टिके रहने की शक्ति देती है, वह हंसी अमूल्य है और उसका उत्सव मनाने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए।

देवेन्द्रराज सुथार
यह लेखक के अपने विचार हैं।

सम्पादकीय ...

मनोज कुमार शर्मा

लाल आतंक पर पूर्ण विराम

मोदी सरकार ने 31 मार्च 2026 तक देश को माओवाद से मुक्त करने का वादा किया था। यह तारीख आज एक इतिहास बनने जा रही है, क्योंकि तमाम संकेत यही बताते हैं कि मोदी सरकार ने अपना यह वादा करीब-करीब पूरा कर दिया है। करीब-करीब इसलिए, क्योंकि कोई भी समस्या अंकगणित का सवाल नहीं होती, जिसे हल करके उसका आखिरी जवाब निकाला जा सकता है। माओवाद के रूप में सरकारी तंत्र जिसे वामपंथी उग्रवाद कहता रहा है, दरअसल वह एक ऐसी विचारधारा से प्रेरित है जो मानती आई है कि कि सत्ता की राह बारूद से निकलती है।

कुछ साल पहले तक माओवादी हिंसा का आतंक ऐसा था कि उसके सामने सरकारें लाचार दिखती थीं। दिनदहाड़े रेल पटरियां उड़ा देना, झीरन घाटी में छत्तीसगढ़ कांग्रेस के पूरे नेतृत्व का सफाया, बस्तर में 72 सीआरपीएफ जवानों को उड़ा देना मामूली घटनाएं नहीं कही जा सकतीं। उस दौर में देश के करीब एक तिहाई जिलों तक लाल आतंक का असर था। इस वजह से इन जिलों को आम प्रशासनिक भाषा में लाल गलियारा कहा जाता था। उसके लिए आंध्र के तिरुपति से लेकर नेपाल के पशुपति तक के क्षेत्र को प्रतीक के रूप में रेखांकित तक किया जाता था।

केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने जब मार्च 2026 तक देश को माओवाद से मुक्ति दिलाने की समयसीमा तय की तो इसे लेकर संदेह भी जताए गए, पर केंद्र की दृढ़ इच्छाशक्ति और जीरो टालरेंस वाली नीति के परिणाम सबके सामने हैं। इस सफलता में राज्यों के सहयोग एवं समन्वय को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता। केंद्र और राज्यों के बीच खुफिया जानकारियों को साझा करने के अलावा विभिन्न मोर्चों पर सहयोग ने सुरक्षा बलों को अधिक सक्षम बनाया। इसके जरिये माओवादियों से जुड़ी सटीक सूचनाएं हासिल कर उन्हें सफलतापूर्वक निशाना बनाया गया। इस कार्रवाई ने खूंखार समझे जाने वाले माओवादी नेतृत्व को जहां आत्मसमर्पण के लिए तैयार किया, वहीं नई भर्तियों को हतोत्साहित किया। माओवादियों की मुख्यधारा में वापसी के बाद पुनर्वास के लिए अनुकूल नीतियां भी तैयार कीं। पुनर्वास योजनाओं से भविष्य के प्रति आश्वस्ति भाव ने भी माओवादियों के बड़े पैमाने पर आत्मसमर्पण में अहम भूमिका निभाई।

नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में 2014 के चुनाव में ही भाजपा ने अपने घोषणा पत्र में माओवाद के खात्मे का वादा किया था। सत्ता संभालने के बाद इस दिशा में प्रयास भी आरंभ हुए, लेकिन उसमें निर्णायक तेजी अमित शाह के गृहमंत्री बनने के बाद आई। इसका ही परिणाम रहा कि वामपंथी उग्रवाद से प्रभावित जिलों की संख्या जहां साल 2014 में 126 थी, जो 2025 में घटकर 11 ही रह गई। एक दशक पहले जहां माओवाद से 'सर्वाधिक प्रभावित' जिलों की संख्या 36 थी, वह घटकर केवल तीन रह गई है। वर्ष 2004-14 की तुलना में 2014-24 के दौरान माओवादी हिंसा के मामलों में लगभग 53 प्रतिशत की कमी आई। इस दौरान सुरक्षा कर्मियों की मौतें भी करीब 73 प्रतिशत और आम नागरिकों की मौतों की संख्या में करीब 70 प्रतिशत कमी हुई हैं।

सिर्फ 2024ङ्क25 में ही लगभग 2,900 माओवादियों ने समर्पण किया। जबकि सुरक्षा बलों ने 1,900 से ज्यादा माओवादियों को गिरफ्तार किया। इसी साल सुरक्षा बलों के अभियान में 600 से अधिक माओवादी मारे गए। खूंखार माओवादी रहे 28 शीर्ष नेताओं को भी सुरक्षा बलों ने मार गिराया। इनमें सीपीआइ-माओवादी के महासचिव नंबाला केशव राव उर्फ बसवराजू, इसी पार्टी की केंद्रीय समिति के सदस्य पतिराम मांझी और गणेश उइके जैसे वरिष्ठ नेताओं के नाम शामिल हैं। माना जाता है माओवादी कमांडरों के मारे जाने के बाद कैडर का मनोबल टूट गया। कभी लाल झंडे तले माओवादी शासन स्थापित करने की उम्मीद रखने वाली वैचारिक धारा के समर्थकों को समर्पण में ही भला नजर लगने लगा। सुरक्षा बलों के हाथों माओवादी कमांड नेटवर्क की कमर टूटने के बाद नई भर्तियां बंद हुईं और सक्रिय माओवादियों ने हथियार डाल दिए। कई राज्यों में समूचे माओवादी नेटवर्क का सफाया हो गया। यहां तक कि कभी छत्तीसगढ़ में खुलेआम सुरक्षा बलों और नेताओं को निशाना बना चुका माओवाद भी वहां पूरी तरह पस्त पड़ गया।

राज्य सरकारें भी मानती हैं कि अगर अमित शाह की मजबूत इच्छाशक्ति नहीं होती तो माओवाद के किले को ध्वस्त करना इतना आसान नहीं होता। शाह के नेतृत्व में गृह मंत्रालय ने माओवाद विरोधी कार्रवाई के लिए विशेष तौर पर 'आक्टोपस', 'डबल बुल', 'चक्रबंधा' और 'आपरेशन ब्लैक फारेस्ट' जैसे आपरेशन चलाए। ये आपरेशन मुख्यत- खुफिया जानकारी पर आधारित थे। इससे सुरक्षा बलों ने अपने प्रयास तेज किए और उसके अपेक्षित परिणाम भी सामने आए। मोदी सरकार ने सत्ता संभालते ही माओवाद प्रभावित इलाकों में केंद्रीय सशस्त्र पुलिस बलों के विस्तार की नीति पर चलते हुए सुदूरवर्ती इलाकों और जंगलों में केंद्रीय सुरक्षा बलों की तैनाती पर जोर दिया गया। साथ ही 'समाधान' जैसी नीतियों को केंद्र ने लागू किया।

इसके समानांतर माओवाद प्रभावित इलाकों में विकास का पहिया तेज गति से दौड़ाया गया। इसके तहत माओवाद प्रभावित इलाकों में करीब 12,000 किलोमीटर सड़कों का निर्माण किया गया। इसी तरह इन इलाकों में संचार नेटवर्क को बढ़ाने के लिए 6,500 से ज्यादा मोबाइल टावर लगाए गए। आर्थिक गतिविधियों को तेज करने के लिए बैंकों की 1,800 से अधिक शाखाएं स्थापित की गईं। हजारों एक्सेस पाइंट्स के जरिये बैंकिंग इन्फ्रास्ट्रक्चर का विस्तार भी किया गया। इसके लिए केंद्रीय स्तर पर सुरक्षा संबंधी व्यय खर्च, विशेष केंद्रीय सहायता, विशेष इन्फ्रास्ट्रक्चर योजना, नागरिक कार्यक्रम, मीडिया योजना, सड़क जरूरत योजना और सड़क कनेक्टिविटी परियोजना जैसी योजनाएं लागू करने में तेजी लाई गईं। इस क्रम को इसी प्रकार जारी रखना होगा, क्योंकि यदि जरा भी ढील मिली तो यह चुनौती फिर से खड़ी हो सकती है। याद रहे कि विचारधाराओं की एक विशेषता यह भी है कि उनके अनुयायी कम तो हो सकते हैं, लेकिन वे कभी मरती नहीं।

विकसित उत्तर प्रदेश की नई पहचान बनेगा जेवर एयरपोर्ट

एयरपोर्ट में आईएलएस कैट -3 सिस्टम है जिससे घने कोहरे में भी विमान आसानी से उतर सकेंगे। इस एयरपोर्ट में अत्याधिुनक तकनीक का उपयोग किया गया है जिसमें यात्रियों के लिए डिजी लॉकर आधारित बायोमैट्रिक चेक इन फेस स्कैन से प्रवेश और एआई आधारित सुरक्षा होगी। यहां 3900 मीटर लंबा रन-वे होगा जो बड़े विमानों का संचालन कर सकेगा।

उत्तर प्रदेश में अगले साल होने वाले विधानसभा चुनाव से पूर्व विकास योजनाओं के लोकार्पण की लहर चल रही है। इसी क्रम में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 28 मार्च को जेवर अंतरराष्ट्रीय एयरपोर्ट (नोएडा अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डा) राष्ट्र को समर्पित किया। यह एयरपोर्ट आधुनिकतम सुविधाओं का अद्भुत संगम होगा। यहां से पहली उड़ान उत्तर प्रदेश सरकार के विमान ने भरी, जिसमें प्रदेश की राज्यपाल आनंदी बेन पटेल और मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ यात्री बने। इस एयरपोर्ट से चार सप्ताह बाद यात्रियों के लिए नियमित उड़ानें प्रारंभ हो जाएंगी। नोएडा में अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे की स्थापना का प्रस्ताव 2001 में प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री व वर्तमान रक्षामंत्री राजनाथ सिंह ने रखा था किंतु निहित राजनीतिक कारणों से यह अधर में लटका रहा। इस प्रकार इस परियोजना के प्रथम चरण के ही पूर्ण होने में 25 वर्ष लग गए, जिस कारण उत्तर प्रदेश के साथ साथ दिल्ली-एनसीआर क्षेत्र का विकास भी अटका रहा।

जेवर एयरपोर्ट के लोकार्पण के अवसर पर प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि नोएडा एयरपोर्ट के साथ ही विकसित यूपी और विकसित भारत अभियान का एक नया अध्याय शुरू हो गया है। यूपी अब देश के सबसे अधिक अंतरराष्ट्रीय एयरपोर्ट वाले राज्यों में से एक हो गया है। महत्वपूर्ण बात यह है कि जेवर एयरपोर्ट के लोकार्पण के पूर्व ही केंद्र सरकार ने उड़ान 2.0 योजना को मंजूरी प्रदान की है जिसके अंतर्गत 100 नए एयरपोर्ट व 200 नये हेलीपैड बनेंगे जिसके लिए 29,000 करोड़ रुपए स्वीकृत किये गये हैं। इससे युवाओं के लिए रोजगार के नए अवसर भी खुलेंगे। प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व वाली सरकार का सपना है कि हवाई चप्पल वाले भी हवाई यात्रा का सुगम आनंद ले सकें और उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार उड़ान 1.0 योजना में 1.6 करोड़ लोगों ने हवाई यात्रा की है।प्रधानमंत्री ने कहा कि विकसित भारत के लिए सबका प्रयास जरूरी है इस परियोजना के लिए किसानों ने भी अपनी जमीन दी है।आधुनिक कनेक्टिविटी का जो विस्तार हो रहा है उसे पश्चिम यूपी में फूड प्रोसेसिंग को बल मिलेगा और यहां के कृषि उत्पाद दुनिया के बाजारों में और बेहतर तरीके से पहुंच सकेंगे।

जेवर एयरपोर्ट की अहम विशेषताएं: जेवर एयरपोर्ट एशिया का सबसे बड़ा एयरपोर्ट होगा तथा प्रथम चरण में ही यह 1.2 करोड़ यात्रियों को एक रन-वे से सेवा प्रदान करने की क्षमता रखता है। यह देश का पहला ग्रीनफील्ड एयरपोर्ट होगा जो सौर ऊर्जा का उपयोग करेगा और कार्बन उत्सर्जन को कम करेगा। इस एयरपोर्ट में आगामी चरणों में 5 रन-वे का निर्माण होने के बाद यात्री क्षमता बढ़कर 22.5 करोड़ यात्री प्रतिवर्ष हो जाएगी। यह एयरपोर्ट पूरी तरह से डिजी यात्रा ऐप के माध्यम से चलेगा।

एयरपोर्ट में आईएलएस कैट -3 सिस्टम है जिससे घने कोहरे में भी विमान आसानी से उतर सकेंगे। इस एयरपोर्ट में अत्याधिुनक तकनीक का उपयोग किया गया है जिसमें यात्रियों के लिए डिजी लॉकर आधारित बायोमैट्रिक चेक इन फेस स्कैन से प्रवेश और एआई आधारित सुरक्षा होगी। यहां 3900 मीटर लंबा रन-वे होगा जो बड़े विमानों का संचालन कर सकेगा। यह यमुना एक्सप्रेस वे से सीधा जुड़ा है और इसे मेट्रो रेल और प्रस्तावित रैपिड रेल से जोड़ने की योजना है। यहां यात्रियों के लिए प्रवेश से लेकर बोर्डिंग गेट तक पहुंचने की प्रक्रिया बहुत तेज होगी जो लगभग 20 मिनट में पूरी हो सकती है। यहां पर 30 एकड़ में कार्गो टर्मिनल का भी निर्माण किया गया है जिस पर 800 करोड़ रुपये की लागत आई है तथा 48 चेक इन प्वाइंट बनाए गए हैं। यहां की मल्टीमाइल कार्गो सुविधा की क्षमता आरम्भ में 2.5 लाख मीटिक टन माल की ढुलाई की है ,जिसे बढ़ाकर 18 लाख मीट्रिक टन किया जा सकता है। यहां पर 57 एकड़ में 700 करोड़ की लागत से वेयर हाउस एवं लॉजिस्टिक सुविधा विकसित की गई है। इस एयरपोर्ट के प्रथम चरण के निर्माण में 11200 करोड़ की लागत आई है।

इस एयरपोर्ट के निर्माण व संचालन के बाद दिल्ली- एनसीआर, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, हरियाणा, मध्य प्रदेश (ग्वालियर - मुरैना), राजस्थान (धौलपर -भरतपुर) के हिस्सों को मिलाकर करीब सात करोड़ आबादी को सीधा लाभ मिलने जा रहा है। इस एयरपोर्ट के कारण जेवर एयरोट्रोपोलिस सिटी के रूप में चमकेगा। गौतमबुद्ध नगर और आसापास के जिलों के बीच क्षेत्रीय जुड़ाव और विकास होगा। इनके उत्पाद और सेवाओ के समक्ष आने वाली चुनौतियां भी कम होंगी। यह एयरपोर्ट पूर्ण हो जाने के बाद शहर में तमाम होटल व कार्यालय, शापिंग मॉल, लॉजिस्टिक हब आदि का निर्माण भी तीव्र गति से होने जा रहा है। शहर भर में अगली पीढ़ी वाली सुविधाएं विकसित होंगी।

यह एयरपोर्ट केवल रन-वे नहीं प्रदेश की अर्थव्यवस्था को नई ऊंचाई देने का आधार बनेगा। यह एयरपोर्ट प्रदेश के उज्ज्वल भविष्य का आधार बनेगा क्योंकि यह उत्तर भारत के विदेश व्यापार व औद्योगिक विकास को नई ऊंचाई तक पहुंचाते हुए व्यापक रोजगार का भी सृजन करेगा। यह एयरपोर्ट पश्चिमी यूपी के किसानों, छोटे और लघु उद्योगों युवाओं के लिए भी नए अवसर लेकर आने वाला है।

जनगणना का शुभारंभ

अंततः 2021 में होने वाली जनगणना अब शुरू होने जा रही है। गोपनीयता के नए नियमों के साथ यह देश की पहली डिजिटल जनगणना होगी। इसके साथ ही एक विशेषता यह भी है कि पहली बार इसे दो चरणों में पूरा किया जाएगा। डिजिटल जनगणना का विशेष महत्व इसलिए और है, क्योंकि यह संसाधनों के साथ समय की भी बचत करेगी।

डिजिटल जनगणना पारंपरिक कागज-पत्रों के स्थान पर मोबाइल एप, वेब पोर्टल और वास्तविक समय की निगरानी का उपयोग करके की जाएगी। इससे एक तो जनगणना का विवरण तेजी के साथ एकत्रित होगा और दूसरे त्रुटियों को भी कम करने में सहायता मिलेगी। डिजिटल जनगणना होने के कारण ब्योरा सीधे सर्वर पर पहुंचेगा, जिससे प्रक्रिया कहीं अधिक तेज एवं सटीक होगी।

इस जनगणना की एक खासियत यह भी होगी कि लोग अपनी जानकारी स्वयं दर्ज कर सकेंगे। लोगों को यह काम नीर-क्षीर ढंग से करना होगा, क्योंकि जनगणना आयुक्त ने स्पष्ट किया है कि जनगणना के दौरान जुटाए गए विवरण को पूरी तरह गोपनीय रखा जाएगा।

स्वतंत्रता के बाद होने जा रही आठवीं जनगणना की महत्ता केवल इसलिए नहीं है कि यह डिजिटल रूप में होगी, बल्कि इसलिए भी है कि स्वतंत्र भारत में पहली बार जातियों का विवरण भी एकत्र किया जाएगा।

स्पष्ट है कि इस जनगणना के माध्यम से देश की सामाजिक-आर्थिक एवं जातीय स्थिति की अपेक्षाकृत अधिक परिपूर्ण तस्वीर सामने आएगी, लेकिन इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि जातीय जनगणना एक ओर जहां विभिन्न जातियों के संख्याबल को सामने रखेगी, वहीं दूसरी ओर कई धारणाओं को ध्वस्त करने का भी काम करेगी, क्योंकि अलग-अलग जातीय समूहों ने अपने संख्याबल अथवा अपनी आर्थिक-सामाजिक स्थिति को लेकर अलग-अलग दावे कर रखे हैं।

इन दावों पर पूरी तरह इसलिए भरोसा नहीं किया जा सकता, क्योंकि देश में 1931 के बाद जातिगत जनगणना हुई ही नहीं। यह मानना सही नहीं होगा कि जातियों की जो संख्या और स्थिति करीब सौ वर्ष पहले थी, वह आज भी है। एक दृष्टि से यह अच्छा ही है कि जनगणना के साथ ही जातियों का ब्योरा भी सामने आ जाएगा, लेकिन इसकी आशंका भी है कि इस ब्योरे के आधार पर कहीं जातिवाद की राजनीति बेलगाम न हो जाए। यदि ऐसा हुआ तो यह अच्छा नहीं होगा।

इसलिए नहीं होगा, क्योंकि जातिवादी राजनीति विभाजन और वैमनस्य को जन्म देती है। उचित यह होगा कि सरकार ऐसे उपाय करे जिससे जातिगत जनगणना का इस्तेमाल जातिवाद और साथ ही वोट बैंक बनाने वाली आरक्षण की स्वार्थी राजनीति के तौर पर न किया जा सके। यह समझने की जरूरत है कि जनगणना का उद्देश्य किसी के भी संकीर्ण राजनीतिक हितों की पूर्ति के लिए नहीं, बल्कि शासन की नीतियों को प्रभावशाली तरीके से बनाने और उन्हें लागू करने के लिए होता है।

पहचान के संकट से जूझते समुदाय

डॉ. स्मिता

हम प्रायः समाज को कोटियों यानी वर्गों या श्रेणियों में बांटकर देखने के आदी हो गए हैं। दलित, जनजाति, सवर्ण, हिंदू, मुस्लिम जैसी अनेक कोटियां समाज को देखने के हमारे नजरिये पर हावी रहती हैं। हम अक्सर समाज को इन्हीं स्थिर वर्गों के माध्यम से समझने की कोशिश करते हैं और मान लेते हैं कि सामाजिक वास्तविकता इन्हीं सीमाओं के भीतर पूरी तरह समाहित हो जाती है, लेकिन हम यह नहीं सोचते कि इन कोटियों के बीच भी अनेक ऐसे सामाजिक समूह मौजूद हो सकते हैं, जो इन निर्धारित श्रेणियों में पूरी तरह समाहित नहीं होते। हम यह भी समझना नहीं चाहते कि ये कोटियां हमेशा कठोर और स्थायी नहीं होतीं, बल्कि कई बार लचीली और परिवर्तनशील भी होती हैं। सामाजिक जीवन की जटिलता कई बार इन कोटियों की सीमाओं को चुनौती देती है।

वास्तव में समाज की संरचना इतनी सरल नहीं होती कि उसे केवल कुछ तयशुदा श्रेणियों में पूरी तरह समझ लिया जाए। दलित एवं जनजाति दो ऐसी कोटियां हैं, जिन्हें हमारी राजनीति और प्रशासनिक व्यवस्था ने विशेष रूप से निर्मित किया है। औपनिवेशिक जनगणना के दौरान पहली बार अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की कोटियां बनाकर अनेक विविध सामाजिक समूहों को उनमें सम्मिलित कर दिया गया। औपनिवेशिक शासन की रणनीति समाज को अलग-अलग वर्गों में बांटकर शासन को सरल बनाना और कई बार विभाजन की रेखाएं खींचना भी था। इसके परिणामस्वरूप कई ऐसे

समुदाय बने रहे, जो इन श्रेणियों में रखे जाने के बावजूद अपनी सांस्कृतिक पहचान को अलग ढंग से समझते एवं विश्लेषित करते रहे।

उदाहरण के लिए, कई दलित जातियां दलित कोटि में दर्ज होने के बावजूद अपने आपको जनजातीय विशेषताओं से युक्त मानती रही हैं। उत्तर प्रदेश और बिहार में रहने वाले मुसहर समुदाय को प्रशासनिक रूप से दलित कोटि में दर्ज किया गया है, किंतु अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक आत्मछवि में वे अपने आपको कई जनजातीय विशेषताओं से युक्त मानते हैं। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के कई क्षेत्रों में कोल और खरवार जैसे समुदायों को प्रशासनिक दृष्टि से अनुसूचित जाति में रखा गया है, जिन्हें कई स्थानों पर जनजातीय माना जाता है। उनके दैनिक जीवन, कर्मकांड, पूजा-पद्धति और सांस्कृतिक व्यवहार में वैसे जनजातीय संस्कृति की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। यह स्थिति दर्शाती है कि सामाजिक वास्तविकता प्रशासनिक वर्गीकरण से कहीं अधिक जटिल और बहुआयामी होती है।

इन दोनों कोटियों के बीच भी कई ऐसे सामाजिक समूह मौजूद हैं, जो न पूरी तरह इधर के हैं और न पूरी तरह उधर के। वे सामाजिक संरचना में एक प्रकार की मध्यवर्ती स्थिति में रहते हैं। ऐसे समूहों को सिद्धांतकार 'बीच के समूह', 'बीच की अस्मिता वाले समुदाय' अथवा 'लिमिनल आइडेंटिटी' वाले समूह कहते हैं। ये समुदाय समाज की मुख्यधारा में होते हुए भी कई बार पहचान और अधिकार के स्तर पर अस्पष्ट स्थिति में रहते हैं। उत्तर प्रदेश में ऐसा ही एक समूह है-वनटांगिया समुदाय, जो मुख्यत: महाराजगंज एवं गोरखपुर क्षेत्र के जंगलों में बसता है। इनका मुख्य कार्य जंगलों में विशेष पद्धति से साखू के पेड़ लगाना था। यह स्पष्ट नहीं है कि ये समुदाय कब और कैसे इस क्षेत्र में आए, परंतु इतना निश्चित है कि अंग्रेजी शासन के समय से ही ये इस कार्य से जुड़े रहे हैं।

लंबे समय तक यह समुदाय प्रशासनिक और सामाजिक दृष्टि से उपेक्षित रहा है। लंबे समय तक उनकी जमीन भी उनकी अपनी नहीं थी। जिन बस्तियों में वे रहते थे, उन्हें वैध मान्यता प्राप्त नहीं थी। उन्हें मतदान का अधिकार भी प्राप्त नहीं था और न ही सरकारी योजनाओं का लाभ व्यवस्थित रूप से मिल पाता था। जब किसी समुदाय की पहचान और निवास का वैध आधार ही न हो, तब विकास की योजनाएं भी उन तक पहुंच नहीं पातीं। योगी आदित्यनाथ ने संसद से सड़क तक लड़ाई लड़ी तब वनटांगिया गांवों को राजस्व ग्राम का दर्जा मिला और उन्हें मतदान का अधिकार प्राप्त हुआ। फिर सरकारी आवास योजनाएं, पेंशन, स्वास्थ्य सुविधाएं और अन्य कल्याणकारी नीतियां उन तक पहुंचने लगीं। इस प्रकार वे धीरे-धीरे विकास की धारा से जुड़ सके और उन्हें लोकतांत्रिक सम्मान भी प्राप्त होने लगा। वास्तव में समाज में ऐसे कई समूह हैं, जो दो स्थापित कोटियों के बीच स्थित हैं और जिनकी पहचान पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पाई है। किसी भी संवेदनशील प्रशासन का नैतिक दायित्व है कि ऐसे उपेक्षित और भटके हुए समुदायों की पहचान करे और उन्हें विकास की मुख्यधारा से जोड़े। इसके लिए आवश्यक है कि हम केवल बनी-बनाई कोटियों के दबाव में न रहें, बल्कि नए सामाजिक अनुसंधानों और अध्ययन के माध्यम से समाज की जटिल वास्तविकताओं को समझने का प्रयास करें।

अगर व्यक्ति में गलतियों को स्वीकार करने के साहस है तो गलतियां हमेशा क्षम्य हैं।

- ब्रूस ली

विराट वैभव 06
नई दिल्ली, बुधवार, 01 अप्रैल 2026

अलविदा नक्सलवाद

भारत में एक विचारधारा लगभग समाप्तप्राय

देश के छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा, बिहार और आंध्र प्रदेश के आदिवासी बहुल क्षेत्रों में नक्सल गतिविधियों ने न केवल विकास को अवरुद्ध किया, बल्कि हजारों निर्दोष नागरिकों और सुरक्षाकर्मियों की जानें भी लीं। नक्सलवाद की जड़ें सामाजिक-आर्थिक असमानता, उपेक्षा और शोषण में रही हैं, लेकिन समय के साथ यह आंदोलन अपने मूल उद्देश्यों से भटककर एक हिंसक और विध्वंसकारी विचारधारा में बदल गया। भारत सरकार द्वारा 31 मार्च 2026 तक देश को नक्सलवाद से मुक्त करने का जो लक्ष्य निर्धारित किया गया था, वह अब लगभग अपनी अंतिम अवस्था में पहुंच गया है। पिछले एक दशक में 10,000 से अधिक माओवादियों के आत्मसमर्पण, सुरक्षा बलों की आक्रामक एवं रणनीतिक कार्रवाई तथा प्रभावित क्षेत्रों में तेज़ी से हुए विकास कार्यों ने माओवादी आंदोलन की जड़ों को कमजोर कर दिया है। निश्चित ही प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में केंद्र सरकार ने इस समस्या के समाधान के लिए बहुआयामी और दृढ़ रणनीति अपनाई। गृहमंत्री अमित शाह की सूझबूझ और स्पष्ट दृष्टिकोण ने इस अभियान को एक नई दिशा दी। सरकार ने एक ओर जहां सुरक्षा बलों को आधुनिक तकनीक, बेहतर प्रशिक्षण और संसाधनों से सशक्त किया, वहीं दूसरी ओर विकास योजनाओं को भी गति दी। 'सुरक्षा और विकास' के इस दोहरे दृष्टिकोण ने माओवादी प्रभाव वाले क्षेत्रों में सकारात्मक परिवर्तन की नींव रखी। पिछले कुछ वर्षों में सुरक्षाबलों द्वारा चलाए गए सघन अभियानों ने माओवादी नेटवर्क को गहराई से कमजोर किया है। बस्तर, जो कभी माओवादियों का सबसे मजबूत गढ़ माना जाता था, वहां आज आत्मसमर्पण की घटनाएं बढ़ रही हैं। पापा राव जैसे शीर्ष माओवादी नेता का आत्मसमर्पण इस बात का संकेत है कि माओवादी संगठन अब अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं। यह केवल एक व्यक्ति का आत्मसमर्पण नहीं, बल्कि एक विचारधारा के पतन का प्रतीक है।

> निश्चित ही प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में केंद्र सरकार ने इस समस्या के समाधान के लिए बहुआयामी और दृढ़ रणनीति अपनाई। गृहमंत्री अमित शाह की सूझबूझ और स्पष्ट दृष्टिकोण ने इस अभियान को एक नई दिशा दी। सरकार ने एक ओर जहां सुरक्षा बलों को आधुनिक तकनीक, बेहतर प्रशिक्षण और संसाधनों से सशक्त किया, वहीं दूसरी ओर विकास योजनाओं को भी गति दी।

वैदिक विचार —स्वामी विद्यानंद 'विदेह'

अमरत्व का अमर संदेश

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम्।
अपों क्रतो स्मर। क्लिबे स्मर। कृतं स्मर।

यहां नितान्त वा एकान्त नाम का कोई जगत् नहीं। यहां तो जगती में जगत् है, छिलकों के अन्दर छिलके हैं। गूलर के एक एक फल में एक एक जगत् है। वृक्ष की एक एक शखा में एक एक जगत् निवास कर रहा है। प्राणी प्राणी में प्राणी बसेरा ले रहे हैं। एक एक सौर मण्डल में अनेकानेक मण्डल हैं। जगती में जगत् है। और, इस समस्त दृश्य और अदृश्य जगत् का एक स्वामी है, और वह इस सबमें समाया हुआ है, व्यापक है, रमरहा है। जगदीश जगत् से पृथक, कहीं दूर नहीं है, जगत् के अन्दर, बाहर, सर्वत्र विद्यमान है। सृष्टि का स्वामी सर्वत्र अधिष्ठातृत्व कर रहा यह जगत् उस जगदीश का ही है, तेरा नहीं। तेरे पास जो कुछ हैं वह सब उसी जगदीश का है। तेरा कुछ, नहीं, सब उसी का है। मेरा यहां कुछ भी नहीं तो क्या मैं किसी भी पदार्थ का उपभोग न करूं ? यह कैसे हो सकता है। भोग तो शरीर का धर्म है, प्रकृति का नियम है। भोगों का सर्वथा त्याग तो सम्भव ही नहीं। भोग, पर अनासक्त होकर भोग। ममत्व के साथ भोग मत कर क्यों कि यह जगत् और इस जगत् में जो कुछ है वह सब तेरा नहीं है, उस जगत्पति का है। जब तुझे ममता वा आसक्ति आदबाए तो अपने अपासे प्रश्न कर, 'भोग, धन, जगत् का वैभव है किसका?' उत्तर मिलेगर, 'मेरा नहीं है, जगदीश्वर का है यह सब।' तो फिर आसक्ति कैसी और ममता क्यों? अतः त्यागभाव से भोग ।

आज का विचार —डॉ. विनोद दीक्षित

मुक्त भाव से कर्म करें

मानव जीवन विविध भावों, विविध कर्मों से समन्वित है। सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन से जुड़कर व्यक्ति स्वयं को भूल जाता है। इसका मुख्य कारण आत्मबोध के प्रति हमारी दृष्टि रहती ही नहीं है। हम शरीर, मन और बुद्धि के सहारे अपनी समस्त आयु में केवल भोग को ही महत्व देते हैं और भोगी जीवन जी कर इस संसार से चले जाते हैं। इससे व्यक्ति भौतिकवादी हो जाता है और आत्मा के विषय में चिंतन रहता ही नहीं। वह समष्टि भाव को छोड़कर व्यष्टि भाव में ही लीन हो जाते है। अपने हृदय में अवस्थित ईश्वर के प्रति उसका जुड़ाव हो ही नहीं पता है।

पत्र मिला

भारत-अमरीका व्यापार समझौते की अहमियत

भारत और अमरीका के बीच प्रस्तावित द्विपक्षीय व्यापार समझौता (2026) ऐसे समय में उभरकर सामने आया है, जब भारत एक ओर वैश्विक अर्थव्यवस्था में अपनी भागीदारी को विस्तार देने की दिशा में अग्रसर है, वहीं दूसरी ओर अपनी कृषि-आधारित सामाजिक-आर्थिक संरचना की रक्षा करने की अनिवार्य चुनौती का सामना कर रहा है।फरवरी 2026 में घोषित अंतरिम रूपरेखा ने जहां भारतीय निर्यातकों के लिए अमरीकी बाजार में नए अवसरों के द्वार खोले हैं, वहीं सस्ते अमरीकी कृषि उत्पादों के संभावित आयात ने देश के करोड़ों किसानों के बीच चिंता और असुरक्षा की भावना पैदा कर दी है। भारत को ऐसा समझौता करना चाहिए जिससे व्यापार संतुलन ठीक हो जाए।

–डा. प्रियंका सौरभ, हिसार

समस्त विवादों के लिए न्यायिक क्षेत्र नई दिल्ली होगा। प्रकाशित सामग्री या विज्ञापन से संपादक/प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं। इससे संबंधित किसी भी प्रकार की कार्रवाई या पूछताछ प्रकाशन तिथि से तीन माह के अंदर की जा सकती है।

संपादक,
विराट वैभव द्वितीय तल,
नेहरू हाउस, 4 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002
आप हमें ई-मेल भी कर सकते हैं
E-mail : vaibhav.viraat@gmail.com

लॉक डाउन : सियासी शोशेबाजी या 'पब्लिक टेस्टिंग'?

अजय बोकिल
लेखक वरिष्ठ राजनीतिक विश्लेषक हैं।

उधर पश्चिम एशिया में ईरान-अमेरिका-इजराइल युद्ध अपने दूसरे दौर में प्रवेश कर रहा है तो इधर भारत में राजनीतिक शोशों और लोगों में डर पैदा करने की नई मिसाइलें चल रही हैं। इसका ताजा उदाहरण वैश्विक ऊर्जा संकट के चलते भारत भर में लॉक डाउन लगने की आशंका का है। सरकार का कहना है कि यह सिर्फ अफवाह है, ऐसे किसी विचार पर बात नहीं हो रही है। दूसरी तरफ विपक्षी दलों का तर्क यह है कि इस बार कोई घातक वायरस भले न हो, लेकिन ईंधन का गंभीर संकट समूची आर्थिकी को लकवाग्रस्त कर देगा। यानी पर्याप्त ईंधन ही नहीं होगा तो सारी गति?विधियां खुद-ब-खुद ठप हो जाएंगी। देश में अघोषित लॉक डाउन लग जाएगा। इस संदर्भ में सरकार की सफाई है कि ऐसा कुछ नहीं होने वाला। ईंधन की आपूर्ति बनाए रखने की हर संभव कोशिश की जा रही है। कुछ विपक्षी नेता एक काल्पनिक आशंका को हकीकत से जोड़ने पर आमादा हैं। हालांकि जो आम लोग वास्तव में परेशान हैं, उनकी चिंता सिर्फ इतनी है कि ईंधन की सुलभता वाले दिन कब लौटेंगे। याद करें वही 'लॉक डाउन,' जो देश में कोरोना प्रकोप के दौरान लगा था और जिसकी याद कर आज भी लोग सिहर उठते हैं। 'लॉक डाउन' ऐसी भौतिक और मानसिक स्थिति है, जिसमें लगभग सब कुछ थम जाता है, सिवाय इंसान की सांसों के। यानी संचार बंद, सामाजिक संवाद बंद, कार्यस्थलों पर कामकाज बंद, सामूहिक गतिविधियां बंद। एक जबरन थोपा गया एकांतिक जीवन, जिसे जिंदा रहने के लिए जरूरी माना गया हो। तब लॉक डाउन दो चरणों में लगा था और पहले दौर ने लोगों की रोजी-रोटी तक छीन ली थी। हालांकि दूसरे, दौर में सरकार ने कुछ आर्थिक गतिविधियों को छूट दी थी।

बहरहाल, ईरान-इजराइल-अमेरिका युद्ध में यूं तो भारत की कोई प्रत्यक्ष भूमिका नहीं है, लेकिन हम उसकी आंच में तेजी से झुलस रहे हैं। इसमें हमारा रोल कुल इतना है कि हम सबसे संपर्क में हैं और किसी तरह अपने जहाज निकलवाने की कोशिश कर रहे हैं। परंतु जंग से हमारे आयात के साथ निर्यात पर भी बुरा असर पड़ रहा है। युद्ध लंबा चला तो हालात और भी बदतर हो सकते हैं। तो क्या इसी आशंका के चलते 'लॉक डाउन' का शिगूफा छोड़ा गया है? सवाल यह भी है कि लोगों से सचेत रहने की सरकारी चेतावनियों के बीच 'लॉक डाउन' की बात आई कहां से, इसे हवा देने के पीछे मकसद क्या है, क्या ऐसी परिस्थितियां बन गई हैं कि कोरोना काल की तरह फिर लॉकडाउन लगाया जाए? और सच में लगे तो इससे देश का कितना नुकसान होगा? यदि लॉक डाउन की बात केवल सियासी शोशेबाजी है तो फिर इसका सियासी लाभ किसके खाते

में जा सकता है, साथ में यह भी कि क्या ऐसा करना देश विरोधी नहीं है?

केवल युद्ध के कारण किसी देश में लॉक डाउन लगा हो, ऐसा कोई उदाहरण सामने नहीं है, उन देशों में भी नहीं, जो सीधे युद्धों में उलझे हैं। लॉक डाउन असाधारण आपात सामाजिक-आर्थिक स्थिति है, जब संचार पर पूरी तरह ताले पड़ जाते हैं और दूरियां रखने को ही जिंदा रहने की गारंटी मान लिया जाता है। आज से 6 साल पहले समूची दनिया में एक नए और खतरनाक वायरस कोरोना महामारी के कारण ऐसी स्थिति बनी थी। कोविड 19 वायरस मानव स्पर्श से फैलता था और फेफड़ों पर हमला कर व्यक्ति की जान ले लेता था। लिहाजा आइसोलेशन ही बचने का एकमात्र सॉल्यूशन माना गया। एक विचित्र स्थिति पैदा हुई, जब 'सामाजिक प्राणी' कहलाने वाले मनुष्य को ज्यादा से असामाजिक होने पर विवश किया गया। लेकिन आज तो वैसी स्थिति नहीं है।

याद रहे कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने देश में कोरोना वायरस के प्रकोप के चलते 24 मार्च 2020 की रात आठ बजे कोरोना प्रकोप के कारण पूरे देश में 21 दिन के लॉक डाउन का ऐलान किया था। उन्होंने कहा था कि लोग यह भूल जाएं कि घर से बाहर निकलना क्या होता है। तब तक देश में कोरोना वायरस के 519 मामलों की पुष्टि हो चुकी थी और नौ लोगों की मौत भी हो चुकी थी। संयोग से इस घटनाक्रम के एक माह पहले ही तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप भारत आए थे। और अब ईरान-अमेरिका युद्ध के केन्द्र में भी वो और नेतन्याहू हैं।

दरअसल लॉक डाउन का यह ताजा 'वायरस' हाल में रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन के उस बयान के बाद फैला, जिसमें उन्होंने मास्को में उद्योगपतियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि ईरान-इजरायल युद्ध के कारण दुनिया भर में आर्थिक मंदी और कोरोना जैसी स्थिति जैसे-ईंधन की कमी पैदा होने का अंदेशा है। जिसके परिणाम कोरोना महामारी की तरह हो सकते हैं। उन्होंने साफ तौर पर लॉकडाउन शब्द का इस्तेमाल नहीं किया। लेकिन पुतिन का इतना चेताना भी भारत में चुनावी चूल्हे में आग फूंकने के लिए काफी था। चुनावग्रस्त पश्चिम बंगाल में मुख्यमंत्री ममता बैनर्जी ने तत्काल इसे तत्काल उछालते हुए कहा कि देश में केन्द्र सरकार देश में लॉकडाउन लगा सकती है और लोग घरों में बंद हो सकते हैं। इसी संदर्भ में 2021 के विधानसभा चुनाव की याद दिलाते हुए ममता ने कहा कि कोविड महामारी के बावजूद उनकी पार्टी ने सभी पाबंदियों के बावजूद चुनाव लड़ा था और भारी बहुमत से जीती। पार्टी अब किसी भी परिस्थिति में फिर से तैयार रहेगी। इसमे यह संदेश छुपा था कि अगर लॉक डाउन लगा तो यह टीएमसी के फायदे में ही होगा। यानी यहां लॉक डाउन की आशंका से ज्यादा उसकी चाहत है। ममता के बयान को कुछ दूसरे विपक्षी नेताओं ने और सुलगाने की कोशिश की और बतौर सबूत पेट्रोल पंपों पर और गैस एजेंसियों पर लगी लोगों की लंबी लाइनों की तस्वीरे सोशल मीडिया पर साझा की जाने लगीं। ममता तो अब यह भी कह रही हैं कि उनकी जान लेने की साजिश की जा रही है।

यहां कॉमन बात यह है कि प्रधानमंत्री ने भी अपने भाषण में कोविड संकट का जिक्र किया और ममता बैनर्जी ने भी कोविड लॉक डाउन का हॉरर सीन रिक्रिएट करने की कोशिश की। यह संयोग है या फिर एक भावी गंभीर संकट की 'पब्लिक टेस्टिंग?' यही सवाल आज लोगों के मन को मथ रहा है। हालांकि संकेतों में कही गई बात को लोगों ने देश की भाग्य रेखाओं से जोड़ दिया तो सोशल मीडिया पर कई लोगों ने इसका मजाक भी बनाया। अलबत्ता कोविड और पश्चिम एशिया के भू-राजनीतिक संकट में एक समानता है, वो ये कि दोनो के कारण वैश्विक अर्थव्यवस्था बुरी तरह हिट होगी। इसकी शुरुआत हो भी चुकी है, क्योंकि युद्धआ की समाप्ति के कोई लक्षण अभी दिखाई नहीं दे रहे हैं।

भारत की राजनीतिक शतरंज में एक मुद्दा और उछल रहा है, वो है इस वैश्विक संकट में भारत द्वारा मध्यस्थता का। कहा जा रहा है कि चूंकि भारत के युद्ध से सम्बन्धित सभी देशों से अच्छे रिश्ते हैं, इसलिए हमे सभी पक्षों के बीच सुलह के लिए मध्येस्थता करनी चाहिए। बात सही है। लेकिन कोई भी मध्यस्थता तभी सफल होती है, जब सम्बन्धित पक्षों का उस पर विश्वास हो। साथ ही सभी पक्ष अपने रूख को लेकर स्पष्ट और ईमानदार हों। अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप के नितांत अगंभीर, अस्थिर और अविश्वसनीअय रवैये के चलते कौन-सा देश (पाकिस्तान को छोड़ दीजिए, उसकी अपनी मजबूरियां हैं) मध्यस्थ बनने का जोखिम लेगा? दूसरे, अपने देश में अफवाहों पर 'लॉक डाउन' कौन लगाना चाहता है, क्योंकि इसके मंडन और खंडन के भी अपने सियासी फायदे हैं, जो राजनीतिक दलों की नजर में देशहित से ज्यादा जरूरी हैं।

किसने क्या कहा

तेल संकट के जल्द से जल्द समाधान के लिए भारत-रूस के बीच बातचीत जारी :रूस के राजदूत डेनिस अलीपोव

अजित पवार के सपनों की एनसीपी का नेतृत्व करना एक सामूहिक कर्तव्य : सुनील तटकरे

पीएम मोदी ने असम को मजबूती से जोड़ा, कोई तोड़ नहीं सकता :सीएम देवेंद्र फडणवीस

ईरान के खिलाफ जमीनी हमला कर सकते हैं, मिशन तो हमारी शर्तों पर ही होगा खत्म :अमेरिकी रक्षा मंत्री पीट हेगसेथ

कार्टून

भीतरी खालीपन पर जीत : ख़ुशी की ओर राह

डॉ. राजेश के पिलानिया
प्रोफेसर, मैनेजमेंट डेवलपमेंट इंस्टीट्यूट, गुरुग्राम

ख़ुशी जीवन की कई समस्याओं से निपटने और अधिक बेहतर तथा संतोषपूर्ण जीवन जीने का एक प्रभावी माध्यम है। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने वर्ष 2012 में अंतरराष्ट्रीय खुशी दिवस की स्थापना की थी, ताकि लोगों के जीवन और सार्वजनिक नीतियों में खुशी और कल्याण के महत्व को एक सार्वभौमिक लक्ष्य के रूप में मान्यता दी जा सके।

हालांकि हर व्यक्ति खुश रहना चाहता है, लेकिन दुनिया में ऐसी कई परिस्थितियां हैं जो लोगों को दुख और खालीपन की ओर ले जाती हैं। भीतरी खालीपन एक मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक अवस्था है, जिसमें व्यक्ति को गहरे स्तर पर जुड़ाव, उद्देश्य या आंतरिक संतोष की कमी महसूस होती है। प्रसिद्ध मनोचिकित्सक विक्टर ई. फ्रैंकल ने इस स्थिति को 'अस्तित्वगत रिक्तता' कहा था—ऐसी अवस्था जिसमें व्यक्ति जीवन का उद्देश्य न मिलने पर निरर्थकता और भीतर के खालीपन का अनुभव करता है। यह वह स्थिति है जब व्यक्ति खुद को भटका हुआ महसूस करता है, उसके भीतर प्रेरणा नहीं रहती और वह केवल किसी तरह जीवन गुज़ार रहा होता है—जबकि जीवन का अर्थ इससे कहीं अधिक है।

आज दुनिया में इस खालीपन की समस्या व्यापक रूप से दिखाई देती है। इसे अलग-अलग रूपों में लोगों, परिवारों, संस्थाओं और समाज में देखा जा सकता है। यदि हम अपने आसपास ध्यान से देखें तो इसकी उपस्थिति और प्रभाव का अंदाज़ा आसानी से लगाया जा सकता है।

भीतरी खालीपन और उससे जुड़ी भावनाओं का प्रभाव बहुत नकारात्मक होता है। इसके आर्थिक असर का सीधे-सीधे आकलन नहीं किया गया है, लेकिन अनुमान है कि इसका

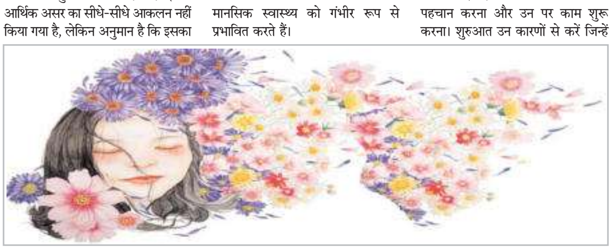

वैश्विक स्तर पर हर साल खरबों डॉलर का नुकसान हो सकता है। उदाहरण के लिए, विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार केवल अवसाद और चिंता के कारण ही वैश्विक अर्थव्यवस्था को हर साल लगभग एक ट्रिलियन डॉलर की उत्पादकता हानि होती है, जबकि दुनिया भर में करीब एक अरब लोग किसी न किसी मानसिक विकार के साथ जीवन जी रहे हैं।

मनोविज्ञान, मनोचिकित्सा, समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र के अनेक विद्वानों का मानना है कि अस्तित्वगत खालीपन केवल व्यक्तिगत समस्या नहीं है, बल्कि आधुनिक समाज की संरचना से जुड़ी एक बड़ी चुनौती है। कई शोध इसे अवसाद, आत्महत्या, नशे की लत, जीवन संतोष में गिरावट और भारी आर्थिक बोझ से जोड़ते हैं। विश्व हैप्पीनेस रिपोर्ट जैसे वैश्विक अध्ययन और सकारात्मक मनोविज्ञान के शोध बार-बार यह बताते हैं कि सामाजिक जुड़ाव में कमी, अकेलापन और जीवन में अर्थ का अभाव जीवन संतोष और मानसिक स्वास्थ्य को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं।

इस लेख का मुख्य उद्देश्य इस भीतरी खालीपन से बाहर निकलने का रास्ता दिखाना है। नीचे ऐसे सात सरल कदम बताए गए हैं, जिनकी मदद से जीवन में खालीपन की जगह खुशी लाई जा सकती है।

पहला कदम है- समस्या के प्रति जागरूक होना। हर बदलाव की शुरुआत जागरूकता से होती है। मनोवैज्ञानिक शोध बताते हैं कि आत्म-जागरूकता व्यवहार में बदलाव और भावनाओं को संभालने की दिशा में पहला कदम होती है।

दूसरा कदम है- खुद का और अपने आसपास के वातावरण का आकलन करना। अपने जीवन, परिवार, कार्यस्थल और समाज में इस खालीपन की स्थिति और उसके प्रभाव को समझने की कोशिश करें। डायरी लिखना, परामर्श लेना या मनोवैज्ञानिक परीक्षण जैसे उपाय भावनात्मक स्थितियों और उनके कारणों को समझने में मददगार होते हैं।

तीसरा कदम है- खालीपन के कारणों की पहचान करना और उन पर काम शुरू करना। शुरुआत उन कारणों से करें जिन्हें हल करना अपेक्षाकृत आसान हो और धीरे-धीरे कठिन कारणों की ओर बढ़ें। व्यवहार विज्ञान के अध्ययन बताते हैं कि छोटे और व्यावहारिक बदलाव लंबे समय तक टिकाऊ सुधार ला सकते हैं।

चौथा कदम है- जीवन में खुशी के स्रोतों को पहचानना और उन्हें बढ़ाना। इसके लिए सबसे पहले खुद को समझना ज़रूरी है- यह जानना कि आपको वास्तव में किस चीज़ से खुशी मिलती है। सरल शब्दों में, खुशी दूसरों की मदद करने, जो हमारे पास है उसका आनंद लेने और जीवन में अर्थ खोजने के बीच संतुलन से पैदा होती है। सकारात्मक मनोविज्ञान के शोध बताते हैं कि अर्थपूर्ण जीवन, अच्छे संबंध और सक्रिय सहभागिता लंबे समय तक बने रहने वाले कल्याण के सबसे मजबूत आधार हैं। जीवन में खुशी जोड़ने की शुरुआत छोटी-छोटी चीज़ों से की जा सकती है—दैनिक जीवन के छोटे पलों को पहचानना, उन्हें सराहना और उनका आनंद लेना। कृतज्ञता और सचेतनता पर किए गए अध्ययनों से यह साबित हुआ है कि छोटी सकारात्मक अनुभूतियों की नियमित सराहना जीवन संतोष और भावनात्मक संतुलन को काफी बढ़ा सकती है।

पांचवां कदम है- छोटे सकारात्मक बदलावों को पहचानना, उनकी सराहना करना और उन्हें लगातार आगे बढ़ाना। मनोवैज्ञानिक शोध बताते हैं कि प्रगति को स्वीकार करना सकारात्मक आदतों और प्रेरणा को मजबूत बनाता है।छठा कदम है- खुशी की इस यात्रा में निरंतर आगे बढ़ते रहना और हार न मानना। दीर्घकालिक कल्याण पर किए गए शोध बताते हैं कि धैर्य और दृढ़ता खुशी को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।सातवां कदम है- नियमित रूप से समीक्षा करना। सप्ताह, पखवाड़े या महीने के आधार पर अपने प्रयासों का आकलन करें, उनसे सीखें और ज़रूरत के अनुसार सुधार करते रहें। आत्ममूल्यांकन और निरंतर सुधार व्यक्तिगत विकास के महत्वपूर्ण आधार माने जाते हैं।इन सात सरल कदमों को अपनाकर व्यक्ति अपने जीवन में मौजूद खालीपन का सामना कर सकता है और धीरे-धीरे उसकी जगह खुशी को ला सकता है।

आइए, हम सब मिलकर इस भीतरी खालीपन को समझें और उसे दूर करने की दिशा में कदम बढ़ाएँ—ताकि जीवन अधिक आनंदपूर्ण, सार्थक और संतोषभरा बन सके।

स्वत्वाधिकारी वैभव पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड की ओर से प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक मनीष विदेह द्वारा नेहरू हाउस द्वितीय तल, 4, बहादुरशाह जफर मार्ग,नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित। द इंडियन एक्सप्रेस प्रा.लि., ए-8, सेक्टर-7, नोएडा, गौतमबुद्ध नगर, यूपी-201301 से मुद्रित। फोन : 23705694-95-96, टैलीफैक्स : 23705792 RNI Registration No. DELHIN/2006/16444 संस्थापक: श्री विश्व विभूति विदेह

सीताराम मंदिर में 2 अप्रैल को मनाया जाएगा हनुमान जन्मोत्सव

रात्रि जागरण, प्रसाद ओर धार्मिक कार्यक्रम होंगे आयोजित

जयपुर टाइम्स

मण्डावा (निसं.)। कस्बे में मुकुन्दगढ़ रोड़ स्थित सीताराम मंदिर में 2 अप्रैल को हनुमान जन्मोत्सव मनाया जाएगा। रावणा राजपुत समाज मंडावा अध्यक्ष राजेन्द्र सिंह पंवार ने कार्यक्रमों को लेकर जानकारी देते हुए बताया कि हर वर्ष की भांती इस वर्ष 2 अप्रैल को हनुमान जन्मोत्सव मनाया जाएगा। उन्होंने बताया कि सामूहिक हनुमान चालीसा,रात्रि जागरण, प्रसाद ओर अन्य धार्मिक कार्यक्रम भी आयोजित होंगे। मंदिर सजावट सहित अन्य कार्यक्रमों को लेकर तैयारियां जारी है। इस अवसर पर राजेश रणजीरोत,राजेन्द्र सिंह पंवार, गोविंद सिंह चौहान,किशोर सिंह जाटू, राजकुमार निर्वाण,किशोर सिंह शेखावत,गजानंद पंवार,राजेन्द्र सिंह,हरीसिंह नरूका,सत्यनारायण खेजडोलिया,सुनील सिंह,राजेन्द्र सिंह नरूका,सीताराम मेड़तिया सहित अन्य समाज के गणमान्य जनों का सहयोग मिल रहा है।

श्री बालाजी विशाल धाम के सौजन्य से 27वां वार्षिक जन्म दिवस बड़े ही धूम-धाम से मनाया जायेगा

जयपुर टाइम्स

(बुहाना) गोपाल की ढाणी पचेरी बुहाना रोड़ पर श्री बालाजी विशाल धाम के सौजन्य से 27वां वार्षिक जन्मदिवस बड़े ही धूम-धाम से मनाया जायेगा। इस अवसर पर श्री हनुमान जी का भव्य श्रृंगार किया जायेगा व छप्पन भोग लगाया जायेगा। दिनांक 02 अप्रैल 2026 गुरुवार को रात्रि 8 बजे से प्रभु इच्छा तक भजन पार्टी बिजेन्द्र कसाणा एडं पार्टी के कलाकारो द्वारा भजन किर्तन किये जायेगें। गौरतलब है कि ये उक्त भव्य जागरण व भण्डारा राजेश जी महाराज राष्ट्रीय अध्यक्ष -भगवान श्री परशुराम बालाजी मंदिर ट्रस्ट के सानिध्य में किया जा रहा है रात्रि 10 बजे श्री बालाजी महाराज की ज्योति प्रज्जवलित की जायेगी।

जन उपयोगी सेवाओं में योगदान दें- पीएलवी

जयपुर टाइम्स

सुजानगढ़(नि.सं.)। 'ट्रांसफार्मिंग टयूजडे' थीम पर पीएलवी विजय पाल श्योराण ने विभिन्न विधिक जानकारी हेतु पंचायत समिति, अशोक सर्किल के आस पास साप्ताहिक अभियान चलाया और स्वछता, स्थाई लोक अदालत व वृक्षारोपण के बारे में लोगों को बताया। पीएलवी ने पत्रक देते हुए लोगों से अपील की कि विभिन्न जन उपयोगी सेवाओं जैसे पानी, लोक सफाई, चिकित्सा सेवा, परिवहन सेवा, बैंकिंग, बीमा सेवा आदि की बहाली में आ रही दिक्कतों को दूर करने, समाधान में योगदान देते हुए नागरिक कर्तव्यों का पालन करें और इनके बारे में किसी परेशानी का समाधान ना हो रहा हो, तो स्थाई लोक अदालत के द्वारा कार्यवाही करवा सकते हैं। विधिक जागरूकता कार्यक्रम करते हुए राजकीय जाजोदिया उच्च माध्यमिक विद्यालय बगीचा परिसर में साइबर ठगी के विषय में जागरूक किया एवं बालिका शिक्षा तथा बाल विवाह रोकथाम, नालसा योजना की जानकारी अधिकार मित्र वक्ता रामप्रसाद शर्मा ने दी। पीएलवी ने नालसा योजना की जानकारी दी व महिला समानता के बढ़ावा देने तथा वंचित बालिकाओं को कस्तूरबा गांधी विद्यालय में पढ़ने हेतु प्रेरित किया।

वाटिका के दिहाड़ी मजदूर का बेटा 12वीं साइंस में राजस्थान टॉपर

सांगानेर वाटिका नगर पालिका के छात्र सोनू मेहरा ने रचा इतिहास ! 12वीं साइंस में 99.80' अंक के साथ

जयपुर टाईम्स

सांगानेर(निस.)। राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की 12वीं कक्षा का रिजल्ट मंगलवार को जारी हो गया है। साइंस में जयपुर के बगरु विधानसभा क्षेत्र के सोनू मेहरा ने 99.80' नंबर के साथ राजस्थान में टॉप किया है। सोनू मेहरा 7वीं तक प्राइवेट स्कूल में पढ़ता था। 8वीं क्लास में सरकारी स्कूल में एडमिशन लिया था। सरकारी स्कूल में भी सोनू मेहरा ने 98.88' हासिल किया था। सोनू का डॉक्टर बनने का सपना है। सांगानेर क्षेत्र वाटिका के सीमलिया रोड़ स्थित रहने वाले सोनू मेहरा के पिता विनोद मेहरा इमारतों मे कलर पेंट का कार्य करते हैं हैं और माता गुड्डी देवी गृहिणी हैं। सोनू मेहरा ने अपनी इस सफलता का श्रेय अपने माता-पिता और शिक्षकों को दिया है। उन्होंने बताया कि परिवार और शिक्षक हर कठिन परिस्थिति में उनके साथ खड़े रहे।

पहचान के संकट से जूझते समुदाय

हम प्रायः समाज को कोटियों यानी वर्गों या श्रेणियों में बांटकर देखने के आदी हो गए हैं। दलित, जनजाति, सवर्ण, हिंदू, मुस्लिम जैसी अनेक कोटियां समाज को देखने के हमारे नजरिये पर हावी रहती हैं। हम अक्सर समाज को इन्हीं स्थिर वर्गों के माध्यम से समझने की कोशिश करते हैं और मान लेते हैं कि सामाजिक वास्तविकता इन्हीं सीमाओं के भीतर पूरी तरह समाहित हो जाती है, लेकिन हम यह नहीं सोचते कि इन कोटियों के बीच भी अनेक ऐसे सामाजिक समूह मौजूद हो सकते हैं, जो इन निर्धारित श्रेणियों में पूरी तरह समाहित नहीं होते। हम यह भी समझना नहीं चाहते कि ये कोटियां हमेशा कठोर और स्थायी नहीं होतीं, बल्कि कई बार लचीली और परिवर्तनशील भी होती हैं। सामाजिक जीवन की जटिलता कई बार इन कोटियों की सीमाओं को चुनौती देती है। वास्तव में समाज की संरचना इतनी सरल नहीं होती कि उसे केवल कुछ तयशुदा श्रेणियों में पूरी तरह समझ लिया जाए। दलित एवं जनजाति दो ऐसी कोटियां हैं, जिन्हें हमारी राजनीति और प्रशासनिक व्यवस्था ने विशेष रूप से निर्मित किया है। औपनिवेशिक जनगणना के दौरान पहली बार अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की कोटियां बनाकर अनेक विविध सामाजिक समूहों को उनमें सम्मिलित कर दिया गया। औपनिवेशिक शासन की रणनीति समाज को अलग-अलग वर्गों में बांटकर शासन को सरल बनाना और कई बार विभाजन की रेखाएं खींचना भी था। इसके परिणामस्वरूप कई ऐसे समुदाय बने रहे, जो इन श्रेणियों में रखे जाने के बावजूद अपनी सांस्कृतिक पहचान को अलग ढंग से समझते एवं विश्लेषित करते रहे। उदाहरण के लिए, कई दलित जातियां दलित कोटि में दर्ज होने के बावजूद अपने आपको जनजातीय विशेषताओं से युक्त मानती रही हैं। उत्तर प्रदेश और बिहार में रहने वाले मुसहर समुदाय को प्रशासनिक रूप से दलित कोटि में दर्ज किया गया है, किंतु अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक आत्मछवि में वे अपने आपको कई जनजातीय विशेषताओं से युक्त मानते हैं। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के कई क्षेत्रों में कोल और खरवार जैसे समुदायों को प्रशासनिक दृष्टि से अनुसूचित जाति में रखा गया है, जिन्हें कई स्थानों पर जनजातीय माना जाता है। उनके दैनिक जीवन, कर्मकांड, पूजा-पद्धति और सांस्कृतिक व्यवहार में वैसे जनजातीय संस्कृति की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। यह स्थिति दर्शाती है कि सामाजिक वास्तविकता प्रशासनिक वर्गीकरण से कहीं अधिक जटिल और बहुआयामी होती है।

इन दोनों कोटियों के बीच भी कई ऐसे सामाजिक समूह मौजूद हैं, जो न पूरी तरह इधर के हैं और न पूरी तरह उधर के। वे सामाजिक संरचना में एक प्रकार की मध्यवर्ती स्थिति में रहते हैं। ऐसे समूहों को सिद्धांतकार 'बीच के समूह', 'बीच की अस्मिता वाले समुदाय' अथवा 'लिमिनल आइडेंटिटी' वाले समूह कहते हैं। ये समुदाय समाज की मुख्यधारा में होते हुए भी कई बार पहचान और अधिकार के स्तर पर अस्पष्ट स्थिति में रहते हैं। उत्तर प्रदेश में ऐसा ही एक समूह है-वनटांगिया समुदाय, जो मुख्यतः महाराजगंज एवं गोरखपुर क्षेत्र के जंगलों में बसता है। इनका मुख्य कार्य जंगलों में विशेष पद्धति से साखू के पेड़ लगाना था। यह स्पष्ट नहीं है कि ये समुदाय कब और कैसे इस क्षेत्र में आए, परंतु इतना निश्चित है कि अंग्रेजी शासन के समय से ही ये इस कार्य से जुड़े रहे हैं। लंबे समय तक यह समुदाय प्रशासनिक और सामाजिक दृष्टि से उपेक्षित रहा है। लंबे समय तक उनकी जमीन भी उनकी अपनी नहीं थी। जिन बस्तियों में वे रहते थे, उन्हें वैध मान्यता प्राप्त नहीं थी। उन्हें मतदान का अधिकार भी प्राप्त नहीं था और न ही सरकारी योजनाओं का लाभ व्यवस्थित रूप से मिल पाता था। जब किसी समुदाय की पहचान और निवास का वैध आधार ही न हो, तब विकास की योजनाएं भी उन तक पहुंच नहीं पातीं। योगी आदित्यनाथ ने संसद से सड़क तक लड़ाई लड़ी तब वनटांगिया गांवों को राजस्व ग्राम का दर्जा मिला और उन्हें मतदान का अधिकार प्राप्त हुआ। फिर सरकारी आवास योजनाएं, पेंशन, स्वास्थ्य सुविधाएं और अन्य कल्याणकारी नीतियां उन तक पहुंचने लगीं। इस प्रकार वे धीरे-धीरे विकास की धारा से जुड़ सके और उन्हें लोकतांत्रिक सम्मान भी प्राप्त होने लगा।

वास्तव में समाज में ऐसे कई समूह हैं, जो दो स्थापित कोटियों के बीच स्थित हैं और जिनकी पहचान पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पाई है। किसी भी संवेदनशील प्रशासन का नैतिक दायित्व है कि ऐसे उपेक्षित और भटके हुए समुदायों की पहचान करे और उन्हें विकास की मुख्यधारा से जोड़े। इसके लिए आवश्यक है कि हम केवल बनी-बनाई कोटियों के दबाव में न रहें, बल्कि नए सामाजिक अनुसंधानों और अध्ययन के माध्यम से समाज की जटिल वास्तविकताओं को समझने का प्रयास करें।

इसके परिणामस्वरूप कई ऐसे समुदाय बने रहे, जो इन श्रेणियों में रखे जाने के बावजूद अपनी सांस्कृतिक पहचान को अलग ढंग से समझते एवं विश्लेषित करते रहे। उदाहरण के लिए, कई दलित जातियां दलित कोटि में दर्ज होने के बावजूद अपने आपको जनजातीय विशेषताओं से युक्त मानती रही हैं। उत्तर प्रदेश और बिहार में रहने वाले मुसहर समुदाय को प्रशासनिक रूप से दलित कोटि में दर्ज किया गया है, किंतु अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक आत्मछवि में वे अपने आपको कई जनजातीय विशेषताओं से युक्त मानते हैं। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के कई क्षेत्रों में कोल और खरवार जैसे समुदायों को प्रशासनिक दृष्टि से अनुसूचित जाति में रखा गया है, जिन्हें कई स्थानों पर जनजातीय माना जाता है। उनके दैनिक जीवन, कर्मकांड, पूजा-पद्धति और सांस्कृतिक व्यवहार में वैसे जनजातीय संस्कृति की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। यह स्थिति दर्शाती है कि सामाजिक वास्तविकता प्रशासनिक वर्गीकरण से कहीं अधिक जटिल और बहुआयामी होती है। इन दोनों कोटियों के बीच भी कई ऐसे सामाजिक समूह मौजूद हैं, जो न पूरी तरह इधर के हैं और न पूरी तरह उधर के। वे सामाजिक संरचना में एक प्रकार

लाल आतंक पर पूर्ण विराम

मोदी सरकार ने 31 मार्च 2026 तक देश को माओवाद से मुक्त करने का वादा किया था। यह तारीख आज एक इतिहास बनने जा रही है, क्योंकि तमाम संकेत यही बताते हैं कि मोदी सरकार ने अपना यह वादा करीब-करीब पूरा कर दिया है। करीब-करीब इसलिए, क्योंकि कोई भी समस्या अंकगणित का सवाल नहीं होती, जिसे हल करके उसका आखिरी जवाब निकाला जा सकता है। माओवाद के रूप में सरकारी तंत्र जिसे वामपंथी उग्रवाद कहता रहा है, दरअसल वह एक ऐसी विचारधारा से प्रेरित है जो मानती आई है कि कि सत्ता की राह बारूद से निकलती है।

कुछ साल पहले तक माओवादी हिंसा का आतंक ऐसा था कि उसके सामने सरकारें लाचार दिखती थीं। दिनदहाड़े रेल पटरियां उड़ा देना, झीरन घाटी में छत्तीसगढ़ कांग्रेस के पूरे नेतृत्व का सफाया, बस्तर में 72 सीआरपीएफ जवानों को उड़ा देना मामूली घटनाएं नहीं कही जा सकतीं। उस दौर में देश के करीब एक तिहाई जिलों तक लाल आतंक का असर था। इस वजह से इन जिलों को आम प्रशासनिक भाषा में लाल गलियारा कहा जाता था। उसके लिए आंध्र के तिरुपति से लेकर नेपाल के पशुपति तक के क्षेत्र को प्रतीक के रूप में रेखांकित तक किया जाता था। केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने जब मार्च 2026 तक देश को माओवाद से मुक्ति दिलाने की समयसीमा तय की तो इसे लेकर संदेह भी जताए गए, पर केंद्र की दृढ़ इच्छाशक्ति और जीरो टालरेंस वाली नीति के परिणाम सबके सामने हैं। इस सफलता में राज्यों के सहयोग एवं समन्वय को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता। केंद्र और राज्यों के बीच खुफिया जानकारियों को साझा करने के अलावा विभिन्न मोर्चों पर सहयोग ने सुरक्षा बलों को अधिक सक्षम बनाया। इसके जरिये माओवादियों से जुड़ी सटीक सूचनाएं हासिल कर उन्हें सफलतापूर्वक निशाना बनाया गया। इस कार्रवाई ने खूंखार समझे जाने वाले माओवादी नेतृत्व को जहां आत्मसमर्पण के लिए तैयार किया, वहीं नई भर्तियों को हतोत्साहित किया। माओवादियों की मुख्यधारा में वापसी के बाद पुनर्वास के लिए अनुकूल नीतियां भी तैयार कीं। पुनर्वास योजनाओं से भविष्य के प्रति आश्वस्ति भाव ने भी माओवादियों के बड़े पैमाने पर आत्मसमर्पण में अहम भूमिका निभाई।

नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में 2014 के चुनाव में ही भाजपा ने अपने घोषणा पत्र में माओवाद के खात्मे का वादा किया था। सत्ता संभालने के बाद इस दिशा में प्रयास भी आरंभ हुए, लेकिन उसमें निर्णायक तेजी अमित शाह के गृहमंत्री बनने के बाद आई। इसका ही परिणाम रहा कि वामपंथी उग्रवाद से प्रभावित जिलों की संख्या जहां साल 2014 में 126 थी, जो 2025 में घटकर 11 ही रह गई। एक दशक पहले जहां माओवाद से 'सर्वाधिक प्रभावित' जिलों की संख्या 36 थी, वह घटकर केवल तीन रह गई है। वर्ष 2004-14 की तुलना में 2014-24 के दौरान माओवादी हिंसा के मामलों में लगभग 53 प्रतिशत की कमी आई। इस दौरान सुरक्षा कर्मियों की मौतें भी करीब 73 प्रतिशत और आम नागरिकों की मौतों की संख्या में करीब 70 प्रतिशत कमी हुई हैं। सिर्फ 2024-25 में ही लगभग 2,900 माओवादियों ने समर्पण किया। जबकि सुरक्षा बलों ने 1,900 से ज्यादा माओवादियों को गिरफ्तार किया। इसी साल सुरक्षा बलों के अभियान में 600 से अधिक माओवादी मारे गए। खूंखार माओवादी रहे 28 शीर्ष नेताओं को भी सुरक्षा बलों ने मार गिराया। इनमें सीपीआइ-माओवादी के महासचिव नंबाला केशव राव उर्फ बसवराजू, इसी पार्टी की केंद्रीय समिति के सदस्य पतिराम मांझी और गणेश उइके जैसे वरिष्ठ नेताओं के नाम शामिल हैं। माना जाता है माओवादी कमांडरों के मारे जाने के बाद कैडर का मनोबल टूट गया। कभी लाल झंडे तले माओवादी शासन स्थापित करने की उम्मीद रखने वाली वैचारिक धारा के समर्थकों को समर्पण में ही भला नजर लगने लगा।

केंद्र और राज्यों के बीच खुफिया जानकारियों को साझा करने के अलावा विभिन्न मोर्चों पर सहयोग ने सुरक्षा बलों को अधिक सक्षम बनाया। इसके जरिये माओवादियों से जुड़ी सटीक सूचनाएं हासिल कर उन्हें सफलतापूर्वक निशाना बनाया गया। इस कार्रवाई ने खूंखार समझे जाने वाले माओवादी नेतृत्व को जहां आत्मसमर्पण के लिए तैयार किया, वहीं नई भर्तियों को हतोत्साहित किया। माओवादियों की मुख्यधारा में वापसी के बाद पुनर्वास के लिए अनुकूल नीतियां भी तैयार कीं। पुनर्वास योजनाओं से भविष्य के प्रति आश्वस्ति भाव ने भी माओवादियों के बड़े पैमाने पर आत्मसमर्पण में अहम भूमिका निभाई। नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में 2014 के चुनाव में ही भाजपा ने अपने घोषणा पत्र में माओवाद के खात्मे का वादा किया था। सत्ता संभालने के बाद इस दिशा में प्रयास भी आरंभ हुए, लेकिन उसमें निर्णायक तेजी अमित शाह के गृहमंत्री बनने के

जनगणना का शुभारंभ

अंततः 2021 में होने वाली जनगणना अब शुरू होने जा रही है। गोपनीयता के नए नियमों के साथ यह देश की पहली डिजिटल जनगणना होगी। इसके साथ ही एक विशेषता यह भी है कि पहली बार इसे दो चरणों में पूरा किया जाएगा। डिजिटल जनगणना का विशेष महत्व इसलिए और है, क्योंकि यह संसाधनों के साथ समय की भी बचत करेगी। डिजिटल जनगणना पारंपरिक कागज-पत्रों के स्थान पर मोबाइल एप, वेब पोर्टल और वास्तविक समय की निगरानी का उपयोग करके की जाएगी। इससे एक तो जनगणना का विवरण तेजी के साथ एकत्रित होगा और दूसरे त्रुटियों को भी कम करने में सहायता मिलेगी। डिजिटल जनगणना होने के कारण ब्योरा

सीधे सर्वर पर पहुंचेगा, जिससे प्रक्रिया कहीं अधिक तेज एवं सटीक होगी। इस जनगणना की एक खासियत यह भी होगी कि लोग अपनी जानकारी स्वयं दर्ज कर सकेंगे। लोगों को यह काम नीर-क्षीर ढंग से करना होगा, क्योंकि जनगणना आयुक्त ने स्पष्ट किया है कि जनगणना के दौरान जुटाए गए विवरण को पूरी तरह गोपनीय रखा जाएगा। स्वतंत्रता के बाद होने जा रही आठवीं जनगणना की महत्ता केवल इसलिए नहीं है कि यह डिजिटल रूप में होगी, बल्कि इसलिए भी है कि स्वतंत्र भारत में पहली बार जातियों का विवरण भी एकत्र किया जाएगा। स्पष्ट है कि इस जनगणना के माध्यम से देश की सामाजिक-आर्थिक एवं जातीय स्थिति की अपेक्षाकृत अधिक परिपूर्ण तस्वीर सामने आएगी, लेकिन इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि जातीय जनगणना एक ओर जहां विभिन्न जातियों के संख्याबल को सामने रखेगी, वहीं दूसरी ओर कई धारणाओं को ध्वस्त करने का भी काम करेगी, क्योंकि अलग-अलग जातीय समूहों ने अपने संख्याबल अथवा अपनी आर्थिक-सामाजिक स्थिति को लेकर अलग-अलग दावे कर रखे हैं। इन दावों पर पूरी तरह इसलिए भरोसा नहीं किया जा सकता, क्योंकि देश में 1931 के बाद जातिगत जनगणना हुई ही नहीं। यह मानना सही नहीं होगा कि जातियों की जो संख्या और स्थिति करीब सौ वर्ष पहले थी, वह आज भी है। एक दृष्टि से यह अच्छा ही है कि जनगणना के साथ ही जातियों का ब्योरा भी सामने आ जाएगा, लेकिन इसकी आशंका भी है कि इस ब्योरे के आधार पर कहीं जातिवाद की राजनीति बेलगाम न हो जाए।

सम्पादकीय ...

सरकारी स्कूलों पर गहराता संकट, निजीकरण का बोलबाला

भारत की शिक्षा व्यवस्था गंभीर संकट के दौर से गुजर रही है। पिछले एक दशक में लगभग 94 हजार सरकारी स्कूल बंद हो चुके हैं, जबकि इसी अवधि में 51 हजार से अधिक निजी स्कूल खुल गए हैं। यह स्थिति न केवल सरकारी शिक्षा प्रणाली की कमजोरियों को उजागर करती है बल्कि बढ़ते निजीकरण के कारण उत्पन्न सामाजिक असमानता को भी

सामने लाती है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत प्रत्येक बच्चे को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार दिया गया है लेकिन वर्तमान परिस्थितियों में यह अधिकार धीरे-धीरे कमजोर पड़ता दिखाई दे रहा है। साल 2014-15 से 2023-24 के बीच सरकारी स्कूलों की संख्या 11,07,101 से घटकर 10,17,660 रह गई, यानी लगभग 89,441 स्कूल कम हो गए, जबकि निजी स्कूलों की संख्या 2,88,164 से बढ़कर 3,31,108 हो गई। यह प्रवृत्ति विशेष रूप से ग्रामीण भारत के लिए चिंताजनक है, जहां गरीब और वंचित वर्गों के बच्चों के लिए शिक्षा तक पहुंच लगातार कठिन होती जा रही है।

सरकारी स्कूलों के संकट का एक प्रमुख कारण स्कूल मर्जर नीति है, जिसके तहत कम नामांकन वाले छोटे स्कूलों को बड़े स्कूलों में मिला दिया जाता है। इससे ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में बच्चों के लिए स्कूल तक पहुंच कठिन हो गई। मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में हजारों स्कूल बंद हुए हैं, जो कुल बंदी का बड़ा हिस्सा हैं। इसके अलावा, शिक्षकों की कमी, कमजोर आधारभूत संरचना और मिड-डे मील जैसी योजनाओं का सही ढंग से क्रियान्वयन न होना भी नामांकन में गिरावट के प्रमुख कारण हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के कुछ प्रावधान, जैसे एकल शिक्षक स्कूलों को हतोत्साहित करना भी इस प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप सरकारी स्कूलों में नामांकन में भारी कमी आई है। जबकि निजी स्कूलों में छात्रों की संख्या तेजी से बढ़ी है। गरीब परिवारों के बच्चे अब मजबूरन निजी स्कूलों की ओर रुख कर रहे हैं लेकिन ऊंची फीस उनके लिए बड़ी बाधा बन जाती है।

निजी स्कूलों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है और शहरी क्षेत्रों में बड़ी संख्या में बच्चे निजी स्कूलों में पढ़ रहे हैं। हालांकि यह वृद्धि कई चिंताएं भी पैदा करती है। निजी स्कूलों में फीस में भारी वृद्धि देखी जा रही है, जिससे निम्न और मध्यम आय वर्ग के परिवारों के लिए शिक्षा प्राप्त करना कठिन होता जा रहा है। शिक्षा का यह बढ़ता निजीकरण उसे एक सामाजिक सेवा से अधिक एक व्यापार में बदलता जा रहा है। शिक्षा का अधिकार कानून के तहत 25 प्रतिशत सीटें गरीब बच्चों के लिए आरक्षित हैं, लेकिन इसका प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है, जिससे सामाजिक असमानता और गहरी हो रही है। एक ओर संपन्न वर्ग बेहतर संसाधनों और सुविधाओं वाले निजी स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करता है, वहीं दूसरी ओर गरीब वर्ग सीमित संसाधनों वाले सरकारी स्कूलों तक ही सीमित रह जाता है।

इस असंतुलन का सीधा प्रभाव ड्रॉपआउट दर पर भी पड़ रहा है। पिछले कुछ वर्षों में लाखों बच्चों ने स्कूल छोड़ दिया है, जिनमें बड़ी संख्या किशोरियों की है। इसके पीछे गरीबी, बाल श्रम, परिवार का प्रवास, स्कूलों की दूरी और सुरक्षा की कमी जैसे कई कारण जिम्मेदार हैं। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियों के लिए शिक्षा प्राप्त करना अधिक कठिन हो जाता है। जब परिवार निजी स्कूलों की फीस वहन नहीं कर पाते और आसपास सरकारी स्कूल उपलब्ध नहीं होते तो बच्चों का शिक्षा से बाहर होना लगभग तय हो जाता है। यह स्थिति आने वाले समय में बेरोजगारी और सामाजिक असमानता को और अधिक बढ़ा सकती है।

शिक्षा का निजीकरण केवल शैक्षिक समस्या नहीं है बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक असमानता को भी गहराता है। जब सभी वर्गों को समान शिक्षा के अवसर नहीं मिलते, तो समाज में अवसरों का असंतुलन बढ़ता जाता है। भारत में शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का केवल लगभग 3 प्रतिशत ही खर्च किया जाता है, जबकि इसे 6 प्रतिशत तक बढ़ाने का लक्ष्य अभी भी अधूरा है। इसका प्रभाव महिलाओं के सशक्तिकरण, रोजगार के अवसरों और देश के समग्र आर्थिक विकास पर पड़ता है। यदि यह स्थिति बनी रही, तो यह लोकतंत्र के लिए भी खतरा बन सकती है क्योंकि एक शिक्षित समाज ही जागरूक और जिम्मेदार नागरिक तैयार करता है।

इस संकट से निपटने के लिए सरकार को ठोस और प्रभावी कदम उठाने होंगे। स्कूल मर्जर नीति पर पुनर्विचार किया जाना चाहिए और ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे स्कूलों को संरक्षित किया जाना चाहिए। रिक्त शिक्षक पदों को शीघ्र भरा जाए और शिक्षकों के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाए। सभी स्कूलों में बुनियादी सुविधाएं जैसे शौचालय, स्वच्छ पेयजल और डिजिटल संसाधन सुनिश्चित किए जाएं। मिड-डे मील योजना की गुणवत्ता में सुधार किया जाए और निजी स्कूलों की फीस पर नियंत्रण तथा निगरानी बढ़ाई जाए। शिक्षा का अधिकार कानून के प्रावधानों को सख्ती से लागू किया जाए और शिक्षा पर सार्वजनिक निवेश बढ़ाकर इसे सकल घरेलू उत्पाद के 6 प्रतिशत तक पहुंचाया जाए।

निजीकरण का बढ़ता प्रभाव सरकारी स्कूलों के लिए एक गंभीर चुनौती बन चुका है। सरकारी स्कूलों की घटती संख्या और निजी स्कूलों की बढ़ती संख्या यह संकेत देती है कि शिक्षा धीरे-धीरे एक मौलिक अधिकार से हटकर एक व्यापार का रूप लेती जा रही है। इसका सबसे अधिक प्रभाव गरीब और वंचित वर्गों पर पड़ रहा है। यदि समय रहते उचित कदम नहीं उठाए गए, तो यह असमानता समाज को गहराई तक प्रभावित करेगी। शिक्षा को बाजार की वस्तु नहीं, बल्कि सामाजिक विकास का आधार मानते हुए इसे मजबूत करना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि आने वाली पीढ़ियों का भविष्य इसी पर निर्भर करता है।

'हैप्पीनेस इंडेक्स' के नाम पर भारत से छल! युद्धरत देश भी हैं भारत से आगे

भारत में अत्यधिक गरीबी में उल्लेखनीय गिरावट आई है। 2011-12 में 27.1 प्रतिशत रही गरीबी दर 2022-23 में घटकर लगभग 5.3 प्रतिशत रह गई। अनुमानत: 269 मिलियन लोग गरीबी से बाहर निकले हैं। विभिन्न सरकारी योजनाओं, जिसमें कि प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण और आवास योजनाओं ने सामाजिक सुरक्षा को मजबूत किया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि विकास का लाभ समाज के निचले तबकों तक पहुंचा है। आर्थिक विकास के साथ-साथ आय असमानता में भी गिरावट दर्ज की गई है। शहरी गिनी गुणांक 36.7 से घटकर 31.9 और ग्रामीण गिनी गुणांक 28.7 से घटकर लगभग 27.0 हो गया है।

-डॉ. मयंक चतुर्वेदी

वैश्विक स्तर पर किसी देश की प्रगति को लंबे समय तक उसकी आर्थिक ताकत, विशेषकर सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) से मापा जाता रहा है, किंतु बदलती वैश्विक सोच ने तथ्यों एवं आंकड़ों से समझाया कि आर्थिक वृद्धि ही मानव जीवन की गुणवत्ता और संतुष्टि का पूर्ण मापदंड नहीं हो सकती। इसी दृष्टिकोण से 'विश्व खुशी रिपोर्ट' का जन्म हुआ, जिसका उद्देश्य नागरिकों के जीवन-संतोष को मापना है। इस साल की रिपोर्ट हाल ही में प्रकाशित हुई है, जिसमें भारत के साथ छल किया जाना स्पष्ट दिखाई देता है। भारत को 116वां स्थान दिया गया है, जबकि वह तीव्र आर्थिक प्रगति के दौर से गुजर रहा है।

यहां हम देखते हैं कि 'विश्व खुशी रिपोर्ट' भारत की रैंकिंग पिछले कुछ वर्षों में सीमित सुधार ही दर्शाती है, उदाहरण स्वरूप - 2021 में 139, 2022 में 136, 2023 और 2024 में 126 और अब 2026 में 116वां स्थान। अब इस संख्या को गहराई से देखें तो यह आंकड़ा का सुधार भारत के संदर्भ में बहुत ही सतही प्रतीत होता है, क्योंकि देश की आर्थिक और सामाजिक उपलब्धियों के अनुपात में यह प्रगति अत्यंत धीमी है। इससे यह स्पष्ट होता है कि खुशी सूचकांक और वास्तविक विकास के बीच एक गहरी खाई मौजूद है, जिसे कि 'विश्व खुशी रिपोर्ट' में नहीं बताया गया है। यहीं से इस रिपोर्ट की विश्वसनीयता पर संदेह पैदा होता है और भारत के प्रति इस रिपोर्ट को बनानेवालों की दुराग्रह भावना समझ आती है।

भारत की आर्थिक प्रगति: आज विश्व भी इन आंकड़ों को भारत के संदर्भ में नजरअंदाज नहीं कर सकता कि वर्ष 2015 में 2.1 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था 2025 तक बढ़कर 4.3 ट्रिलियन डॉलर हो गई, जो लगभग 105 प्रतिशत की वृद्धि को दर्शाती है। इस तेज़ी से भारत विश्व की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन गया है। इसका प्रभाव व्यापक सामाजिक बदलावों के रूप में भी सामने आया है।

भारत में अत्यधिक गरीबी में उल्लेखनीय गिरावट आई है। 2011-12 में 27.1 प्रतिशत रही गरीबी दर 2022-23 में घटकर लगभग 5.3 प्रतिशत रह गई। अनुमानत: 269 मिलियन लोग गरीबी से बाहर निकले हैं। विभिन्न सरकारी योजनाओं, जिसमें कि प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण और आवास योजनाओं ने सामाजिक सुरक्षा को मजबूत किया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि विकास का लाभ समाज के निचले तबकों तक पहुंचा है। आर्थिक विकास के साथ-साथ आय असमानता में भी गिरावट दर्ज की गई है। शहरी गिनी गुणांक 36.7 से घटकर 31.9 और ग्रामीण गिनी गुणांक 28.7 से घटकर लगभग 27.0 हो गया है। वस्तुत- यह प्रवृत्ति दर्शाती है कि विकास अपेक्षाकृत संतुलित रहा है। ऐसे में यह अपेक्षा स्वाभाविक है कि जीवन संतोष में भी वृद्धि होनी चाहिए, किंतु 'खुशी सूचकांक' इस वास्तविकता को पर्याप्त रूप से नहीं दर्शाता।

चौंकाने वाला विरोधाभास- संघर्षग्रस्त देशों से पीछे भारत: देखा जाए तो इस 'हैप्पीनेस इंडेक्स' का सबसे विवादास्पद पहलू यह है कि भारत कई ऐसे देशों से पीछे है जो गंभीर संकटों से जूझ रहे हैं। इज़राइल (8), ईरान (99), इराक (101), फिलिस्तीन (108), पाकिस्तान (109) और यूक्रेन (111) जैसे देश भारत से खुशी के मामले में ऊपर हैं! यही वो तथ्य हैं, जो इस रिपोर्ट के विश्वसनीय होने का संदेह पैदा करते हैं। यह कैसे संभव है कि जिन देशों में युद्ध, राजनीतिक अस्थिरता और आर्थिक संकट व्यापक स्तर पर मौजूद हैं, वे खुशी के मामले में भारत से ऊपर हो जाएं ? वास्तविकता में तो यह असंभव है।

इस संबंध में विभिन्न अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों के आर्थिक आंकड़े भी देखे जा सकते हैं, जो बताते हैं कि फिलिस्तीन में 80 प्रतिशत बेरोजगारी है। 238 प्रतिशत मुद्रास्फीति और अकाल जैसी स्थिति है। यानी जहां लाखों लोग गंभीर संकट में हैं। यूक्रेन युद्ध के कारण लोग जहां व्यापक जनहानि, विस्थापन और मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं का सामना कर रही है, वहां इन परिस्थितियों के बावजूद देशों की रैंकिंग भारत से बेहतर! ये कैसे संभव है?

पाकिस्तान और ईरान: अस्थिरता के बावजूद भारत से ऊपर: यह भी आश्चर्यचकित कर देनेवाला तथ्य है कि पाकिस्तान में आर्थिक अस्थिरता, बढ़ते आतंकी हमले और उच्च अपराध दर जैसी गंभीर समस्याएं मौजूद हैं। ईरान में सामाजिक दमन, महिलाओं पर प्रतिबंध और राजनीतिक अशांति बनी हुई है। इस वक्त अमेरिका, इजराइल और ईरान युद्ध से पूरा विश्व परेशान है, किंतु इसके बावजूद इन देशों को 'हैप्पीनेस इंडेक्स' में भारत से ऊपर दर्शाया, आज वास्वत में यही बताता है कि इस सूचकांक में शामिल कारक वास्तविक जीवन की कठिनाइयों को पूरी तरह प्रतिबिंबित नहीं करते।

इस तरह देखें तो इस 'हैप्पीनेस इंडेक्स' की सबसे बड़ी कमी यह है कि इसमें अपराध, आतंकवाद, सामाजिक अशांति और सार्वजनिक सुरक्षा जैसे महत्वपूर्ण पहलुओं को शामिल नहीं किया गया है, जबकि ये कारक किसी भी व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता को सीधे प्रभावित करते हैं। यदि कोई समाज सुरक्षित और स्थिर है, तभी वह अपने आप में खुशी का एक महत्वपूर्ण आधार होता है, जिसे यहां इस रिपोर्ट में पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया है। इसके साथ ही इस 'हैप्पीनेस इंडेक्स' की विश्वसनीयता इसलिए भी संकट में है, क्योंकि इसमें जिस गैलप सर्वेक्षण के अंतर्गत प्रत्येक देश से औसतन 1000 लोगों का नमूना लिया है, उसमें भारत जैसे विशाल देश के लिए ये सर्वेक्षण फिट नहीं बैठता, क्योंकि भारत जैसे देश में क्षेत्रीय, सामाजिक और आर्थिक विविधताएं अत्यधिक हैं, जिन्हें इतने छोटे नमूने में समाहित करना कठिन ही नहीं पूर्णत: असंभव है।

कुल मिलाकर कहना यही है कि जब तक खुशी के मापन में वास्तविक जीवन के सभी महत्वपूर्ण आयामों को शामिल नहीं किया जाएगा, तब तक यह सूचकांक पूर्ण सत्य का प्रतिनिधित्व नहीं करेगा। भारत का उदाहरण इस बात का प्रमाण है कि आर्थिक प्रगति और वास्तविक जीवन की संतुष्टि के बीच संबंध को समझने के लिए अधिक गहन और संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसका कि फिलहाल इस सर्वेक्षण 'हैप्पीनेस इंडेक्स' में पूरी तरह से अभाव दिखाई देता है। इसलिए भारतवासियों इस 'हैप्पीनेस इंडेक्स' को देखकर अपने देश की खुशी का अनुमान मत लगा लेना, भारत कल भी पाकिस्तान, फिलिस्तीन, युक्रेन समेत तमाम देशों से प्रसन्नता में आगे था और आज भी है। वास्तविकता में ये रिपोर्ट भारत के लोगों के साथ एक छलावा ही है, इससे अधिक अन्य कुछ नहीं!

भाजपा, संकल्प और राष्ट्रवाद

वर्ष 2014 में केंद्र में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के नेतृत्व में पूर्ण बहुमत की सरकार बनने के बाद से लेकर अब तक प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के निर्देशन में भाजपा अपने सभी संकल्पों को गंभीरता के साथ पूर्णता की ओर ले जाने के लिए अग्रसर है। भाजपा ने अपनी स्थापना से लेकर अब तक किए गए कई संकल्प पूर्ण किए हैं, जिनमें सबसे प्रमुख है अयोध्या में श्री रामजन्मभूमि स्थल पर दिव्य व भव्य राम मंदिर का निर्माण कराना। जम्मू-कश्मीर से अनुच्छेद 370 को हटाया जाना। पूर्व प्रधानमंत्री भारत रत्न स्वर्गीय अटल बिहारी वाजपेयी जी के समय से चल रहा महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का विधेयक भी कानून बन चुका है। भाजपा के सभी संकल्पों में राष्ट्रवाद की झलक है।

सामान नागरिक संहिता भी भारतीय जनता पार्टी का एक संकल्प है, जो चरणबद्ध रूप से सिद्धि की दिशा में बढ़ रहा है। पहले समान नागरिक संहिता कानून भाजपा शासित राज्य उत्तराखंड में सफलतापूर्वक लागू हुआ अब उसकी सफलता का गहन अध्ययन करने के बाद गुजरात भी ऐसा दूसरा राज्य बन गया है जहां सामान नागरिक संहिता लागू की गई है। विगत विधानसभा चुनाव से पूर्व गुजरात भाजपा के संकल्प पत्र में सामान नागरिक संहिता लागू करने का वादा किया गया था और इसके लिए एक समिति भी बना दी गई थी।

प्रधानमंत्री मोदी लाल किले के संबोधन से भारतीय जनमानस के लिए समान नागरिक संहिता की बात कर चुके हैं। हाल ही में उच्चतम न्यायालय ने भी एक मामले की सुनवाई के दौरान कहा कि अगर मुस्लिम महिलाओं को भी समान अधिकार प्राप्त करने हैं तो अब समय आ गया है कि देश की संसद समान नागरिक संहिता पर विचार करे और कानून बनाए। गुजरात विधानसभा में सात घंटे की लंबी चर्चा के बाद यह विधेयक पारित हुआ। इस पर चर्चा के दौरान कांग्रेस सदस्यों ने इस विधेयक को मुस्लिम विरोधी करार देते हुए कहा कि भाजपा यह विधेयक जानबूझ कर चुनाव से पहले जल्दबाजी में लेकर आई है ।

इस विधेयक के पारित हो जाने के बाद गुजरात में विभिन्न जातियों, धर्मों और सम्प्रदायों के लिए लोगों के लिए विवाह, तलाक, पिता की संपत्ति में महिलाओं की हिस्सेदारी और लिव -इन रिलेशनशिप को लेकर समान नागरिक संहिता कानून लागू हो जाएगा।विधानसभा में समान नागरिक संहिता विधेयक प्रस्तुत करते समय मुख्यमंत्री भूपेंद्र पटेल ने कहा कि इसका मुख्य उद्देश्य विभिन्न वर्गों और धर्मों के बीच कानूनी भेदभाव को समाप्त करना है। उन्होंने बताया कि अनुसूचित जनजातियों के पुरुषों और महिलाओं पर यह कानून लागू नहीं होगा लेकिन मुस्लिम समुदाय के लिए पर्सनल लॉ को समाप्त किया जाएगा।

मुख्यमंत्री ने उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की समान नागरिक संहिता कानून की आवश्यकता पर दिए गए बयान का उल्लेख करते हुए सदन में कहा कि आजादी के 75 वर्ष बाद भी विभिन्न धर्मों और समाजों के लोगों के नागरिक अधिकारों के साथ भेदभाव हो रहा है। इस कानून का उद्देश्य विवाह, तलाक, पिता की संपत्ति, भरण पोषण और लिव इन रिलेशनशिप के कानूनों में एकरूपता लाना है। इस विधेयक में विवाह, तलाक और लिव इन रिलेशनशिप का पंजीकरण अनिवार्य कर दिया गया है। इस विधेयक में पहचान छिपाकर धोखे से विवाह करने पर सात वर्ष की सजा का प्रावधान किया गया है ताकि किसी बेटी को धोखा देकर उसका जीवन खराब न किया जा सके।

समान नागरिक संहिता कानून के पक्ष में कहा जा रहा हे कि इससे महिला सशक्तिकरण के प्रयासों को मजबूती प्राप्त होगी। यह मुस्लिम महिलाओं को कानूनी सुरक्षा देगा। कानून लागू हो जाने के बाद इसके लागू होने के दिन से लिव -इन में रहने वाली महिलाओं को भी पहचान मिल सकेगी। सरकार यह स्पष्ट रूप से कह रही है कि यह किसी धर्म के खिलाफ नहीं अपितु नागरिक अधिकारों को समान बनाने के लिए है। एक प्रश्न यह उठाया जा रहा है कि जब यह समान नागरिक संहिता कानून है तो फिर इसमें आदिवासी समाज को क्यों अलग किया गया है? समान नागरिक संहिता का कांग्रेस विरोध कर रही है।

संकट के दौर में वैश्विक पर्यटन उद्योग

-डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा

अमेरिका-इजरायल और ईरान युद्ध के साइड इफेक्ट के रुप में दुनिया का पर्यटन उद्योग बुरी तरह से प्रभावित हुआ है। एक अनुमान के अनुसार 152 करोड़ पर्यटकों से गुलजार रहने वाले वैश्विक पर्यटन उद्योग के मौजूदा हालात के चलते अतिमंदी के दौर से गुजरने की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता। वैसे तो सभी देशों में पर्यटन उद्योग पर विपरीत असर पड़ने जा रहा है पर सबसे अधिक असर मध्य पूर्व के देशों में देखा जा सकता है। जानकारों के अनुसार अकेले मध्य पूर्व को ही 600 मिलियन अमेरिकी डॉलर का नुकसान भुगतना पड़ सकता है। दुनिया में सबसे अधिक पर्यटक फ्रांस की धरती पर जाते हैं और माना जाता है कि 9 से 10 करोड़ पर्यटक तो फ्रांस का रुख करते हैं। जहां तक भारत का प्रश्न है, हमारे यहां भी लगभग 2 करोड़ विदेशी पर्यटक देश के विभिन्न पर्यटन स्थलों का रुख करते हैं। पर मौजूदा हालात के चलते विश्व के अन्य देशों की तरह भारत में भी विदेशी पर्यटकों की आवाजाही पर विपरीत प्रभाव पड़ना ही है। एक सकारात्मक पक्ष यह देखा जा सकता है कि भारत और दुनिया के देशों में देशी पर्यटकों की संख्या में उछाल के चलते इस उद्योग को संजीवनी अवश्य मिलती लगती है।

वर्तमान दौर में दुनिया के चौधरी बने देशों को यह समझ लेना चाहिए कि अब वह जमाना गया जब हफ्ते दो हफ्ते में युद्ध का फैसला हो जाया करता था। आज छोटे-से छोटा देश भी युद्ध को लंबा खींचने की कूवत रखता है। इसे हम रुस-यूक्रेन युद्ध से अच्छी तरह से समझ सकते हैं। अमेरिका ने भी जब ईरान पर आक्रमण किया तो ट्रंप भी इसी मुगालते में थे कि दो-चार दिन में ईरान के घुटने टिकवा देंगे पर सारे कयास धरे के धरे रह गए और इनके चक्कर में दुनिया अस्थिरता और संकट में और आ गई। आज हालात यह हो गए हैं कि युद्ध तो आप शुरु कर सकते हैं पर युद्ध शुरु होने के बाद कब बंद होगा यह आपके हाथ में नहीं रहेगा।

युद्ध के चलते हालात ऐसे हो गए हैं कि चाह कर भी पर्यटक घूमने का रुख नहीं कर पा रहे हैं। केवल और केवल ट्रंप के दादागिरी के चलते दुनिया के देशों की जीडीपी में करीब 10 प्रतिशत की हिस्सेदारी निभाने वाला पर्यटन उद्योग बुरी तरह से प्रभावित हो गया है। होटल और ट्रैवल उद्योग से जुड़ी एजेंसियों के सामने बड़ा संकट आ गया है तो दुनिया के देशों और संस्कृतियों से जुड़ने और समझ कर एक-दूसरे के नजदीक आने की जो पहल पर्यटन उद्योग के चलते हुई थी उस पर लगभग विराम के हालात होते जा रहे हैं। 10 लाख करोड़ अमेरिकी डॉलर से भी अधिक का पर्यटन उद्योग आज संकट के दौर में आ गया है। उदाहरण के तौर पर देखा जाए तो थाईलैंड की अर्थव्यवस्था में 20 प्रतिशत हिस्सेदारी पर्यटन उद्योग की है और वह लगातार दूसरे साल गंभीर संकट के दौर में आ गई है। जैसे-तैसे पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए हजार डॉलर प्रतिदिन के लग्जरी कमरों की कीमत घटकर 300 डॉलर तक कर देने के बाद भी पर्यटक रुख नहीं कर रहे हैं। हालात विकट होते जा रहे हैं।

दरअसल वैश्विक हालात के चलते एक ओर उड़ानें रद्द होती जा रही है तो युद्ध के चलते लोगों में असुरक्षा की भावना घर कर रही है। ऐसी आशंका होती है कि कब कहां क्या हो जाए और कहीं जाएं वहीं पर बंद होकर न रह जाएं। मध्य-पूर्व के देशों में तो लगभग यही हालात है। कब किस देश और किस स्थान पर मिसाइल अटैक हो जाए, कहा नहीं जा सकता। क्योंकि अमेरिका-इजरायल व ईरान युद्ध की खास नकारात्मक बात यह है कि इन दो देशों पर मिसाइल अटैक नहीं हो रहे बल्कि इनसे थोड़ी भी सहानुभूति रखने वाले देश कब निशाने पर आ जाएं, कहा नहीं जा सकता। मध्य-पूर्व में मिसाइल अटैक और हार्मुज जलडमरुमध्य के हालात इसके उदाहरण हैं।

हालात तो यहां तक खराब होने की आशंका है कि मध्य-पूर्व के देशों में पानी का गंभीर संकट हो सकता है। आज कच्चा तेल, एलपीजी की ही समस्या नहीं अपितु दुनिया को जोड़ने वाले इंटरनेट के बाधित होने की आशंकाओं को भी नकारा नहीं जा सकता। लगता है एक-दूसरे के अहम् के चलते आम आदमी कहीं हाशिये में चला गया है। युद्ध के सामान्य नियम ताक में रख दिए गए हैं और आम नागरिकों, बच्चों, अस्पतालों, घनी आबादी इलाकों में भी मिसाइल दागने से कोई परहेज नहीं रह गया है। कोरोना के दौरान जिस तरह पर्यटन उद्योग प्रभावित हुआ था आज उसी तरह के हालात बनते दिख रहे हैं। कोरोना के बाद पिछले सालों में पर्यटन उद्योग ने तेजी पकड़ी थी और लगने लगा था कि 2030 तक पर्यटन उद्योग को जबरदस्त बूस्ट मिलेगा पर अब हालात तेजी से बिगड़ रहे हैं और लगता नहीं है कि आने वाले दिनों में कोई सुधार दिखाई देगा। हालांकि सकारात्मक पक्ष यह देखा जा सकता है कि भारत सहित विश्व के देशों में देशी पर्यटन को अवश्य बढ़ावा मिलने लगा है।

संपादकीय

दुनिया भर की अर्थव्यवस्था पर असर

अमेरिका-इजरायल तथा ईरान के बीच युद्ध को एक महीना पूरा हो चुका है। अभी तक इसके समाप्त होने के आसार नहीं नजर आते। दोनों पक्षों ने ऐसी शर्तें रखी हैं जिन्हें पूरा करना उन दोनों के लिए लगभग नामुमकिन ही है। अमेरिका की 15 बिंदुओं वाली योजना में ईरान से ऐसी गारंटी मांगी गई है जो उसे शत्रुतापूर्ण क्षेत्र में भविष्य के हमलों से बचाव करने में असमर्थ बना देगी। इसके जवाब में ईरान ने भी शर्तें रखीं, जैसे प्रतिबंध हटाना, नेतृत्व करने वालों की हत्याओं को रोकना और भविष्य में अमेरिकी आक्रामकता के खिलाफ गारंटी देना।

पाकिस्तान, मिस्र, तुर्किये और सऊदी अरब द्वारा समझौता कराने के प्रयासों के बावजूद दोनों पक्षों का अड़ियल रवैया वैश्विक अर्थव्यवस्था पर भारी आर्थिक बोझ डालने वाला है। पहले से ही एशियाई देश, जो पश्चिम एशियाई जीवाश्म ईंधन पर अत्यधिक निर्भर हैं, मुद्रास्फीति के प्रभाव और ईंधन की कमी से उत्पन्न कठिनाइयों को नियंत्रित करने के लिए जूझ रहे हैं, जिसका उनकी अर्थव्यवस्था और सरकारी वित्त पर दीर्घकालिक प्रतिकूल असर पड़ेगा। उदाहरण के लिए, तेल विपणन कंपनियों को राहत देने के लिए पेट्रोल और डीजल पर विशेष अतिरिक्त उत्पाद शुल्क को 10 रुपये प्रति लीटर कम करना, भारतीय सरकारी राजस्व को वार्षिक आधार पर 1.2 लाख करोड़ रुपये से 1.7 लाख करोड़ रुपये तक घटा सकता है।

वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए और अधिक कठिनाई सामने है, क्योंकि प्रतिशोधी हमलों की दोबारा शुरुआत और यमन के हूतियों द्वारा इजरायल के खिलाफ अप्रत्याशित आक्रामकता ने एक नया मोर्चा खोल दिया है। यह नया मोर्चा स्वेज नहर और लाल सागर होकर चलने वाले एक अन्य प्रमुख वैश्विक व्यापार मार्ग को खतरे में डाल सकता है। होर्मुज स्ट्रेट से समुद्री तेल और गैस व्यापार का एक चौथाई हिस्सा होता है और यह पश्चिम एशियाई जीवाश्म ईंधन उत्पादकों का मुख्य मार्ग है। अब तक ईरान द्वारा होर्मुज स्ट्रेट में खनन और नाकेबंदी ने तेल की कीमतों को 73 डॉलर प्रति बैरल (बेंचमार्क ब्रेंट क्रूड) से बढ़ाकर 110-119 डॉलर तक पहुंचा दिया है, साथ ही इसकी भारी कमी भी पैदा की है। पूर्वी एशिया पर इसका विशेष रूप से गंभीर असर पड़ा है क्योंकि 80 से 90 फीसदी कच्चा तेल और प्राकृतिक गैस इसी मार्ग से आते हैं। सऊदी अरब ने नाकेबंदी का सामना करने के लिए अपने पूर्व-पश्चिम स्थलीय पाइपलाइन से लाल सागर के यनबू बंदरगाह तक तेल प्रवाह बढ़ाने की कोशिश की, जिससे कच्चे तेल की कीमतों पर दबाव कम हुआ। लेकिन अब वह मार्ग भी खतरे में है। स्वेज नहर/लाल सागर दुनिया के कंटेनर यातायात का एक-तिहाई हिस्सा संभालता है, और दुनिया पहले ही 2023 और 2024 में हूती व्यवधानों का असर देख चुकी है। जहाजों को अफ्रीका के पश्चिमी तट से नीचे और केप ऑफ गुड होप के चारों ओर लंबा मार्ग लेना पड़ा, जिससे शिपिंग लागत, बीमा प्रीमियम सहित, तेजी से बढ़ गई और वैश्विक मुद्रास्फीति दबाव तथा आपूर्ति श्रृंखला में व्यवधान और गहरा गया।

ट्रंप के लिए वियतनाम बना ईरान

शिवकांत शर्मा

ईरान के साथ अमेरिकी टकराव एक महीने से अधिक समय से जारी है, जिससे वैश्विक आर्थिक संकट गहरा गया है। होर्मुज जलमार्ग बंद होने से तेल, गैस और उर्वरक की कमी हो गई है, जिससे एशिया, यूरोप और अमेरिका में महंगाई बढ़ रही है।

ईरान युद्ध को छेड़ने से पहले अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने सोचा होगा कि महज चार दिनों में ही जंग का फैसला हो जाएगा, वह टकराव महीने भर से ज्यादा लंबा खिंच गया है और उस पर जल्द विराम के भी कोई आसार नहीं दिख रहे। इस दौरान अमेरिका के लगभग 40 अरब डालर खर्च हो चुके हैं। रणभूमि पर सैनिक नहीं उतारने की बारंबार दुहाई देने के बावजूद ट्रंप को लगभग सात हजार मरीन और पैराशूट सैनिक भेजने पड़ रहे हैं, लेकिन ईरान न किसी तरह की हार मानने को तैयार है और न सीधी बातचीत को।

अमेरिकी कांग्रेस और संयुक्त राष्ट्र से अनुमति लिए बिना ईरान के परमाणु और मिसाइल खतरे से रक्षा के बहाने छेड़े इस युद्ध ने पूरी दुनिया को गंभीर आर्थिक संकट में झोंक दिया है। ऐसा इसलिए, क्योंकि अपने व्यापक विनाश से तिलमिलाया ईरान अब अपने 454 किलो संवर्धित यूरेनियम को सौंपना और बैलिस्टिक मिसाइल कार्यक्रम को सीमित करना तो दूर, होर्मुज जलमार्ग पर कब्जा करने पर तुल गया है।

ईरान की निगरानी में गुजरे कुछ जहाजों के अलावा यह जलमार्ग पिछले महीने भर से बंद है। इसकी वजह से तेल, गैस, उर्वरक, हीलियम और प्लास्टिक के कच्चे माल की तंगी हो गई है। भारत, चीन, जापान और दक्षिण कोरिया समेत एशिया की सभी अर्थव्यवस्थाओं की निर्भरता खाड़ी पर सर्वाधिक है। इसलिए वहां तो महंगाई और मंदी का खतरा है ही यूरोप और अमेरिका में भी महंगाई पर काबू पाने के लिए ब्याज दरें बढ़ाने की बातें होने लगी हैं। इसे 1970 के दशक में इजरायल-मिस्र-सीरिया युद्ध और इस्लामी क्रांति के तेल संकटों से भी बड़ा ऊर्जा संकट माना जा रहा है।

होर्मुज बंद रहने से उपजे आर्थिक संकट की तपिश एशिया, अफ्रीका और यूरोप के साथ-साथ अमेरिका भी पहुंच चुकी है। अमेरिका में डीजल की कीमतें 25 प्रतिशत तक बढ़ गई हैं। डीजल और उर्वरक की महंगाई का सीधा असर किसानों की आमदनी पर पड़ रहा है। रोजमर्रा का सामान महंगा होने से ट्रंप के मागा समर्थकों में भी नाराजगी है। युद्ध का विरोध करने वालों का आंकड़ा 61 प्रतिशत से ऊपर चला गया है। ट्रंप का अपना जनसमर्थन इतिहास के न्यूनतम बिंदु पर है।

सीनेट में विपक्षी डेमोक्रेटिक पार्टी के सीनेटर युद्धमंत्री हेगसेथ और विदेशमंत्री रूबियो को समितियों में तलब करने पर अड़े हैं। नवंबर में होने जा रहे संसदीय चुनाव में यदि ट्रंप की रिपब्लिकन पार्टी ने कांग्रेस में अपना बहुमत खो दिया तो ट्रंप पर महाभियोग की तलवार भी लटकने लगेगी। इसलिए वे अब इस युद्ध को किसी ऐसे समझौते के साथ समाप्त करने के लिए छटपटा रहे हैं, जिसमें उनकी जीत का ढोल पीटने की गुंजाइश हो।

इसलिए वे किसी भी मध्यस्थ के जरिये संदेश भेज कर बातचीत की हवा बांधने की कोशिश कर रहे हैं। दिलचस्प बात यह है कि मध्यस्थता के लिए उन्हें चीन या रूस जैसा कोई देश नहीं मिला जिसके ईरान के साथ सामरिक रिश्ते हों। ओमान और कतर जैसे पुराने मध्यस्थ भी तैयार नहीं हुए। बस एक पाकिस्तान मिला।

फारस और ओमान की खाड़ियों को मिलाने वाले होर्मुज जलमार्ग की चौड़ाई उसके मोड़ पर मात्र 21 समुद्री मील है जिसमें से 12 समुद्री मील तक ईरान की जलसीमा है और 12 समुद्री मील ओमान की। दोनों की जलसीमाएं एक-दूसरे से सटी हैं, लेकिन संयुक्त राष्ट्र के जलमार्ग कानून के अनुसार ये दोनों देश अपनी जलसीमाओं से होकर गुजरने वाले जहाजों को रोक नहीं सकते।

जैसे विमानों को दूसरे देशों की वायुसीमा से होकर उड़ान भरने का अधिकार है, वैसे ही जहाजों को जलसीमा से होकर गुजरने का। यहां समस्या अधिकारों की न होकर अंतरराष्ट्रीय नियमों के पालन की है। ईरान पर हमले के समय तो अमेरिका और इजरायल ने संयुक्त राष्ट्र के नियमों का ध्यान नहीं रखा। न ही ईरान के चीन और रूस जैसे मित्रों ने या दूसरे देशों ने हमले रोकने के लिए कोई आवाज उठाई। अब ईरान से उसके होर्मुज जलमार्ग से होकर गुजरने के अधिकार की मांग किस मुंह से करेंगे।

इसे खुलवाने के लिए ट्रंप ने नाटो और दूसरे मित्र देशों को दुत्कारा और फटकारा, लेकिन किसी ने कुछ नहीं किया। पिछले सप्ताह नाटो के महासचिव मार्क रूटर ने होर्मुज खुलवाने के लिए नाटो देशों समेत तीस देशों का संगठन खड़ा करने की बात जरूर की, मगर ईरान का कहना है कि होर्मुज जलमार्ग बंद कहां है? मित्र देशों के जहाजों के लिए तो खुला है। बस अमेरिका, इजरायल और उनके समर्थक देशों के जहाजों के लिए बंद है। उन्हें जाने के लिए भारी चुंगी अदा करनी होगी।

कहां तो अमेरिका ने ईरान की मुल्लाशाही को गिराने के लिए उसके तेल पर प्रतिबंध लगा रखे थे। कहां अब ईरान ने अमेरिका और उसके मित्र देशों के जहाजों के होर्मुज से गुजरने पर प्रतिबंध लगा दिए हैं। उसे खुलवाने के लिए ट्रंप एक तरफ ईरान के बिजलीघर उड़ाने और कहर बरपाने की धमकी दे रहे हैं और त्वरित हमलों में दक्ष मरीन और पैराशूट सैनिकों को खाड़ी में तैनात कर रहे हैं।

दूसरी तरफ धमकी की समयसीमा बढ़ाते जा रहे हैं। जहां ट्रंप ईरान की लड़ाई को होर्मुज खुला रखने की लड़ाई में बदल कर अंतरराष्ट्रीय समुदाय का खोया साथ हासिल करने की चाल चल रहे हैं, वहीं ईरान यमन के हूती संगठन को भी लड़ाई में उतार कर उस बाब-अल-मंदाब जलमार्ग को रोकने की तैयारी कर रहा है जो लाल सागर से होते हुए स्वेज नहर तक ले जाता है।

ट्रंप सारे पत्ते अपने हाथ में होने के चाहे जितने दावे करें, पर लगता यही है कि वे फंस चुके हैं। यदि वे ईरान के बिजलीघरों को उड़ाते हैं तो ईरान के जवाबी हमलों की आशंका से तेल और शेयर बाजारों में और हड़कंप मचेगा।

खाड़ी युद्ध का असली ट्रेलर

देवाशिष बसु

ईरान और अमेरिका-इजरायल युद्ध पांचवें सप्ताह में प्रवेश कर चुका है और इस?की चपेट में आकर भारतीय सूचकांक 9 फीसदी से अ?धिक टूट चुके हैं। युद्ध के प्रत्यक्ष प्रभाव हम सभी के सामने हैं क्योंकि होर्मुज स्ट्रेट लगभग बंद हो चुका है। भारत के कुल आयात का लगभग 54 फीसदी कच्चा तेल, 60 फीसदी तरलीकृत प्राकृतिक गैस (एलएनजी) और लगभग 90 फीसदी तरल पेट्रोलियम गैस (एलपीजी) होर्मुज स्ट्रेट से होकर गुजरते हैं। तेल और गैस के साथ-साथ भारत को नेफ्था, विमान ईंधन (एटीएफ) और गैसऑयल जैसे परिष्कृत उत्पादों की कमी का भी सामना करना पड़ रहा है।

खाद्य क्षेत्र में स्थिति और भी गंभीर है। खाद्य उत्पादन डीजल और उर्वरकों पर निर्भर करता है। उर्वरक जैसे यूरिया, अमोनिया और फॉस्फेट पैदावार बढ़ाते हैं। वैश्विक यूरिया व्यापार का 30 फीसदी से अधिक और अमोनिया और फॉस्फेट का लगभग 20 फीसदी हिस्सा भी होर्मुज स्ट्रेट से होकर गुजरता है।

खाड़ी क्षेत्र से दुनिया को कुल हीलियम के एक तिहाई से अधिक की आपूर्ति होती है। हीलियम सेमीकंडक्टर और इमेजिंग मशीनों के लिए अत्यंत जरूरी घटक है। पूरी दुनिया में मेथनॉल उत्पादन में भी इसकी लगभग 30 फीसदी हिस्सेदारी है जो प्लास्टिक, पेंट और ईंधन के लिए एक आधारभूत रसायन है। खाड़ी क्षेत्र सल्फर निर्यात में भी अग्रणी है (विश्व के कुल निर्यात का लगभग 45 फीसदी) जिसका इस्तेमाल सीधे उर्वरक उत्पादन में उपयोग होता है। सल्फ्यूरिक एसिड का इस्तेमाल तांबा, कोबाल्ट और निकल के निष्कर्षण में किया जाता है जिनका उपयोग ट्रांसफॉर्मर, इलेक्ट्रिक वाहनों की बैटरी और उन्नत इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं में होता है।

इस युद्ध से एल्युमीनियम की आपूर्ति भी प्रभावित हुई है। दुनिया में एल्युमीनियम उत्पादन में खाड़ी क्षेत्र लगभग 9 फीसदी योगदान देता है और चीन के बाहर कुल आपूर्ति में 22 फीसदी दखल रखता है जिससे यूरोप और अमेरिका में वाहन से लेकर निर्माण क्षेत्रों के लिए जोखिम खड़ा गया है। निवेशकों को अब यह तय करना होगा कि इन प्रभावों का किस हद तक असर मूल्य निर्धारण में दिख चुका है।

विमानन ईंधन किसी विमानन कंपनी के परिचालन लागत में 35-40 फीसदी हिस्सा रखता है। विश्लेषकों के अनुसार ईंधन की कीमतों में 10 फीसदी वृद्धि से परिचालन लाभ लगभग 15 फीसदी तक घट जाता है। पश्चिम एशियाई हवाई क्षेत्र बंद होने और उड़ान मार्गों के लंबा होने से विमानन कंपनियों का मार्जिन और भी कम हो जाता है। उपभोक्ता वस्तुओं के क्षेत्र में दबाव अधिक व्यापक है। कच्चे तेल से जुड़ी पैकेजिंग सामग्री पॉलिएथिलीन टेरेफ्थालेट (पीईटी) चिप, लिक्विड पैराफिन, उच्च घनत्व पॉलिइथिलीन और लचीले लैमिनेट परिचालन लागत का लगभग 15 फीसदी हिस्सा हैं।

कीमतें नियंत्रित करने की अधिक ताकत रखने वाली कुछ बड़ी कंपनियां बढ़ी लागत का कुछ बोझ ग्राहकों पर डाल सकती हैं मगर छोटी एवं असंगठित कंपनियां ऐसा नहीं कर सकतीं जिससे बाजार हिस्सेदारी में बदलाव तेजी से हो रहा है। कांच का उत्पादन प्राकृतिक गैस पर निर्भर करता है। कपड़ा उत्पादक मध्यवर्ती सामग्रियों पर निर्भर हैं। युद्ध के कारण आपूर्ति में आए व्यवधान ने पॉलिएस्टर धागे की कीमतें पहले ही 15-20 फीसदी तक बढ़ गई हैं। सीमेंट प्रत्यक्ष आपूर्ति व्यवधान से बच जाता है मगर फिर भी मूल्य प्रभावों से प्रभावित होता है। ईंधन की लागत में वृद्धि से आय कम हो सकती है, साथ ही पैकेजिंग में उपयोग होने वाले पॉलिप्रोपिलीन की उच्च कीमतों से भी नुकसान होता है। गुजरात के मोरबी में टाइल उत्पादकों ने गैस की कमी के कारण अपना काम बंद कर दिया है।

ये सभी छोटे-छोटे प्रभाव हैं मगर ये सब मिलकर एक ऐसे हालात तैयार कर देते हैं जो समय और कीमतों से प्रभावित होते हैं। पिछले कुछ हफ्तों से चल रही किल्लत के दौरान बहुत कम गड़बड़ी दिखाई दी है। मगर अगले एक से तीन महीनों में जब भंडार कम हो जाएगा तो इसकी दोबारा आपूर्ति बहुत अधिक लागत पर होगी जिससे एक बड़ा अप्रत्यक्ष झटका लगेगा।

सवाल यह है कि बाजार ने इसका किस हद तक अनुमान लगा लिया है? बाजार सबसे पहले लगने वाले झटके पर तत्काल प्रतिक्रिया देते हैं यानी शेयर बाजार लड़खड़ाते हैं, मुद्राएं कमजोर होती हैं आदि। मगर स्वभाव से आशावादी होने के कारण निवेशक यह मान लेते हैं कि स्थिति जल्द ही सामान्य हो जाएगी। दूसरे और तीसरे स्तर पर होने वाले प्रभाव कम दिखाई देते हैं। व्यापक राजकोषीय गणित और उपभोग पर इसके प्रभाव को तत्काल अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता है।

कच्चे तेल की कीमत में प्रत्येक 10 डॉलर की वृद्धि से भारत की आयात लागत में 12 अरब से 15 अरब डॉलर की वृद्धि होती है। 80 डॉलर से ऊपर तेल की कीमतें रहने से मुद्रास्फीति दर 4.5 फीसदी से ऊपर जाने का खतरा है। इससे चालू खाता घाटा सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के 1.5-2 फीसदी तक बढ़ जाएगा और रुपया कमजोर होकर डॉलर के मुकाबले 95 से भी आगे जा सकता है। रुपया कमजोर होने और विदेशी निवेशकों द्वारा बिकवाली के बाद विदेशी निवेश ठिठक जाएगा।

स्वास्थ्य

महिलाएं इग्नोर न कैल्शियम की कमी के संकेत

हड्डियों की मजबूती के लिए कैल्शियम काफी जरूरी है, लेकिन 30 की उम्र के बाद महिलाओं में कैल्शियम कम होने लगता है। हालांकि, महिलाएं वक्त रहते इस ओर ध्यान नहीं देतीं, जिसके कारण यह समस्या धीरे-धीरे ऑस्टियोपोरोसिस का रूप ले लेती है।

इसलिए समय पर कैल्शियम की कमी की पहचान करना जरूरी है। आइए जानें कैल्शियम की कमी होने पर महिलाओं में कैसे संकेत दिखाई देते हैं और इससे बचने के लिए क्या करना चाहिए।

मांसपेशियों में ऐंठन और दर्द- पैरों, हाथों और बाहों में बार-बार खिंचाव या ऐंठन होना कैल्शियम की कमी का शुरुआती लक्षण है। चलते या हिलते-डुलते समय जांघों और बाहों में दर्द महसूस हो सकता है।

ज्यादा थकान और सुस्ती- पूरी नींद लेने के बाद भी अगर आप दिनभर थका हुआ और सुस्त महसूस करती हैं, तो यह हड्डियों के कमजोर होने का संकेत हो सकता है। इससे ब्रेन फॉग और चक्कर आने जैसी समस्या भी हो सकती है।

कमजोर नाखून और रूखी त्वचा- कैल्शियम की कमी से नाखून पतले होकर टूटने लगते हैं। त्वचा में ज्यादा रूखापन और खुजली भी देखी जा सकती है।

दांतों की समस्या- हमारे शरीर का ज्यादातर कैल्शियम दांतों और हड्डियों में जमा होता है। कमी होने पर दांत कमजोर होने लगते हैं, मसूड़ों में दर्द होता है और दांतों में सड़न जल्दी लगने लगती है।

हड्डियों का कमजोर होना- हल्की सी चोट लगने पर फ्रैक्चर हो जाना या पीठ और गर्दन में लगातार दर्द रहना ऑस्टियोपोरोसिस की शुरुआत हो सकती है, जो कैल्शियम की भारी कमी का कारण है।

डेयरी प्रोडक्ट्स खाएं- दूध, दही, पनीर और छाछ कैल्शियम के सबसे बेहतरीन सोर्स हैं। रोजाना कम से कम दो गिलास दूध या एक कटोरी दही जरूर लें।

हरी पत्तेदार सब्जियां- पालक, मेथी, ब्रोकोली और बीन्स को अपनी डाइट का हिस्सा बनाएं। इनमें कैल्शियम के साथ-साथ फाइबर भी भरपूर होता है।

सीड्स और नट्स- तिल, चिया सीड्स, बादाम और अखरोट कैल्शियम के खजाने हैं। एक चम्मच सफेद तिल में काफी मात्रा में कैल्शियम होता है।

विटामिन-डी है जरूरी- बिना विटामिन-डी के हमारा शरीर कैल्शियम को अब्जॉर्ब नहीं कर पाता। इसलिए रोजाना 15-20 मिनट धूप में जरूर बैठें।

कैफीन और नमक पर कंट्रोल- ज्यादा चाय, कॉफी और नमक शरीर से कैल्शियम को बाहर निकाल देता है। इनका सीमित मात्रा में ही इस्तेमाल करें।

अंतर्मन

जग्गी वासुदेव

आपकी एकाग्रता बिखरी हुई है, क्योंकि आप जिसको ''मैं' कहते हैं वह है आपका शरीर, मन, घर, कार, पति, बच्चा, पालतू कुत्ता, शिक्षा, कारोबार, सत्ता और आपका जमा किया हुआ सब-कुछ, जिनसे आप पहचाने जाते हैं। यदि मैं आपकी इन सब पहचानों का आवरण हटा दूं तो आपको लगेगा कि आप कुछ भी नहीं हैं। इसलिए आप जिसको ''मैं' कहते हैं वह फिलहाल आपके चारों ओर फैली हुई चीजें और रिश्ते हैं। जब मैं ''आप' कहता हूं, तो उसका अर्थ केवल ''आप' है।

यह कार नहीं, यह यात्रा नहीं, आपका बच्चा नहीं, कुछ भी नहीं, केवल आप। यदि यह ''आप' अपने वास्तविक रूप के अलावा किसी भी दूसरी चीज से पहचाना नहीं जाता तब आप, जैसा चाहें वैसा, फिर से अपना भाग्य लिख सकती हैं। फिलहाल आप बिखरे हुए हैं। यह ''आप' नहीं हैं बल्कि सिर्फ जमा किया हुआ अतीत है। ''जब तक आप अपनी जमा की हुई इन सारी चीजों से पहचानी जाती हैं, तब तक आप एक भीड़ हैं, और भीड़ का भाग्य हमेशा पहले से तय होता है। जब आप एक व्यक्ति यानी इंडिविजुअल बन जाती हैं तो फिर कभी बांटी नहीं जा सकतीं। बांटी न जा सकने का मतलब होता है अनंत। आप अनंत के अलावा हर किसी चीज के टुकड़े कर सकती हैं। जो तोड़ा जा सकता है उसे पूरे स्थायित्व का बोध नहीं होता।

इसका मतलब यह है कि आप टुकड़ों में हैं अपने आपको एक साथ जोड़े रखना एक बहुत बड़ा करतब है। जब आप किसी और चीज से पहचान न बनाकर विशुद्ध ''आप' बन जाएंगे तभी आपका भाग्य आपके हाथ में होगा। मैं चाहता हूं कि आप यह समझ लें।' मैं भी यह समझना चाहती थी। उनकी बातें सुनकर मैं सोचने लगी कि अनजाने में मैं अपनी एकाग्रता को किस तरह बिगाड़ रही थी। मैं पहले जैसी चिंताओं में डूबी नहीं थी, लेकिन मेरा आध्यात्मिक भाग्य निश्चित रूप से मेरे हाथों में नहीं था। सद्गुरु अपने कहे अनुसार केवल प्रश्न का नहीं, व्यक्ति का उत्तर देते हैं।

मैं जानती थी कि उनकी यह बात मुझ पर सौ फीसद लागू होती है। फिर मैं सोचने लगी कि क्या मैं अब भी अपने शरीर, मन, घर-बार, कार, पति, बच्चा, कारोबार, सत्ता जैसी उनकी बताई सब चीजों के रूप में अधिक पहचानी जाती हूं? इन पहचानों के बिना मैं केवल अपने जीवन से कैसे पूरी तरह जुड़ी रहूं? कुछ लोग योगी बनने के लिए अपना सांसारिक जीवन छोड़ देते हैं। मैं अपने घर में रहकर अंतर्ज्ञान पाना चाहती थी।

जीवन के प्रति निराशा के बिना जीवन के प्रति प्रेम संभव नहीं है।

-अल्बेयर कामू, फ्रांसीसी दार्शनिक

सफाए के बाद सवाल

गृहमंत्री अमित शाह ने देश को नक्सलियों से मुक्त होने के घोषणा कर दी। 24 अगस्त 2024 को उन्होंने प्रण लिया था कि 31 मार्च तक वे देश से नक्सल समस्या का खात्मा कर देंगे और उसके एक दिन पहले लोकसभा में यह घोषणा की। निःसंदेह देश में अब भी दो प्रमुख नक्सली कमांडर, कुछ एरिया कमेटियां और चंद नक्सली बाकी हैं। जल्द ही इनकी भी गिरफ्तारी, समर्पण अथवा खात्मा होने के बाद आधिकारिक तौर पर यह कहा जा सकता है कि दुनिया का सबसे लंबे समय से चल रहा माओवादी उग्रवाद का अवसान हो चुका है।

निश्चित तौर पर छह दशक से चल रही, इस समस्या के निवारण का श्रेय केंद्रीय गृहमंत्री को जाता है, जिनकी नीति अनुसार सुरक्षाबलों, जंगलों में गुरिल्ला लड़ाई के लिए विशेष प्रशिक्षित बलों, राज्य की पुलिस इकाइयों ने मिलकर उस काम को अंजाम दिया, जो कुछ ही बरस पहले तकरीबन असंभव माना जा रहा था। 2019 से 2026 के बीच 7049 नक्सली गिरफ्तार किए गए और 5880 ने आत्म समर्पण किया। गृहमंत्री के प्रण के बाद तेलंगाना-छत्तीसगढ़ सीमा पर 23 मई 2025 को 'ऑपरेशन ब्लैक फॉरेस्ट' के दौरान कई हार्डकोर नक्सलियों की मौत ने उनकी कमर तोड़ दी। इसी साल कई कमांडरों के साथ 317 नक्सली मारे गए, 800 पकड़े और 2300 ने सरेंडर किया। सुरक्षा बलों ने 2024 के बाद से 748 गुरिल्लों को मार कर कीर्तिमान बनाया। इन सबके चलते बीते महीने तक, माओवादी गतिविधियों वाले जिलों की संख्या 800 से घटकर केवल सात रह गई। इस बरस के पहले तीन महीनों में ही तकरीबन 700 नक्सलवादी हिंसा का रास्ता छोड़कर मुख्यधारा में लौटे। सरकार के प्रलोभन और प्रताड़ना, पुचकारने और फटकारने वाली नीति भी सफल रही। उसने पिछड़े जिलों में स्वास्थ्य, शिक्षा, सड़क, बैंकिंग और मोबाइल कनेक्टिविटी मिशन चलाया। सख्ती बढ़ाने के साथ नक्सलियों के लिए सरेंडर और रिहैबिलिटेशन पॉलिसी, नकद प्रोत्साहन का लालच, नौकरी, कौशल प्रशिक्षण की बात की और समझा दिया कि अन्याय का समाधान संविधान में है, हथियार में नहीं। इन सबका फलितार्थ आज सामने है और नक्सलवाद की बस चंद सांसें ही बची हैं।

इस समाधान के पश्चात भी कुछ सवाल शेष हैं। क्या 'जंगल राज' के अंत के बाद आदिवासी क्षेत्रों में 'न्याय का राज' स्थापित होगा, या उसकी जगह 'खनन राज' ले लेगा? देश के लगभग 40 प्रतिशत खनिज भंडार आदिवासी बहुल क्षेत्रों में स्थित हैं और स्वतंत्रता के बाद विकास परियोजनाओं के नाम पर करोड़ों लोगों के विस्थापन का इतिहास हमारे सामने है, जिनमें बड़ी संख्या आदिवासियों की ही है। नक्सलवाद के खात्मे के बाद इन क्षेत्रों में केवल सड़कें, खदानें और उद्योग ही दिखाई दें और सामाजिक न्याय, स्थानीय भागीदारी न आए, तो इस शांति के स्थायित्व पर शंका बनी रहेगी। यदि विकास आदिवासियों की सहमति और भागीदारी के बिना थोपा गया, तो यह असंतोष को जन्म दे सकता है और बेशक उपेक्षा और अन्याय विद्रोह की जमीन तैयार करते हैं। नक्सल विचारधारा से सहानुभूति रखने वाले ग्रामीण और आदिवासी अभी मौजूद हैं, इसलिए नक्सलवाद भले मरे पर विचारधारा जिंदा रही, तो वह फिर हिंसक या अहिंसक रूप सामने आ सकती है।

प्रसंगवश

अमेरिकी लेखिका कैथरीन को जवाब थी 'मदर इंडिया'

1957 में रिलीज हुई महबूब खान निर्देशित कालजयी हिट फिल्म मदर इंडिया एक ऐसी ग्रामीण भारतीय नारी की कहानी थी, जो गरीबी, शोषण और संघर्ष से जूझते, अदम्य साहस का परिचय देते हुए अंत में अपने विद्रोही बेटे बिरजू को मार देती है। यह फिल्म 1940 में महबूब खान द्वारा ही बनाई गई फिल्म 'औरत' का रीमेक थी। यह एक ऐसी फिल्म थी, जिसने सामाजिक मुद्दों, जमींदारी और मातृत्व के चित्रण को दर्शकों के समक्ष प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया।

यह फिल्म अमेरिकी लेखिका कैथरीन मायो की 1927 में छपी विवादास्पद पुस्तक 'मदर इंडिया' का जवाब थी, जिसमें भारतीय समाज व संस्कृति को गलत ढंग से पेश किया गया था। पुस्तक में भारतीय महिलाओं की दुर्दशा, अछूतों के प्रति भेदभाव और राजनेताओं पर हमला किया गया था। महबूब खान को फिल्म बनाने और उसके शीर्षक का ख्याल 1952 में आया था। खान ने फिल्म बनाकर भारतीय महिलाओं की ताकत को पुरजोर ढंग से दिखाने का प्रयास किया था।

दीपक नौगांई

लेखक

फिल्म में राधा का मुख्य किरदार नरगिस द्वारा निभाया गया था। यह एक ऐसा किरदार था, जो आज भी उनके जीवंत अभिनय के लिए याद किया जाता है। नरगिस महबूब खान की 1943 में बनी फिल्म तकदीर में काम कर चुकी थीं। उस समय हिंदी फिल्मों में नरगिस बहुत लोकप्रिय थीं। मदर इंडिया का रोल नरगिस के लिए बहुत अहम था। एक इंटरव्यू में उन्होंने कहा था, 'जब मुझे मदर इंडिया का रोल दिया गया, तब मुझे लगा कि एक कलाकार होने के नाते मैंने जो उम्मीदें लगा रखी हैं, आखिर उनके पूरे होने का वक्त आ गया।' इस फिल्म में उनके बेटे की भूमिका सुनील दत्त (बिरजू) तथा राजेंद्र कुमार (रामू) ने निभाई थी। अभिनेता राजकुमार ने फिल्म में नरगिस के पति की तथा कन्हैयालाल ने जमींदार सूखीलाल का अभिनय किया था। फिल्म का बजट 25 लाख रखा गया था, जो बाद में बढ़कर 60 लाख हो गया। फिल्म बनाने में पूरे तीन साल लगे थे और लगभग 100 दिनों में शूटिंग हुई थी। फिल्म में मदर इंडिया की भूमिका निभाने वाली नरगिस एक्टर सुनील दत्त और राजेंद्र कुमार की हमउम्र थीं। इस फिल्म के सेट पर ही नरगिस और सुनील दत्त के बीच प्यार परवान चढ़ा था। कहते हैं, आग के एक दृश्य की शूटिंग के दौरान नरगिस आग में फंस गईं थीं, तब सुनील दत्त ने उन्हें आग से निकाला था। इसी दौरान वे करीब आए और बाद में उन्होंने शादी कर ली। 1958 में मदर इंडिया को तीसरी सर्वश्रेष्ठ फीचर फिल्म के लिए राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार से नवाजा गया था। यह उस समय की सबसे ज्यादा कमाई करने वाली फिल्म थी और जिसने बेस्ट फिल्म और बेस्ट एक्ट्रेस सहित कई फिल्म फेयर पुरस्कार जीते। फिल्म भारत की ओर से प्रतिष्ठित ऑस्कर पुरस्कार के लिए नामित होने वाली पहली फिल्म थी।

फिल्म के गीत बहुत लोकप्रिय हुए थे। शकील बदायूंनी के लिखे गीतों को नौशाद ने सुरों में बांधा था। नौशाद के संगीत की खूबी यह थी कि वे अपनी धुनों में लोक संगीत को बड़ी कुशलता से इस्तेमाल करते थे। फिल्म में कुल 12 गाने थे, जिनमें 'दुनिया में हम आए हैं', 'दुख भरे दिन बीते रे भैया', तथा 'होली आई रे कन्हाई' बहुत चर्चित रहे थे। फिल्म के ज्यादातर गीत शमशाद बेगम, मोहम्मद रफ़ी और मन्ना डे से गंवाए गए, जबकि नरगिस पर फिल्माए गीतों को लता मंगेशकर ने अपनी मधुर आवाज दी। फिल्म का छायांकन फरदून ए ईरानी ने किया था, जिनके साथ महबूब पहले भी फिल्म बना चुके थे। फिल्म में फरदून का छायांकन इतना बेहतर था कि गांव-देहात के दृश्य बड़े जीवंत होकर उभरते हैं। (ये लेखक के निजी विचार हैं।)

युद्धः ताकत, रणनीति और जिद के बीच फंसी दुनिया

राजेश जैन

वरिष्ठ पत्रकार

ईरान, अमेरिका और इजराइल के बीच चल रहा यह संघर्ष पारंपरिक युद्ध से कहीं ज्यादा जटिल है। इस युद्ध का सबसे बड़ा असर उन देशों पर भी पड़ रहा है, जो सीधे इसमें शामिल नहीं हैं।

मध्य-पूर्व एक बार फिर उस उबाल पर है, जहां हर मिसाइल सिर्फ सीमाओं को नहीं, बल्कि वैश्विक राजनीति, अर्थव्यवस्था और आने वाले समय की दिशा को प्रभावित कर रही है। ईरान, अमेरिका और इजराइल के बीच चल रहा यह संघर्ष पारंपरिक युद्ध से कहीं ज्यादा जटिल है। यह एक ऐसी लड़ाई है, जिसमें हर पक्ष जीत को अलग तरीके से परिभाषित कर रहा है। कोई वर्चस्व चाहता है, कोई सुरक्षा और कोई सिर्फ अपने अस्तित्व को बचाए रखना।

इस संघर्ष की पृष्ठभूमि दशकों पुरानी है। 1979 की ईरानी क्रांति के बाद से अमेरिका और ईरान के रिश्तों में अविश्वास स्थायी हो गया। इजराइल के लिए ईरान हमेशा एक संभावित खतरा रहा, खासकर उसके परमाणु कार्यक्रम और मिसाइल क्षमता के कारण। समय के साथ ईरान ने अपने प्रभाव का विस्तार लेबनान, सीरिया, यमन और गाजा तक किया, जिससे यह टकराव केवल दो देशों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि पूरे क्षेत्र में फैल गया। आज की स्थिति उसी लंबे तनाव का परिणाम है, जहां हर पक्ष, दूसरे को सीमित या कमजोर करना चाहता है।

अमेरिका इस युद्ध में सबसे उलझी हुई स्थिति में दिखता है। उसका घोषित उद्देश्य ईरान के परमाणु कार्यक्रम को रोकना है, लेकिन व्यवहार में उसके लक्ष्य कई परतों में बंटे हुए हैं। कभी वह सिर्फ सैन्य क्षमता घटाने की बात करता है, कभी ईरान की क्षेत्रीय पकड़ खत्म करने की और कभी सीधे सत्ता परिवर्तन की उम्मीद जताता है। यही अस्पष्टता उसकी रणनीति को कमजोर बनाती है। दूसरी तरफ घरेलू दबाव भी कम नहीं है। तेल की बढ़ती कीमतें, महंगा सैन्य अभियान और एक और लंबे मध्य-पूर्वी युद्ध में फंसने का डर। ऐसे में अमेरिका के लिए जीत को परिभाषित करना ही सबसे बड़ी चुनौती बन गया है।

इजराइल इस युद्ध में सबसे स्पष्ट लक्ष्य के साथ आगे बढ़ रहा है। उसके लिए ईरान की मिसाइल क्षमता और परमाणु कार्यक्रम सीधा अस्तित्व का सवाल है, इसलिए उसकी रणनीति बेहद आक्रामक और सटीक है-मिसाइल ठिकानों को नष्ट करना, कमांड सिस्टम तोड़ना और इस्लामिक रिवोल्यूशनरी गार्ड कोर (आईआरजीसी) के नेटवर्क को कमजोर करना। इजराइल सिर्फ तत्काल नुकसान पहुंचाना नहीं चाहता, बल्कि वह एक दीर्घकालिक डिटरेंस यानी ऐसा डर कि ईरान भविष्य में दोबारा ऐसी ताकत खड़ी करने से पहले कई बार सोचे, बनाना चाहता है, इसीलिए वह युद्ध को जल्दी खत्म करने के बजाय अपनी शर्तों पर समाप्त करना चाहता है।

ईरान इस संघर्ष को अलग नजरिए से देख रहा है। उसके लिए यह जीत-हार की लड़ाई नहीं, बल्कि अस्तित्व की लड़ाई है। वह जानता है कि पारंपरिक युद्ध में वह अमेरिका या इजराइल का मुकाबला नहीं कर सकता, इसलिए उसने अपनी रणनीति को 'असममित युद्ध' पर आधारित किया है। यहीं पर इस्लामिक रिवोल्यूशनरी गार्ड कॉर्प्स (आईआरजीसी) उसकी सबसे बड़ी ताकत बनकर सामने आता है। यह सिर्फ एक सैन्य संगठन नहीं, बल्कि एक वैचारिक और रणनीतिक ढांचा है, जिसके पास अपनी थल, वायु और नौसेना, मिसाइल प्रोग्राम, ड्रोन तकनीक और अंतर्राष्ट्रीय प्रॉक्सी नेटवर्क है। आईआरजीसी ने ईरान को एक हाइब्रिड वॉर मशीन में बदल दिया है- जहां ड्रोन, गुरिल्ला रणनीति और प्रॉक्सी समूह मिलकर युद्ध को लंबा और महंगा बनाते हैं। ईरान के लिए यही रणनीति सबसे बड़ी सुरक्षा है। वह जानता है कि अगर वह टिक गया, तो वह इस युद्ध को अपनी जीत के रूप में पेश कर सकता है।

इस युद्ध का सबसे बड़ा असर उन देशों पर पड़ रहा है, जो सीधे इसमें शामिल नहीं हैं। सऊदी अरब, यूएई और कतर जैसे देश लगातार हमलों और अस्थिरता का सामना कर रहे हैं। उनके लिए सबसे बड़ा खतरा आर्थिक है- तेल आपूर्ति, निवेश और क्षेत्रीय स्थिरता पर असर। होर्मुज़ जलडमरूमध्य इस पूरे संघर्ष का सबसे संवेदनशील बिंदु बन गया है। दुनिया का लगभग 20 प्रतिशत तेल इसी रास्ते से गुजरता है। अगर यह मार्ग बाधित होता है, तो इसका असर तेल की कीमतों से लेकर सप्लाई चेन तक, पूरी वैश्विक अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। यानी यह युद्ध अब सिर्फ सैन्य नहीं, बल्कि आर्थिक और रणनीतिक मोर्चे पर भी लड़ा जा रहा है।

सबसे बड़ा सवाल यही है कि यह युद्ध कब और कैसे खत्म होगा। फिलहाल तीन संभावनाएं दिखती हैं। पहली, अगर किसी तरह का कूटनीतिक समझौता होता है-हालांकि मौजूदा हालात में इसकी संभावना सीमित है। दूसरी, अगर सभी पक्ष युद्ध से थक जाएं और एक अनौपचारिक विराम बन जाए। तीसरी, अगर इजराइल, ईरान की सैन्य क्षमता को काफी हद तक कमजोर कर दे और ईरान सिर्फ टिके रहने को अपनी जीत मान ले, लेकिन सच्चाई यह है कि इस संघर्ष का कोई स्पष्ट और स्थायी अंत नजर नहीं आता। यह युद्ध रुक भी जाए, तो दूसरे रूप में जारी रह सकता है- प्रॉक्सी युद्ध, साइबर हमले या आर्थिक टकराव के रूप में।

ईरान युद्ध को समझने के लिए सिर्फ यह देखना काफी नहीं कि कौन किस पर हमला कर रहा है। असली कहानी यह है कि हर पक्ष क्या हासिल करना चाहता है और किस हद तक जाने को तैयार है। अमेरिका व्यवस्था बदलना चाहता है, इजराइल खतरा खत्म करना चाहता है और ईरान सिर्फ टिके रहना चाहता है। यही तीनों लक्ष्य इस युद्ध को लंबा और जटिल बना रहे हैं। दुनिया इस आग को जल्दी बुझते देखना चाहती है, लेकिन मध्य-पूर्व का इतिहास बताता है- यहां युद्ध खत्म नहीं होते, सिर्फ अपना रूप बदलते हैं।

(ये लेखक के निजी विचार हैं।)

आमने

आजकल दिल्ली में कोई भी उन पर ध्यान नहीं दे रहा है। कभी-कभी तो मुझे बड़ा तरस आता है। वैसे आप वरिष्ठ नेता हैं, मेरी संवेदनाएं आपके साथ हैं। आपने जैसा किया, वैसा आप भर रहे हैं। यह तो समय है, बड़ा बलवान है। आपने तड़पाया तो तड़पना तो आपको भी पड़ेगा।

-भजनलाल शर्मा

मुख्यमंत्री, राजस्थान

सामने

मुख्यमंत्री को कांग्रेस पार्टी के अंदरूनी मामलों पर अटकलें लगाने के बजाय शासन पर ध्यान देना चाहिए। कौन हमारी बात पर ध्यान दे रहा है या नहीं, यह आपकी चिंता का विषय नहीं है। ये हमारे अंदरूनी मामले हैं। आपको अपनी सरकार से जुड़े सवालों के जवाब देने चाहिए।

-अशोक गहलोत

पूर्व मुख्यमंत्री, राजस्थान

पश्चिम एशिया युद्ध में एआई का जमकर प्रयोग

रनबीर सिंह

वरिष्ठ पत्रकार

प्रमुख अमेरिकी टेक कंपनियों ने इज़राइली सेना को कमर्शियल एआई मॉडल और क्लाउड कंप्यूटिंग सेवाएं प्रदान की हैं। इसने बमबारी अभियानों को सशक्त बनाया है।

ऐसी सूचनाएं हैं, माइक्रोसॉफ्ट और ओपन एआई सहित प्रमुख अमेरिकी टेक कंपनियों ने इज़राइली सेना को कमर्शियल एआई मॉडल और क्लाउड कंप्यूटिंग सेवाएं प्रदान की हैं। यह ऐसी टेक्नोलॉजी है, जिसने गाज़ा और लेबनान में बमबारी अभियानों को चुपचाप सशक्त बनाया है। सन् 2024 की शुरुआत में, इज़राइली मीडिया में ऐसी रिपोर्टें सामने आई थी, जिनसे अनुमान लगाया गया कि इज़राइल गाज़ा में बमबारी के लक्ष्यों को चुनने में मदद के लिए एआई का इस्तेमाल कर रहा है। इज़राइल, हमास और हिज़्बुल्लाह के साथ अपने युद्ध में अमेरिकी टेक दिग्गजों के कमर्शियल एआई मॉडलों का इस्तेमाल कर रहा था। बताया गया था कि माइक्रोसॉफ्ट के एज़र प्लेटफ़ॉर्म पर बने अमेरिकी मॉडल इज़राइल के एआई सिस्टम के साथ एकीकृत किए गए थे, जिससे कमर्शियल एआई टेक्नोलॉजी का इजराइली सेना द्वारा इस्तेमाल लगभग 200 गुना बढ़ गया था।

अमेरिकन नेवी और एयरफोर्स ने प्रमुख रूप से एन्थ्रोपिक द्वारा विकसित क्लॉड का उपयोग ईरान और वेनेज़ुएला में युद्ध अभियानों के समर्थन में रीयल-टाइम टारगेटिंग और प्राथमिकता तय करने के लिए किया है। क्लॉड, मावेन स्मार्ट सिस्टम में एंबेडेड है, जो सेटेलाइट और अन्य खुफिया डेटा से संभावित लक्ष्यों की पहचान करने के लिए एआई एल्गोरिदम का उपयोग करता है, जोकि मिलिट्री कमांड और कंट्रोल के लिए इस्तेमाल होता है। पालांतीर का मावेन स्मार्ट सिस्टम इमेज प्रोसेसिंग और सामरिक सहायता सहित विभिन्न अनुप्रयोगों के लिए एआई का उपयोग करता है, जिससे लक्ष्यों का सुझाव देकर और उन्हें प्राथमिकता देकर हमले की क्षमताओं में तेज़ी आती है।

पश्चिम एशिया में मौजूदा सशस्त्र संघर्ष के दौरान अमेरिका की नेवी और एयरफोर्स ने एआई का जम कर इस्तेमाल किया है। यह अनेक स्तरों पर हुआ है- व्यूह-रचना और हमले की योजना बनाने के लिए, हमलों की कामयाबी परखने के लिए, युद्ध किस दिशा में जाएगा, यह जानने के लिए और कौन से अस्त्र ईरानी ठिकानों पर सटीक निशाना लगा कर उन्हें तबाह कर सकते हैं आदि की सटीकता की जांच करने के लिए और खुद अपने बचाव की रणनीति अपनाने के लिए भी। दूसरी ओर, ईरान ने तेहरान में पिछले दसेक साल में अपना जो विशाल डाटा सेंटर खड़ा किया था, उससे भी ईरानी कमांडरों और नेताओं ने बहुत मदद ली है। इस डाटा और प्रोसेसिंग सेंटर ने दुनियाभर से इनफार्मेशन डाउनलोड करके, ख़ुफ़िया तरीके से या खरीद कर जैसे भी, से प्रोसेस किया होगा, उसके बारे में हम सोच भी नहीं सकते। मुझे इसका थोड़ा सा अनुमान तीनेक साल पहले लगा था, तब मैं तेहरान के डाटा एंड प्रोसेसिंग सेंटर की क्षमता देखकर हैरान हुआ था। प्रेसिडेंट डॉनल्ड ट्रंप ने ईरानियों को उसी तरह से बेवकूफ और नालायक समझा था, जैसा सद्दाम हुसैन को, और सोचा था कुवैत और इराक में जो किया वैसा ही रिजल्ट अब मिलेगा। उत्तरी विएतनाम के विएतकॉंग्स ने छापामार युद्ध करके अमेरिका के छक्के छुड़ाए थे। तब प्रीसीजन बम और कंप्यूटर टेक्नोलॉजी का विकास नहीं हुआ था। न ही अमेरिका की चिप बनाने वाली कंपनियां सन् 1980 तक ऐसी चिप बनाने में सक्षम हुईं थीं, जिन्हें मिसाइल गाइडेंस और टारगेट पहचान के लिए इस्तेमाल किया जा सके।

चालू युद्ध में हाई-टेक अमेरिका की हिम्मत नहीं हो रही है। वे मरींस को ईरानी मुख्य भूमि पर उतारें और इन्फेंट्री, आर्टिलरी और आर्मर्ड डिवीज़न को लगा दें। बेशक अमेरिका के पास ईरान और आसपास के इलाके के उच्च गुणवत्ता वाले सेटेलाइट इमेजेज हैं और उन्होंने अपने जासूसी उपग्रहों को ईरान के ऊपर फिक्स कर दिया है, लेकिन युद्ध में असल मायने रखता है, हमला कहां से, कब और कितनी ताकत से होना है, इसकी जानकारी होना। इस युद्ध में छलावा तकनीक भी इस्तेमाल हो रही है। बावजूद इसके कि एआई रिसोर्सेज को अमेरिका ने पूरी तरह झोंक दिया है। वह ईरानी गार्ड्स की युद्ध नीति और मूवमेंट पर पूरी नज़र रखने में अक्षम नज़र आता है। युद्ध के दौरान कम लागत, कम समय में लक्ष्य को प्राप्त करने वाले उपयुक्त फ़ैसले तभी लिए जा सकते हैं, जब जानकारी काफ़ी हो, चाहे ग्राउंड बेस्ड रिसोर्सेज से हों या, रिमोट रिसोर्सेज से। ईरान द्वारा बहरीन में अमेज़न का क्लाउड सेंटर उड़ाना इसी योजना का हिस्सा है। हैरानी की बात है कि लॉजिस्टिक्स की कमी के चलते भी ईरान ने अमेरिका, इजराइल और इनके समर्थक अरब देशों में महत्वपूर्ण इंस्टालेशन और प्रॉपर्टी को ध्वस्त किया है। युद्ध में सटीक सूचनाएं मिलना एक जोखिम वाला काम है, फिर भी कुछ सूचनाएं बाहर आ रही हैं। बहुत सी तो अमेरिकी सूचना तंत्र से हैं, वेस्टर्न यूरोपियन मीडिया प्रतिनिधियों के हवाले से हैं और अंतर्राष्ट्रीय सूचना एजेंसीज के माध्यम से भी। ताक़तवर लोगों के पास हालात को तोड़-मरोड़कर पेश करने की वजहें होती हैं, इसलिए संघर्ष से जुड़ा डाटा देने वाली संस्थाएं ख़बरों, रिपोर्टों, स्थानीय स्रोतों और जानकारियों का विश्लेषण करने के लिए इंसानी कोडर्स का इस्तेमाल करती हैं। (ये लेखक के निजी विचार हैं।)

सोशल फोरम

स्त्री के हिस्से की प्रतिक्रियाएं

स्त्रियों के मामले में इस समाज की फिक्र और यक़ीन perfect victim औरतों के लिए reserve हैं। इस सड़े समाज में मज़बूत लड़कियों के साथ बुरे से बुरा हो गया, लेकिन पहला सवाल उसकी मजबूती पर हुआ, फिर एक बड़े तबके ने उन पर यक़ीन करने से इंकार किया, फिर एक तबके ने उन्हें नीचा दिखाना, उनकी बेइज्जती करना, उनकी सरेआम witch hunting करना अपना पुश्तैनी अधिकार समझा, एक तबका तो ख़ैर ये मानकर चला कि इस तरह की लड़कियों को इन सब से तकलीफ़ होती ही नहीं।

आशिमा आशी

वरिष्ठ पत्रकार

सांत्वना के सारे शब्द कुर्बानी देने वाली, so called सब सह लेने वाली संस्कारी और performative औरतों के हिस्से आए, भले ही इनमें से बहुतों ने अपने privileges की ख़ातिर ये सब किया, लेकिन सब अनदेखा कर दिया गया। आपने मजबूती चुनी, आज़ादख्याली चुनी, तो तकलीफ़ के सुबूत हर क़दम मांगे जाएंगे, या फिर मान ही नहीं सकते कि आपको भी तकलीफ हो सकती है।

कभी कोई जिम जाने वाली लड़की कह दे कि उसे डर लग रहा है, तो सबसे पहली प्रतिक्रिया हंसने की आती है।

दिल दुख से भर जाता है जब कोई आपका अपना कहे कि उसको तुम्हारी कभी फिक्र नहीं करनी पड़ी, क्योंकि उसे पता था कि तुम ख़ुद को संभाल लोगी, मजबूती से मुसीबत का सामना कर लोगी, अपने लिए स्टैंड ले लोगी, देर-सवेर सब ठीक कर ही लोगी, लेकिन ये सब करने में तुम्हें बीमार कर देने की हद तक तकलीफ़ होगी, कोई नहीं मानेगा। धीरे धीरे मजबूती की पहली पहचान यही बन जाएगी कि आपकी फिक्र ही नहीं की जा रही, सब मान कर चल रहे हैं कि तुम तो ठीक ही हो।

बहुत समय नहीं बीता, जब देश की मेडलधारी पहलवान लड़कियां अपने शोषण के ख़िलाफ़ खड़ी हुईं। तब उनका भी बहुत लोगों ने यह कह कर मजाक उड़ाया था कि इतनी पहलवान बनती हैं, इनको कौन प्रताड़ित कर लेगा और इनको प्रताड़ित होता देख एक तबके को सबसे ज़्यादा मज़ा आया।

यह बात सच है कि कमज़ोर लड़कियां narcissistic abuse की आसान शिकार रहीं, लेकिन एब्यूज करने वालों ने सबसे ज्यादा pleasure मजबूत लड़कियों को बेइंतहा तकलीफ़ देकर पाया।

-फेसबुक वाल से

सामयिकी

सरल कर्ज के मायाजाल में जकड़ रहे हैं लोग

आज देश में 'सरल कर्ज' की नीति को विकास और आर्थिक समावेशन के नाम पर तेजी से बढ़ावा दिया जा रहा है। बैंक, माइक्रो-फाइनेंस संस्थान और डिजिटल लोन ऐप्स मिनटों में कर्ज देने का दावा कर रहे हैं। 'अभी खरीदें, बाद में भुगतान करें', 'शून्य ब्याज EMI', 'बिना दस्तावेज़ लोन' जैसी योजनाएं आम लोगों को आकर्षित कर रही हैं, लेकिन इस आसान कर्ज की संस्कृति कहीं देश को आर्थिक रूप से कमजोर करने की दिशा में तो नहीं ले जा रही— यह सवाल अब गंभीर बहस का विषय बनता जा रहा है।

पहले कर्ज एक जिम्मेदारी माना जाता था। व्यक्ति कर्ज लेने से पहले कई बार सोचता था और केवल आवश्यकता होने पर ही ऋण लेता था, लेकिन अब कर्ज को जीवनशैली का हिस्सा बना दिया गया है। मोबाइल फोन, कार, फर्नीचर, पर्यटन, शादी-समारोह, हर चीज के लिए कर्ज आसानी से उपलब्ध है। परिणामस्वरूप लोगों की आय का बड़ा हिस्सा ईएमआई में चला जाता है और बचत की प्रवृत्ति कमजोर होती जा रही है। यह प्रवृत्ति केवल व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए भी खतरनाक है। जब बड़ी संख्या में लोग कर्ज चुकाने में असमर्थ होते हैं, तो बैंकों का एनपीए (Non-Performing Assets) बढ़ता है। इससे बैंकिंग प्रणाली पर दबाव बढ़ता है और अंततः सरकार को हस्तक्षेप करना पड़ता है। यह बोझ अंततः करदाताओं पर ही पड़ता है। इस प्रकार आसान कर्ज का भार पूरे देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ता है।

आकाश सपेलकर

वकील, सुप्रीम कोर्ट

सरकारें भी लोकप्रियता हासिल करने के लिए समय-समय पर कर्ज माफी योजनाएं और आसान ऋण वितरण योजनाएं लागू करती हैं। अल्पकालिक दृष्टि से यह कदम राहत देने वाले प्रतीत होते हैं, लेकिन दीर्घकाल में यह वित्तीय अनुशासन को कमजोर करते हैं। इससे कर्ज लौटाने की जिम्मेदारी की भावना कम होती है और आर्थिक व्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

सरल कर्ज का सबसे घातक रूप घरेलू स्तर पर दिखता है। सरकारी योजनाओं, जैसे- पीएम किसान सम्मान निधि या मुद्रा लोन के नाम पर किसानों और छोटे व्यापारियों को आसानी से ऋण मिलता है, लेकिन बिना वित्तीय साक्षरता के ये कर्ज डूब जाते हैं। नेशनल सैंपल सर्वे के अनुसार, 40% से अधिक किसान कर्ज के जाल में फंसे हैं, जो आत्महत्याओं का कारण बन रहा है। सरल कर्ज विकास का वरदान लगता है, लेकिन वास्तव में यह निर्भरता का जाल बुनता है, जिसमें ब्याज चक्रवृद्धि होकर परिवार को बर्बाद कर देता है। क्या यह सुनियोजित है? कुछ अर्थशास्त्री इसे 'ऋण जाल' (Debt Trap Diplomacy) कहते हैं। चीन का बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव अफ्रीका और एशिया में कई देशों को इसी तरह फंसाकर बंदरगाह हड़प चुका है। भारत में भी बड़े विदेशी निवेशक सरल कर्ज देकर संपत्ति पर कब्जा जमाने को उत्सुक हैं। अगर समय रहते नहीं चेते, तो आने वाली पीढ़ियां कर्ज के बोझ तले दबी रहेंगी। टैक्स बढ़ेंगे, सब्सिडी कटेंगी और विकास रुक जाएगा।

डिजिटल लोन ऐप्स ने इस समस्या को और गंभीर बना दिया है। कई ऐप्स अत्यधिक ब्याज दरों पर कर्ज देते हैं और भुगतान में देरी होने पर मानसिक दबाव और धमकियों का सहारा लेते हैं। इससे आम नागरिक आर्थिक संकट के साथ-साथ मानसिक तनाव का भी देश का युवा अक्सर अपनी अनावश्यक आवश्कता के लिए सरल माध्यम से कर्ज लेता है और निजी संस्थान के लालच पर आकर फंसता जाता है। वैश्विक सत्तर पर भी देखा गया है कि लोगों ने आत्महत्या की, जिसका मुख्य कारण बैंको द्वारा कर्ज था। (ये लेखक के निजी विचार हैं।)

स्वामी-रुहेलखंड इंटरप्राइजेज के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक हरि ओम गुप्ता द्वारा अमृत विचार प्रकाशन, नवादा जोगियान, चक रोड, रोहिलखंड मेडिकल कॉलेज के सामने, बरेली (उ.प्र.), पिन कोड-243006 से मुद्रित एवं 932 कटरा चांद खां, भारत पेट्रोल पंप के सामने पीलीभीत बाईपास रोड बरेली (उ.प्र.) पिन कोड-243005 से प्रकाशित। **संपादक- राजेश श्रीनेत, स्थानीय संपादक- नवीन गुप्ता*** 0581-4000222 (कार्यालय), ईमेल- editorschoice@amritvichar.com, आर.एन.आई नं0-UPHIN/2019/78502, *इस अंक में प्रकाशित समाचार के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट की धारा 7 के अंतर्गत उत्तरदायी। (नोट-सभी विवादों का न्यायक्षेत्र बरेली होगा)।

आज जब पूरा विश्व अस्थिरता और अशांति की आग में झुलस रहा है, ऐसे समय में सम्राट संप्रति संग्रहालय का संदेश केवल भारत के लिए ही नहीं, बल्कि समस्त मानवता के लिए बहुत अहम है।

– नरेन्द्र मोदी

बिहार के नालंदा में स्थित श्री शीतला माता मंदिर में हुए हादसे में कई श्रद्धालुओं के निधन का समाचार अत्यंत हृदयविदारक है। इस कठिन समय में मेरी गहरी संवेदनाएं शोकाकुल परिवारों के साथ हैं। ईश्वर शोक संतप्त परिजनों को यह असीम दुःख सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

-पुष्कर सिंह धामी

संपादकीय

ट्रंप का असमंजस

ईरान के साथ चल रहा युद्ध अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप पर भारी पड़ने लगा है। अमेरिका को रोजाना युद्ध में तकरीबन एक अरब डॉलर का नुकसान उठाना पड़ रहा है। जिसके चलते जनता में उनके खिलाफ आक्रोश बढ़ रहा है। उनकी लोकप्रियता में तेजी से गिरावट आई है। अमेरिका के भीतर और बाहर बड़े पैमाने पर उनके खिलाफ विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं। उनके तानाशाही रवैए से नाराज लोग 'नो किंग' के नारे लगा रहे हैं। युद्ध के चलते अमेरिका सहित दुनिया भर के हालात बिगड़ने लगे हैं। तेल के भाव आसमान छू रहे हैं। रोजमर्रा की जरूरत की चीजें मंहगी हो रही हैं। जिससे राष्ट्रपति ट्रंप की भी चिंता बढ़ गई है। वे किसी न किसी तरह से यह युद्ध जल्द खत्म कराना चाहते हैं। लेकिन उन्हें सूझ नहीं रहा है कि आखिर कौन सी रणनीति अपनाएं और युद्ध से बाहर निकलें। लड़ाई शुरू होने से पहले उन्होंने दावा किया था कि ईरान एक सप्ताह से ज्यादा जंग में टिक नहीं पाएगा। लेकिन यहां तो महीने भर से ज्यादा का वक्त बीत गया। ईरान की टॉप लीडरशिप मार दी गई। इसके बावजूद वह पीछे हटने को तैयार नहीं है। यहां तक कि अमेरिका के शांति प्रस्ताव को भी ठुकरा चुका है। ऐसे में राष्ट्रपति ट्रंप कभी समझौते तो कभी ईरान को तबाह करने की धमकी दे रहे हैं। वे कह रहे हैं कि ईरान अगर युद्ध खत्म करने पर राजी नहीं होता है तो उसके ऊर्जा केंद्र वे तेल कुंओं को नष्ट कर दिया जाएगा। लेकिन ईरान उनकी धमकी के आगे झुकने को तैयार नहीं है। ईरान के लोग कह रहे हैं कि आखिरी सांस तक लड़ाई होगी,चाहे जो भी कीमत चुकानी पड़े। यानी अमेरिका अगर यह सोचता है कि वह ईरान को तबाह करके युद्ध जीत लेगा तो यह भी आसान नहीं है। इसके लिए लंबा युद्ध चलेगा और उसे भी इसकी बड़ी कीमत चुकानी पड़ सकती है।जिसके लिए अमेरिकी जनता तैयार नहीं है। इसीलिए वे साम,दाम,दंड,भेद किसी भी तरीके से युद्ध से बाहर निकलना चाहते हैं। इसी कड़ी में एक तरफ खाड़ी में अपने 50 हजार जवान उतारकर जमीनी युद्ध करने व खार्क पर कब्जा करने की बात कर रहे हैं,जहां से ईरान का 90 फीसदी तेल विभिन्न देशों को भेजा जाता है। यानी उसके ऊर्जा का सबसे बड़ा केंद्र है। तो दूसरी तरफ यह भी कह रहे हैं कि दोनों देश समझौते के करीब पहुंच चुके हैं। जल्द ही समझौता हो जाएगा। साथ ही वह यह भी कहते हैं कि उनकी नजर ईरान के तेल पर है। लेकिन जब समझौता हो जाता है अथवा युद्ध में ईरान के ऊर्जा केंद्र नष्ट हो जाते हैं तो तेल बचेगा ही कहां,जिस पर ट्रंप कह रहे हैं कि उनकी नजर है। इस तरह ट्रंप के इस असमंजस ने पूरी दुनिया का असमंजस बढ़ा दिया है। जिससे बाजार में अनिश्चितता का माहौल है। शेयर बाजार तबाह हो रहा है। हां, चीन जैसे कुछ सक्षम देश किसी भी परिस्थिति से निपटने के लिए अपने तेल-गैस के भंडार को समृद्ध कर रहे हैं। तस्वीर कुछ भी साफ नहीं है। तमाम देश अपने-अपने तरीके से खतरे का आकलन करते हुए उससे निपटने की तैयारी कर रहे हैं। स्वयंभू शांति दूत ट्रंप जो अभी तक भारत-पाक जंग सहित आधा दर्जन से ज्यादा युद्धों को रोकवाने का दावा करते हुए नोबेल शांति पुरस्कार की मांग कर रहे थे,वह चाहकर भी ईरान के साथ चल रहे युद्ध को खत्म नहीं करा पा रहे हैं। यह अलग बात है कि युद्ध की शुरुआत भी उन्होंने ही किया था। वहीं वालस्ट्रीट जर्नल कह रहा है कि ट्रंप ने अपने सलाहकारों से कहा है कि ईरान को इस बात के लिए राजी कराया जाए कि वह अपने तेल संसाधनों पर अमेरिकी शर्तें स्वीकार कर ले। लेकिन ईरान कह रहा है कि युद्ध भले ही अमेरिका ने शुरू किया था,लेकिन अंत वही करेगा। यानी अमेरिका की कोई भी शर्त उसे स्वीकार नहीं है। वह युद्ध अपनी ही शर्तों पर खत्म करेगा। तो ऐसे में ट्रंप का मकसद कैसे पूरा होगा। ईरान की प्रमुख शर्त है कि उसका परमाणु कार्यक्रम जारी रहेगा। अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी की निगरानी के नाम पर उसके कार्यक्रम को रोकने की कोशिश नहीं की जानी चाहिए। इस तरह ईरान किसी भी कीमत पर अमेरिका या किसी एजेंसी को अपने परमाणु कार्यक्रम में दखल की इजाजत देने के लिए तैयार नहीं है। जबकि ट्रंप अब ऐसी स्थिति में हैं कि वह एक छोटी जीत पर भी जंग खत्म करना चाहते हैं। वे कूटनीतिक समझौते व सैन्य आक्रामकता के बीच अटके हुए हैं। यही उनका असमंजस है।

कांग्रेस की विरासत पर हिमंता ने कैसे जमाया आधिपत्य

क्रांति कुमार पाठक

भारत का निर्वाचन आयोग असम में विधानसभा चुनाव का चुनावी कार्यक्रम जारी कर दिया है। यहां एक ही चरण में 9 अप्रैल को मतदान होने हैं। जबकि नतीजे 4 मई को घोषित होंगे। दरअसल, पिछले एक दशक में असम की राजनीति काफी बदल चुकी है। साल 2016 में पूर्वोत्तर की पहली भाजपा सरकार असम में बनी थी। भाजपा ने तरुण गोगोई के 15 साल के कांग्रेस शासन को खत्म किया था। इसके बाद से पिछले दस वर्षों में भाजपा का नाटकीय तरीके से असम में विस्तार दिखा। इसका असर पूर्वोत्तर के अन्य राज्यों पर भी पड़ा, जिसकी सबसे अहम कड़ी वर्तमान में असम के मुख्यमंत्री हिमंता बिस्वा सरमा हैं। पिछले दस सालों में एक चीज अवश्य नहीं बदली, और वो कि हिमंता के नेतृत्व में कांग्रेस का एक बड़ा हिस्सा भाजपा में जुड़ता रहा।

वाकई, हिमंता बिस्वा सरमा की नाटकीय कहानी अब असम के राजनीतिक इतिहास का हिस्सा बन चुकी है। एक वक्त ऐसा था कि हिमंता कांग्रेस के दिवंगत मुख्यमंत्री तरुण गोगोई के चहेते थे, लेकिन गौरव गोगोई के राजनीति में उतरने के बाद हिमंता बिस्वा सरमा का तत्कालीन मुख्यमंत्री तरुण गोगोई से मोहभंग हो गया और उन्होंने 2015 में कांग्रेस छोड़ दी।

दरअसल, हिमंता बिस्वा सरमा तरुण गोगोई की सरकार के तीनों कार्यकालों में अहम हिस्सा थे। उन्होंने तुरंत भाजपा जॉइन की और ताकि अगले साल भाजपा की ऐतिहासिक जीत की रणनीति बनाने में मदद कर सकें। उनके भाजपा में शामिल होने के कुछ ही हफ्तों बाद नौ अन्य कांग्रेस विधायकों ने भी कांग्रेस से दूरी बना ली।

साल 2015 से लेकर अब तक, मुख्यमंत्री हिमंता बिस्वा सरमा के आसपास पूर्व कांग्रेस विधायकों और नेताओं का यह दायरा लगातार बढ़ता ही जा रहा है। कभी कांग्रेस में हिमंता बिस्वा सरमा के करीबी रहे कांग्रेसी पार्टी छोड़ भाजपा में आते जा रहे हैं। 2021 में जब उन्होंने अपनी महत्वाकांक्षा पूरी करते हुए मुख्यमंत्री का पद संभाला, तो उनके मंत्रिमंडल के तीन सबसे प्रमुख सदस्य भी उसी समय के कांग्रेस विधायक थे, जो वर्षों बाद उनके साथ भाजपा में शामिल हुए थे।इसमें से एक अजंता नियोग हैं, जो कि तरुण गोगोई की अंतिम

सरकार में मंत्री भी थीं। दूसरे पीयूष हजारिका और तीसरा नाम जयंता मल्ल बरुआ का है, जो कि उस अंतिम कांग्रेस सरकार में युवा और पहली बार विधायक बने थे। कांग्रेस से आए भाजपा में अपने साथियों को भी हिमंता ने भाजपा में खूब महत्व दिया।

सांसद प्रद्युत बोरदोलोई का भाजपा में जाना अहम है क्योंकि वे भी हिमंता बिस्वा सरमा और अजंता नियोग की तरह ही मुख्यमंत्री तरुण गोगोई के करीबी थे। इसके चलते अब भाजपा में हिमंता का कांग्रेस से आए लोगों का दायरा और मजबूत हो जाएगा। राज्य में कांग्रेस सरकार गिरने के बाद भी बोरदोलोई पार्टी से लोकसभा सांसद रहे। कांग्रेस के साथ चार दशकों से अधिक समय बिताने और पार्टी के कई पदों पर रहने के बाद वो भी भाजपा में चले गए। कांग्रेस के लिए विधानसभा चुनाव से पहले बोरदोलोई का भाजपा में जाना चिंताजनक इसलिए भी है क्योंकि वो असम विधानसभा चुनाव के लिए कांग्रेस की घोषणापत्र समिति के प्रमुख भी थे। उन्होंने एक धर्मनिरपेक्ष नेता की छवि छोड़कर हिमंता के साथ अपने पुराने संबंधों का हवाला दिया। उन्होंने उस भाजपा सरकार में शामिल होने के अपने फैसले को तर्कसंगत ठहराया, जिसकी उन्होंने पिछले 10 वर्षों से जमकर आलोचना की है।

साल 2021 के चुनाव में पार्टी की करारी हार के बाद असम कांग्रेस के अध्यक्ष नियुक्त किए गए भूपेन बोरा भी पिछले महीने भाजपा में शामिल हो गए थे। अब बोरदोलोई और भूपेन बोरा बीजेपी के 88 घोषित उम्मीदवारों की लिस्ट में शामिल हैं। बीजेपी प्रत्याशियों की लिस्ट में 11 नाम ऐसे हैं, जो कि 2011-2016 के कार्यकाल में कांग्रेस के विधायक थे। इसमें खुद हिमंता बिस्वा सरमा, अजंता निओग, पीयूष हजारिका, मल्ला बरुआ, कमलाख्या डे पुरकायस्थ, पल्लब लोचन दास, रूपज्योति कुर्मी, सुशांत बोरगोहेन और बोलिन चेतिया का नाम भी शामिल है। हिमंता ने एक-एक कर कांग्रेसी नेताओं को जोड़कर असम को भाजपा का अभेद्य दुर्ग तैयार कर लिया है। हालांकि, हिमंता बिस्वा सरमा ने पार्टी की सूची में पहली बार चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों खासकर युवाओं को प्राथमिकता दी है। हिमंता बोको से पबित्रा राभा, पालासबारी से हिमांशु शेखर बैश्य, बेहाली से मुनिंद्रा दास, रोंगानोडी से ऋषिराज दास, दीफू से रूपाली लंगथासा और तिताबोर से धीरज गोवाला का उदाहरण देते हुए कहा कि वह कांग्रेस के पूर्व नेताओं के इस समूह को भी लगातार बढ़ावा दे रहे हैं।

साल 2011-2016 की सरकार में कांग्रेस के दो और पूर्व विधायक प्रधान बरुआ और कृपानाथ मल्लाह, वर्तमान में भाजपा के लोकसभा सांसद हैं। भाजपा में प्रभाव रखने वाले इस गुट को अक्सर पुरानी भाजपा के सदस्यों की शिकायतों की वजह माना जाता है, जो कि भाजपा के सत्ता में आने से पहले ही भाजपा से जुड़े हुए थे। हाल के वर्षों में, इसी वजह से भाजपा के दिग्गज नेता राजेन गोहेन और अशोक शर्मा ने पार्टी छोड़ दी।

दिसपुर से बोरदोलोई की उम्मीदवारी ने वहां के मौजूदा भाजपा विधायक अतुल बोरा को भी नाराज कर दिया है, जो असम गण परिषद (एजीपी) के एक वरिष्ठ नेता हैं और 2013 में भाजपा में शामिल हुए थे। अतुल बोरा ने इसको लेकर धोखे का आरोप लगाया है। दरअसल, दिसपुर सीट राजनीतिक रूप से बेहद अहम मानी जाती है। ऐसे में यहां मुकाबला दिलचस्प होगा।

दरअसल, भाजपा के उदय में पूर्व कांग्रेस नेताओं की महत्वपूर्ण भूमिका का यह पैटर्न पूर्वोत्तर के दो अन्य राज्यों में भी दिखा है, जहां कांग्रेस ने तब से भाजपा को रास्ता दिया है। इसमें अरुणाचल प्रदेश, जहां भाजपा का नेतृत्व पेमा खांडू कर रहे हैं, और मणिपुर की बात करें तो वहां पार्टी की लीडरशिप एन बीरेन सिंह कर रहे हैं। असम में भाजपा में प्रमुख कांग्रेसी नेताओं का निरंतर शामिल होना हिमांता के लिए एक और उद्देश्य पूरा करता है, और वह मकसद अपनी राजनीतिक शक्ति का प्रदर्शन है।

अब वह जिस अगले नेता के बारे में यह दावा कर रहे हैं, वह असम विधानसभा में विपक्ष के नेता और पूर्व मुख्यमंत्री हितेश्वर सैकिया के पुत्र देबब्रता सैकिया हैं, जिनके नेतृत्व में हिमंता बिस्वा कांग्रेस में शामिल हुए थे। उनका लगातार यही संदेश है कि वह विपक्षी दल की आंतरिक गतिविधियों से भलीभांति परिचित हैं, जिसका नेतृत्व अब उनके कट्टर विरोधी गौरव गोगोई कर रहे हैं।

निश्चित तौर पर 2011-2016 के कांग्रेस विधायकों और भाजपा की उम्मीदवार सूची में सबसे बड़ा अंतर मुस्लिम उम्मीदवारों की अनुपस्थिति है। 2011 की जनगणना के अनुसार असम में मुस्लिम आबादी लगभग 34 फीसदी थी। लेकिन खास बात यह है कि इस बार भी भाजपा ने असम में एक भी मुस्लिम प्रत्याशी नहीं दिया है। मुस्लिम वोट बैंक को साधने की जिम्मेदारी भाजपा ने अपने सहयोगी असम गण परिषद पर छोड़ दी है।

अपनी नीतियों से ही घिरे डोनाल्ड ट्रंप

अमेरिकी संसद और इजरायल ट्रंप के नियंत्रण से बाहर

संजीव ठाकुर

घरेलू स्तर पर बढ़ती महंगाई, ऊर्जा संकट और राजनीतिक ध्रुवीकरण के बीच युद्ध की संभावनाएँ ट्रंप प्रशासन को अपेक्षाकृत अलग-थलग करती नजर आ रही हैं।दूसरी ओर मध्य पूर्व में इजरायल डोनाल्ड ट्रंप की नीतियों के नियंत्रण से बाहर हो गया है इजरायल की स्थिति भी बहुस्तरीय दबावों से घिरी हुई है जहाँ बेंजामिन नेतन्याहू की सरकार को एक तरफ सुरक्षा बनाए रखने की चुनौती है तो दूसरी तरफ लगातार सैन्य अभियानों के कारण सैनिकों की थकान, रिजर्व बलों पर बढ़ती निर्भरता और युद्ध की लंबी अवधि से उपजा मानसिक तनाव एक गंभीर चिंता बन चुका है। कई विश्लेषण यह संकेत देते हैं कि निरंतर युद्ध जैसी परिस्थितियों ने इजराइली सैनिकों की मनोबल और कार्यक्षमता दोनों को प्रभावित किया है जिससे भविष्य के अभियानों की गति और प्रभावशीलता पर असर पड़ सकता है।

ईरान को लेकर बढ़ते युद्धपरक माहौल मे डोनाल्ड ट्रंप आक्रामक नीतियाँ स्वयं अमेरिका के भीतर गहरे राजनीतिक और सामाजिक विरोध को जन्म दे रही हैं। जहा अमेरिकी संसद के अनेक सांसद इस आशंका को लेकर मुखर हैं कि एक और बड़े युद्ध में उलझना न केवल आर्थिक रूप से भारी पड़ेगा बल्कि अमेरिका को दीर्घकालिक सैन्य दलदल में धकेल सकता है, वहीं अमेरिकी जनता के इराक और अफगानिस्तान के अनुभवों से सीख लेते हुए नए संघर्ष के प्रति उत्साहित नहीं है बल्कि सशंकित और विरोधी रुख में दिखाई दे रही है अमेरिका की लगभग 90 लाख जनता इसके विरोध में अलग-अलग शहरों में ट्रंप की नीतियों का खुलकर विरोध कर रही है। परिणाम स्वरूप ट्रंप का आत्मविश्वास अब धीरे-धीरे डगमगाने लगा है और ट्रंप अपने बौद्धिक तथा युद्ध की नीतियों को लागू करने में घबराने लगे हैं।

घरेलू स्तर पर बढ़ती महंगाई, ऊर्जा संकट और राजनीतिक ध्रुवीकरण के बीच युद्ध की संभावनाएँ ट्रंप प्रशासन को अपेक्षाकृत अलग-थलग करती नजर आ रही हैं।दूसरी ओर मध्य पूर्व में इजरायल डोनाल्ड ट्रंप की नीतियों के नियंत्रण से बाहर हो गया है इजरायल की स्थिति भी बहुस्तरीय दबावों से घिरी हुई है जहाँ बेंजामिन नेतनाहू की सरकार को एक तरफ सुरक्षा बनाए रखने की चुनौती है तो दूसरी तरफ

लगातार सैन्य अभियानों के कारण सैनिकों की थकान, रिजर्व बलों पर बढ़ती निर्भरता और युद्ध की लंबी अवधि से उपजा मानसिक तनाव एक गंभीर चिंता बन चुका है। कई विश्लेषण यह संकेत देते हैं कि निरंतर युद्ध जैसी परिस्थितियों ने इजराइली सैनिकों की मनोबल और कार्यक्षमता दोनों को प्रभावित किया है जिससे भविष्य के अभियानों की गति और प्रभावशीलता पर असर पड़ सकता है। वहीं ईरान अपनी रणनीति के तहत प्रत्यक्ष टकराव से बचते हुए क्षेत्रीय सहयोगियों, प्रॉक्सी समूहों और सामरिक दबाव के माध्यम से संतुलन बनाए रखने की कोशिश कर रहा है। ईरान को अब हुति समूह का प्रत्यक्ष लाभ मिलना भी शुरू हो गया यह समूह लगातार इसराइल पर अलग-अलग तरीके से हमले करने लगा है। जिससे संघर्ष एक बहु-स्तरीय और अप्रत्यक्ष युद्ध का रूप लेता जा रहा है। यह स्थिति खाड़ी क्षेत्र में अस्थिरता बढ़ाने के साथ-साथ वैश्विक तेल आपूर्ति और समुद्री व्यापार मार्गों के लिए भी खतरा उत्पन्न कर रही है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त राष्ट्र संघ और अन्य वैश्विक संस्थाएँ शांति की अपील तो कर रही हैं लेकिन उनका प्रभाव सीमित होता जा रहा है जिससे कूटनीतिक प्रयास अपेक्षित परिणाम नहीं दे पा रहे हैं। इस पूरे परिदृश्य में अमेरिका का आंतरिक विरोध, इजराइल की सैन्य थकान, ईरान की रणनीतिक सक्रियता और वैश्विक शक्तियों की संतुलनकारी भूमिका मिलकर एक ऐसे जटिल भू-राजनीतिक संकट को जन्म दे रही हैं जहाँ किसी भी छोटी घटना से व्यापक युद्ध भड़कने की आशंका बनी हुई है। यदि यह टकराव नियंत्रित नहीं हुआ तो यह केवल क्षेत्रीय संघर्ष तक सीमित न रहकर वैश्विक आर्थिक अस्थिरता, ऊर्जा संकट और सुरक्षा व्यवस्था के व्यापक पुनर्संतुलन का कारण बन सकता है और यदि युद्ध परमाणु युद्ध में बदल जाता है तो वैश्विक स्थिति और भी गंभीर हो जाएगी उसके परिणाम स्वरूप पूरी दुनिया में मानवता के लिए एक बड़ा खतरा पैदा हो सकता है।

आगामी युद्ध यदि परमाणु युद्ध में परिणत होता है तो यह युद्ध पिछले दो विश्व युद्ध और परमाणु युद्ध से ज्यादा भयानक होगा इसमें पूरे विश्व को नई मुसीबत का सामना करना पड़ सकता है एवं पूरे विश्व में हाहाकार होने की संभावना बलवती हो गई है ।

कविता

डीजिटल शिक्षा

कर रहे हैं दिमाग की बत्ती अब ये धीरे-धीरे गुल,
नए-नए गैजेट्स और एडवांस एप्स फूलम फुल,
ए. आई का आया है अब असाधारण ख़ास ज़माना,
क्यों अपना दिमाग बोलो ज्यादा खामखां खपाना ।

चाहे कोई भी विषय से संबंधित हो अनगिनत सवाल,
बस चैट जी पीटी करो झट मोबाइल में तुम इन्स्टॉल,
पूरी दुनिया का ज्ञान आज उंगलियों पर यूँ मिल जाता,
अपनों से सलाह मशवरा लेने कहाँ अब कोई है जाता ।

डीजिटल शिक्षा का भी चल पड़ा है गरमा-गरम दौर,
मानसिक स्वास्थ्य अनुचित प्रयोग से हो रहा कमजोर,
आगे पीछे इन यंत्रों के अनावश्यक हर कोई रहा डोल,
मूर्खता में मशीनों को ही सौंप दिया स्वयं का कंट्रोल ।

स्वयं की तार्किक क्षमता और मेमोरी हो रही है कम,
बच्चों को मिली सुविधाएं मगर सिर बोझिल एकदम,
शिक्षा ग्रहण का तरीका हो सही संग ₹आनंद' न हो लुप्त,
वरना भुगतेंगे खामियाजा जो स्वचेतना हो गई सुप्त ।

मोनिका डागा "आनंद"

आपका मत

मंदिरों में भगदड़ की घटनाएं और सवाल

बिहार में नालंदा शहर के बिहार शरीफ में शीतलामाता मन्दिर में दर्शन करने वाले श्रद्वालुओं की भीड़ बेकाबू होने और भगदड़ मचने से ९ श्रद्धालुओं की दबने से दर्दनाक मृत्यु हो गई और अनेक घायल हो गए। जिनमें ८ महिलाएं और एक पुरुष बताये गए। वार-त्यौहार हो या कोई उत्सव आयजकों और स्थानीय प्रशासन को पता होता है कि कब कहाँ कितनी और कैसी व्यवस्था करनी होती है। यदा-कदा भीड़ कम-ज्यादा हो सकती है। फिर भी आयोजकों और प्रशासन की माकूल व्यवस्था में आखिर लापरवाही/चूक क्यों हो जाती है जिससे हादसे जन्म ले लेते हैं और निर्दोष श्रद्वालू भीड़ के शिकार हो जाते हैं? पहले भी देश के विभिन्न भागों में आयोजकों/प्रशासन की इन्तजामी लापरवाही से हादसे हुए हैं और महिला/पुरुष/बच्चे अकाल ही हादसे के शिकार हुए हैं। हाल ही में नालंदा में राष्ट्रपति द्रोपदी मुर्मू द्वारा वहां आयोजन में शिरकत पर २५०० सुरक्षाकर्मी व्यवस्था में लगाए गए थे किन्तु आम लोगों की भीड़ पर नियंत्रण/व्यवस्था में बहुत कम सुरक्षात्मक उपाय किये गए ऐसे सवाल स्थानीय लोगों द्वारा उठाये गए। ठीक है प्रोटोकॉल की व्यवस्था और आम व्यवस्था में अंतर होता है। किन्तु आम लोगों की सुरक्षा के लिए भी प्रशासन को माकूल व्यवस्था इतनी तो करनी ही चाहिए कि किसी तरह की कोई गमगीन घटना न होने पाए और आयोजकों व प्रशासन पर किसी भी तरह की लापरवाही पर प्रश्न न उठने पाए।

-शकुंतला महेश नेनावा

लोकसत्य
आप अपना मत और लेख इस मेल पर भेज सकते हैं
loksatyaedit01@gmail.com

Blogger

निजीकरण का बोलबाला: सरकारी स्कूलों पर गहराता संकट

डॉ. सत्यवान सौरभ

भारत की शिक्षा व्यवस्था आज एक गंभीर संकट के दौर से गुजर रही है। पिछले एक दशक में लगभग 94 हजार सरकारी स्कूल बंद हो चुके हैं, जबकि इसी अवधि में 51 हजार से अधिक निजी स्कूल खुल गए हैं। यह स्थिति न केवल सरकारी शिक्षा प्रणाली की कमजोरियों को उजागर करती है, बल्कि बढ़ते निजीकरण के कारण उत्पन्न सामाजिक असमानता को भी सामने लाती है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21A के तहत प्रत्येक बच्चे को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार दिया गया है, लेकिन वर्तमान परिस्थितियों में यह अधिकार धीरे-धीरे कमजोर पड़ता दिखाई दे रहा है। 2014-15 से 2023-24 के बीच सरकारी स्कूलों की संख्या 11,07,101 से घटकर 10,17,660 रह गई, यानी लगभग 89,441 स्कूल कम हो गए, जबकि निजी स्कूलों की संख्या 2,88,164 से बढ़कर 3,31,108 हो गई। यह प्रवृत्ति विशेष रूप से ग्रामीण भारत के लिए चिंताजनक है, जहां गरीब और वंचित वर्गों के बच्चों के लिए शिक्षा तक पहुंच लगातार कठिन होती जा रही है।

सरकारी स्कूलों के संकट का एक प्रमुख कारण "स्कूल मर्जर नीति" है, जिसके तहत कम नामांकन वाले छोटे स्कूलों को बड़े स्कूलों में मिला दिया जाता है। इससे ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में बच्चों के लिए स्कूल तक पहुंच कठिन हो गई है। मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में हजारों स्कूल बंद हुए हैं, जो कुल बंदी का बड़ा हिस्सा हैं। इसके अलावा, शिक्षकों की कमी, कमजोर आधारभूत संरचना और मिड-डे मील जैसी योजनाओं का सही ढंग से क्रियान्वयन

न होना भी नामांकन में गिरावट के प्रमुख कारण हैं। National Education Policy 2020 के कुछ प्रावधान, जैसे एकल शिक्षक स्कूलों को हतोत्साहित करना, भी इस प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप सरकारी स्कूलों में नामांकन में भारी कमी आई है, जबकि निजी स्कूलों में छात्रों की संख्या तेजी से बढ़ी है। गरीब परिवारों के बच्चे अब मजबूरन निजी स्कूलों की ओर रुख कर रहे हैं, लेकिन ऊंची फीस उनके लिए एक बड़ी बाधा बन जाती है।

निजी स्कूलों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है और शहरी क्षेत्रों में बड़ी संख्या में बच्चे निजी स्कूलों में पढ़ रहे हैं। हालांकि यह वृद्धि कई चिंताएं भी पैदा करती है। निजी स्कूलों में फीस में भारी वृद्धि देखी जा रही है, जिससे निम्न और मध्यम आय वर्ग के परिवारों के लिए शिक्षा प्राप्त करना कठिन होता जा रहा है। शिक्षा का यह बढ़ता निजीकरण उसे एक सामाजिक सेवा से अधिक एक व्यापार में बदलता जा रहा है। शिक्षा का अधिकार कानून के तहत 25 प्रतिशत सीटें गरीब बच्चों के लिए आरक्षित हैं, लेकिन इसका प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है, जिससे सामाजिक असमानता और गहरी हो रही है। एक ओर संपन्न वर्ग बेहतर संसाधनों और सुविधाओं वाले निजी स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करता है, वहीं दूसरी ओर गरीब वर्ग सीमित संसाधनों वाले सरकारी स्कूलों तक ही सीमित रह जाता है।

इस असंतुलन का सीधा प्रभाव ड्रॉपआउट दर पर भी पड़ रहा है। पिछले कुछ वर्षों में लाखों बच्चों ने स्कूल छोड़ दिया है, जिनमें बड़ी संख्या किशोरियों की है। इसके पीछे गरीबी, बाल श्रम, परिवार का प्रवास, स्कूलों की दूरी और सुरक्षा की कमी जैसे कई कारण जिम्मेदार हैं। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियों के लिए शिक्षा प्राप्त करना अधिक कठिन हो जाता है। जब परिवार निजी स्कूलों की फीस वहन नहीं कर पाते और आसपास सरकारी स्कूल उपलब्ध नहीं होते, तो बच्चों का शिक्षा से बाहर होना लगभग तय हो जाता है। यह स्थिति आने वाले समय में बेरोजगारी और सामाजिक असमानता को और अधिक बढ़ा सकती है।

शिक्षा का निजीकरण केवल एक शैक्षिक समस्या नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक असमानता को भी गहराता है। जब सभी वर्गों को समान शिक्षा के अवसर नहीं मिलते, तो समाज में अवसरों का असंतुलन बढ़ता जाता है। भारत में शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का केवल लगभग 3 प्रतिशत ही खर्च किया जाता है, जबकि इसे 6 प्रतिशत तक बढ़ाने का लक्ष्य अभी भी अधूरा है। इसका प्रभाव महिलाओं के सशक्तिकरण, रोजगार के अवसरों और देश के समग्र आर्थिक विकास पर पड़ता है। यदि यह स्थिति बनी रही, तो यह लोकतंत्र के लिए भी खतरा बन सकती है, क्योंकि एक शिक्षित समाज ही जागरूक और जिम्मेदार नागरिक तैयार करता है। इस संकट से निपटने के लिए सरकार को ठोस और प्रभावी कदम उठाने होंगे। स्कूल मर्जर नीति पर पुनर्विचार किया जाना चाहिए और ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे स्कूलों को संरक्षित किया जाना चाहिए।

सहज योग एक योग है, अवर योग सब रोग।
वेद आदि गुरु संत है, गुप्त धार चल लोग।

संपादकीय

धर्मांतरण पर कानून

धर्मांतरण पर महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ द्वारा पारित हालिया कानून भ्रामक ढंग से धर्म की स्वतंत्रता की हिफाजत का दावा करते हैं, लेकिन असल में ये इसका उलटा करते हैं। दोनों राज्यों द्वारा बनाये गये कानून राज्य से पूर्व अनुमति और सार्वजनिक घोषणा की जरूरत थोपकर, तथा सबूत का बोझ आरोपियों पर डालकर आस्था की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सीमित करते हैं। ये राज्य अब कम-से-कम ऐसे 10 अन्य राज्यों की कतार में शामिल हो चुके हैं जिन्होंने किसी व्यक्ति के अपनी पसंद के धर्म का पालन करने और उसके प्रति आस्था दिखलाने के अधिकार पर विस्तृत कानूनी पाबंदियां लगायी हैं। यह सच है कि जबरदस्ती और धोखाधड़ी से हर नागरिक की रक्षा करना राज्य का कर्तव्य है। लेकिन जब इस सिद्धांत को यह जांचने के लिए लागू किया जाता है कि क्या किसी व्यक्ति की धार्मिक आस्था आपराधिक जबरदस्ती या धोखाधड़ी का परिणाम है, तो नेक से नेक इरादा होने के बावजूद यह अव्यवस्था भरे अंधेरे में छलांग लगाना है। आस्था जैसे मामलों में किसी व्यक्ति के दिमाग में क्या चल रहा होता है, इसे दूसरा व्यक्ति पूरी तरह नहीं जान सकता और आस्था पर पहरेदारी की कोई भी कोशिश निश्चित रूप से मनमानी की ओर ले जायेगी। इन कानूनों को चुनौती देने वाली कई याचिकाएं सुप्रीम कोर्ट के सामने लंबित हैं और महाराष्ट्र तथा छत्तीसगढ़ में इन नये कानूनों की अंतिम स्थिति सुप्रीम कोर्ट द्वारा ऐसे कानूनों की संवैधानिकता के अंतिम निर्धारण से भी जुड़ी रहेगी। इस बीच, ये कानून सामाजिक व्यवस्था और आपसी मेल-जोल में खलल पैदा करेंगे, जो इनके घोषित लक्ष्यों के ठीक विपरीत होगा। इन कानूनों के प्रावधान कठोर, निजी जीवन में घुसपैठ करने वाले और प्राधिकारवादी हैं। महाराष्ट्र के कानून के तहत, जो व्यक्ति धर्मांतरण करना चाहता है उसे 60 दिन का नोटिस देना होगा और नामित प्राधिकारी से पूर्व अनुमति मांगनी होगी। धर्मांतरण को 25 दिन के भीतर पंजीकृत कराना होगा अन्यथा इसे शून्य माना जायेगा। प्राधिकारी स्थानीय स्तर पर, जिसमें संबंधित ग्राम पंचायत भी शामिल है, नोटिस प्रकाशित करके 30 दिन के भीतर आपत्तियां आमंत्रित करेंगे। अगर आपत्तियां मिलती हैं तो प्राधिकारी पुलिस को छानबीन करने का निर्देश दे सकते हैं। छत्तीसगढ़ के कानून में भी इसी तरह के प्रावधान हैं, लेकिन एक अतिरिक्त प्रावधान यह है कि यह पूर्वजों के धर्म में वापसी करने को अपने दायरे से बाहर रखता है। यहां तक कि सामुदायिक धार्मिक जुटान पर भी छत्तीसगढ़ का कानून लग सकता है, जो अविभाजित मध्य प्रदेश द्वारा बनाये गये साल 1968 के कानून की जगह आया है। धर्मांतरण-विरोधी कानून व्यक्ति की निर्णय-शक्ति के अभाव पर आधारित हैं और राष्ट्रीयता को धार्मिक आस्था से जोड़ने वाले वैचारिक ढांचे से प्रेरित हैं।

आज का विचार

अपने अंदर झांकने की हिम्मत रखो, वहां बहुत सारी कहानियां छिपी हुई हैं।

अर्थव्यवस्था दुरुस्त है लेकिन प्रबंधन दोषपूर्ण

अरविन्द मोहन

देर से ही सही लेकिन जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने ईरान इजरायल-अमेरिका युद्ध को लेकर संसद में और बाहर भी जब कभी भी कुछ कहा है तो वे स्थिति को गंभीर बताते हैं। लेकिन सोमवार को जब वित्त मंत्री निर्मला सीतारमन, जिनके ऊपर अर्थव्यवस्था के प्रबंधन का असली जिम्मा है, ने संसद में बयान दिया तो उनके कहने का मतलब ठीक वैसा नहीं था जैसा प्रधानमंत्री की चिंता है। उन्होंने अर्थव्यवस्था की स्थिति को मजबूत बताने के साथ ही रुपये की गिरावट को अन्य एशियाई देशों की मुद्राओं की तुलना में कम ही बताया। जिस दिन रुपया डालर के मुकाबले 95 के स्तर को छूकर वापस आया उस दिन ही हमारी वित्त मंत्री 4.1 फीसदी की गिरावट को कुछ ऐसा बता रही थीं कि पश्चिम एशिया संकट कोई चीज नहीं है। उन्होंने उसी दिन शेयर बाजार और सर्राफा बाजार की गिरावट का जिक्र करना भी जरूरी नहीं माना और सरकार द्वारा इस बीच उठाए कदमों की चर्चा भी नहीं की। हम जानते हैं कि सरकार ने पहले तो पेट्रोलियम वितरण में सबसे बड़ी निजी कंपनी को दाम बढ़ाने की छूट दी और फिर कमर्शियल गैस के दाम बढ़ाए। इससे भी आगे बढ़ाकर उसने विभिन्न करों में कटौती वापस लेकर तेल कंपनियों को लगभग दस रुपये लीटर का अतिरिक्त लाभ लेने की इजाजत दी। पहले यह धन सरकारी खजाने में आता था। बीते वर्षों में इससे सरकार को चालीस लाख करोड़ रुपये मिलने का अनुमान है। यह अभी घटा है, खत्म नहीं हुआ है। अब वित्त मंत्री को इन पक्षों की चर्चा करने में क्या दिक्कत थी इसे समझना तो मुश्किल है लेकिन यह समझने में कोई दिक्कत नहीं है कि अगर पाँच राज्यों में विधान सभा चुनाव न होते तो अब तक तेल और गैस की कीमतों में आग लग चुकी होती। और जो प्रधान मंत्री आजकल अर्थव्यवस्था की या मुल्क की हालत की चर्चा करते समय गंभीरता की चादर ओढ़े रहते हैं वही परेशानियों का शोर मचाते रहते। आज वे और उनके समर्थक(जिसमें मीडिया के लोग भी शामिल हैं) लगातार यही सूचना दे रहे हैं कि कहीममकमी नहीं है, सिर्फ विपक्ष अफवाह फैला रहा है। जाने कितने जहाज तेल और गैस लेकर होरमुज से आगे बढ़ चुके हैं। जबकि ऐसे जहाजों की संख्या पहले की तुलना में काफी घट गई है और ईरान ने भी बहुत मान मनौव्वल के बाद कुछ जहाजों को आने की इजाजत दी। उन पर बीमा का खर्च समेत बाकी क्या बोझ बढ़ा है उसका हिसाब अलग है। इस बीच हमारी सरकार ने रूस से तेल लेने में जो व्यवहार दिखाया है(और उसमें अमेरिकी दबाव बहुत साफ दिखता है) उससे नाराज रूस अब तेल देना ही बंद कर रहा है। इसलिए सिर्फ तेल वाले पक्ष की ही चर्चा हो तो उस पर वित्त मंत्री को काफी कुछ कहना था। वे बोलें न बोलें सामान्य समझ और बाहर दिख रहे दृश्य यह बताते हैं कि सचमुच के हाहाकार की स्थिति है। और अगर युद्ध अब जरा भी लंबा खींचा तो अर्थव्यवस्था के पूरे स्वास्थ्य को तो प्रभावित करेगा ही हमारी रसोई और पारिवारिक बजट को चौपट कर देगा। गैस की कमी ने होटलों-रेस्तरां में मेन्यू बदला है तो कई चीजों के दाम बढ़ गए हैं। कुछ उद्योग तो सीधे प्रभावित हो रहे हैं तो बाकी पर भी असर आएगा ही। निश्चित रूप से सरकार की एजेंसियां अपने काम में कुछ ज्यादा तत्पर हुई हैं लेकिन यह तत्परता देर से शुरू हुई है। जब प्रधानमात्री युद्ध शुरू होने के दो दिन पहले इजरायल में घूमने फिरने जाते हैं तो बाकी लोग कैसे आपात स्थिति की तैयारी कर सकते हैं। जब युद्ध की मार पड़ती है तो इजरायल अपनी स्थिति देखेगा और अमेरिका खाड़ी के अपने चेले चपाटियों की रक्षा करेगा या आपकी चिंता करेगा। और जब ईरान के ऊपर गलत हमले और उसके शासन प्रमुख की हत्या पर आपके मुंह से दो शब्द नहीं निकलते तो वह युद्ध लड़ते हुए आपको कैसे कंधे पर बैठाए घूमेगा। फिर तो आपको अपनी तैयारी और प्रबंधन से ही काम करना होता जो आपने दिखाई नहीं।

आज चुनावी चिंता से जो चौकसी दिखती है वही कुछ समय पहले से शुरू रहती तो कई मामलों में हम बेहतर स्थिति में होते क्योंकि युद्ध से हमारा नाता बहुत दूर दूर का ही है और हमने बाद में बेमतलब टांग अड़ाकर अपना नुकसान कराने वाली स्थिति नहीं बनाई है। लेकिन इस दौरान शेयर बाजार, करेंसी बाजार और सर्राफा बाजार में जिस तरह की हबराहट और बेचैनी दिख रही है उसका काफी कुछ तो हमारा खुद का बनाया हुआ है। जाने कब से जानकार कह रहे हैं कि हमारा शेयर बाजार ओवररेटेड है अर्थात जितना अच्छा हाल कम्पनियों का नहीं है उससे कहीं ज्यादा बढ़िया हाल उनके शेयरों का है। जाहिर है इस बनावटी खेल में सरकार और उसकी कर्त्ता-धरता संस्थाओं ने भी अपनी भूमिका निभाई है, साझा कोषों (निजी और सार्वजनिक क्षेत्र की) ने सरकार के निर्देश पर ही बाजार को ऊपर ही ऊपर बनाए रखा है-कुछ खास कंपनियों और समूहों के शेयरों पर खास कृपया बरसती रही है। अब युद्ध का असर तो दुनिया भर के बाजारों पर हुआ है। कायदे से उन बाजारों पर ज्यादा असर आना चाहिए था जिनके देश युद्ध में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उलझे हैं। लेकिन बिना युद्ध में लगे हमारे बाजार गिरावट में सबको मात देने के खेल में जुटे हैं। सर्राफा बाजार सिर्फ और सिर्फ मुनाफाखोरी और काला सफेद का खेल खेलने का मैदान बन गया है। चांदी की सट्टेबाजी की चर्चा ज्यादा रही लेकिन सरकार ने वायदा बाजार पर भी किसी तरह की सख्ती करके सट्टेबाजी पर अंकुश का प्रयास नहीं किया है। दुर्भाग्य यह है कि सोना चांदी में निवेश का रोग इधर धीरे धीरे वैश्विक बन गया है। आज यह गिरावट भारत में ही नहीं वैश्विक है लेकिन भारत जैसी स्थिति कहीं और नहीं है। यहां तो चांदी आधी कीमत पर आ गई है जबकि बाजार में चांदी की कमी सभी मानते हैं। करेंसी बाजार में रुपये को थामने की पहल अब जाकर शुरू हुई है लेकिन तब तक चीजें हाथ से निकाल गई हैं। रुपये की गिरावट को जो लोग अर्थव्यवस्था से अलग चीज मानते होंगे उनके अर्थशास्त्र के ज्ञान को नमस्कार करते हुए सिर्फ इतना कहना जरूरी है कि जिन क्षेत्रों में अर्थव्यवस्था का प्रदर्शन अच्छा है और जिन पर अभी तक युद्ध का असर ज्यादा नहीं दिखाता है वे सरकारी प्रबंधन के दायरे से दूर या हाशिये पर हैँ। सिर्फ राजकोषीय प्रबंधन में अनुशासन दिखता है जिसका श्रेय सरकार और वित्त मंत्री को दिया जा सकता है। बाकी तो गैस, तेल और फर्टिलाइजर के लिए छापे मारने के पीछे अर्थव्यवस्था की चिंता है या चुनाव की यह समझना कोई मुश्किल नहीं है।

सहज योग संदेश

श्री सद्‌गुरु देव जी की अनुभव वाणी

भेष तो संसार के लिए है, भगवान के लिए नहीं। भगवान का भेष अंतर है, किसको भगवान चाहता है, भाव यह है कि बाहर भेष की जरूरत नहीं है, आप सच्चा होकर भजन करें।

जारी

महर्षि सदाफल देव जी महाराज

सड़क निर्माण में गुणवत्ता पर सख्तीः जवाबदेही की नई राह

अरविंद रावल

देश में बुनियादी ढांचे के विकास को गति देने के साथ-साथ उसकी गुणवत्ता सुनिश्चित करना आज सबसे बड़ी आवश्यकता बन गया है। इसी दिशा में भारत सरकार के सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय द्वारा हाल ही में लिया गया सख्त निर्णय अत्यंत सराहनीय और दूरगामी प्रभाव वाला है। नई नीति के तहत यदि किसी भी राष्ट्रीय राजमार्ग में 50 मीटर से अधिक हिस्से में सड़क धंसती है, पुलिया में दरारें आती हैं अथवा निर्माण में तकनीकी खामियां पाई जाती हैं, तो संबंधित निर्माण कंपनी और ठेकेदार को न केवल भारी जुर्माने का सामना करना पड़ेगा, बल्कि उन्हें ब्लैकलिस्ट भी किया जाएगा। यह कदम ऐसे समय में उठाया गया है

जब देशभर में सड़क निर्माण कार्य अभूतपूर्व गति से चल रहा है। सड़क परिवहन मंत्रालय जब से नितिन गडकरी के नेतृत्व में आया है, तब से बीते डेढ़ दशक में इस क्षेत्र में ऐतिहासिक परिवर्तन देखने को मिले हैं। राष्ट्रीय राजमार्गों का व्यापक विस्तार हुआ है और आज देश का लगभग हर जिला नेशनल हाईवे नेटवर्क से जुड़ चुका है। यह न केवल विकास की रफ्तार को बढ़ाता है, बल्कि आर्थिक गतिविधियों को भी नई ऊर्जा प्रदान करता है। हालांकि, तेज गति से हो रहे निर्माण कार्यों के बीच गुणवत्ता को लेकर उठ रहे सवाल चिंता का विषय रहे हैं। कई स्थानों पर नई बनी सड़कों में दरारें, धंसाव और खराब निर्माण की शिकायतें सामने आई हैं। इसी पृष्ठभूमि में मंत्रालय द्वारा आयोजित उच्चस्तरीय बैठक में सड़कों की गुणवत्ता और रखरखाव को लेकर नई गाइडलाइन तैयार की गई है, जो निर्माण एजेंसियों की जवाबदेही तय करने की दिशा में एक ठोस पहल है। नितिन गडकरी की कार्यशैली शुरू से ही पारदर्शिता, समयबद्धता और परिणामोन्मुखी रही है। यही कारण है कि सड़क निर्माण के क्षेत्र में भारत ने वैश्विक स्तर पर अपनी एक अलग पहचान बनाई है। अब गुणवत्ता पर यह सख्ती इस दिशा में एक और महत्वपूर्ण कदम है, जो यह सुनिश्चित करेगा कि विकास केवल दिखावे तक सीमित न रहकर टिकाऊ और सुरक्षित भी हो। केवल केंद्र सरकार ही नहीं, बल्कि राज्य सरकारों और जिला प्रशासन को भी इस नीति से प्रेरणा लेते हुए अपने-अपने स्तर पर सड़कों के निर्माण और रखरखाव में सख्त और पारदर्शी रवैया अपनाना चाहिए। यदि ईमानदारी से मानकों का पालन किया जाए, तो ग्रामीण सड़कों से लेकर राष्ट्रीय राजमार्गों तक गड्ढों और दरारों की समस्या काफी हद तक समाप्त हो सकती है। स्पष्ट है कि अब समय आ गया है जब 'तेज विकास' के साथ 'उच्च गुणवत्ता' को भी समान प्राथमिकता दी जाए। सख्त नियमों का ईमानदारी से पालन ही सड़कों की दशा और दिशा दोनों को बदल सकता है।

सामयिक

क्या वाकई इंटरनेट को युद्ध से खतरा है?

महेन्द्र तिवारी

आज के डिजिटल युग में जब हम अपने स्मार्टफोन की स्क्रीन पर एक स्पर्श करते हैं और दुनिया के किसी भी कोने की जानकारी क्षण भर में हमारे सामने आ जाती है, तो हमारे मन में यह धारणा प्रबल होने लगती है कि इंटरनेट एक अदृश्य और वायरलेस शक्ति है जो हवा या बादलों के माध्यम से तैर रही है। 'क्लाउड' शब्द के बढ़ते प्रयोग ने इस भ्रम को और गहरा कर दिया है, जिससे हमें लगता है कि हमारा डेटा कहीं अंतरिक्ष में सुरक्षित तरीके से तैर रहा है। लेकिन जब भू-राजनीतिक तनाव बढ़ते हैं और युद्ध की बातें सामने आती हैं, तो एक सवाल बार-बार उठता है कि क्या वाकई इस अदृश्य और व्यापक नेटवर्क को युद्ध से खतरा है? इसका सीधा और स्पष्ट उत्तर है- हाँ, इंटरनेट को युद्ध से सबसे अधिक और संगीन खतरा है, और यह खतरा किसी काल्पनिक साइबर फिल्म से कहीं अधिक वास्तविक और भयावह है। वास्तविकता इस आभासी धारणा के बिल्कुल विपरीत और आश्चर्यजनक रूप से भौतिक है। हमारी संपूर्ण वैश्विक डिजिटल अर्थव्यवस्था, संचार तंत्र और यहां तक कि हमारी सामाजिक और सैन्य सुरक्षा भी समुद्र की अगाध गहराइयों में बिछे उन फाइबर ऑप्टिक केबल्स के एक जटिल जाल पर टिकी है, जिन्हें 'अंडर-सी केबल्स' कहा जाता है। दुनिया भर में फैले लगभग पांच सौ से अधिक ऐसे केबल्स का नेटवर्क ही वह अदृश्य जीवन रेखा है जो महाद्वीपों को एक दूसरे से जोड़ती है और वैश्विक इंटरनेट डेटा ट्रैफिक के नब्बे प्रतिशत से अधिक हिस्से का वहन करती है। आम धारणा के विपरीत, उपग्रह वैश्विक डेटा का केवल एक से तीन प्रतिशत हिस्सा ही संभाल पाते हैं, क्योंकि वे धीमी गति और अधिक लेटेंसी के साथ काम करते हैं। फाइबर ऑप्टिक केबल्स प्रकाश की गति से डेटा स्थानांतरित करती हैं, जो उन्हें आधुनिक सभ्यता के लिए अपरिहार्य बनाती हैं। लेकिन यही तकनीकी उपलब्धि आज एक बहुत बड़ी रणनीतिक चुनौती और कमजोरी बनकर उभरी है। इन केबल्स की महत्ता और उनके द्वारा नियंत्रित होने वाले डेटा की मात्रा का विश्लेषण करें, तो हम पाएंगे कि आधुनिक सभ्यता का कोई भी कोना इनसे अछूता नहीं है। बैंकों के लेन-देन से लेकर शेयर बाजार की हलचल तक, और रक्षा प्रणालियों के गुप्त संचार से लेकर आम नागरिकों के वीडियो कॉल तक, सब कुछ इन्हीं गहरे समुद्री मार्गों से होकर गुजरता है। एशिया, यूरोप और अमेरिका जैसे बड़े महाद्वीपों के बीच होने वाला व्यापार और कूटनीतिक विनिमय पूरी तरह से इन केबल्स की अखंडता पर निर्भर है। जब कोई युद्ध छिड़ता है, तो सबसे पहले शत्रु देश की अर्थव्यवस्था और संचार तंत्र को चकनाचूर करने की कोशिश की जाती है। इसी निर्भरता ने एक ऐसा 'एकल बिंदु विफलता' उत्पन्न कर दिया है, जिसे नष्ट करना किसी भी शत्रु देश के लिए पूरी दुनिया को घुटनों पर लाने का सबसे आसान और सस्ता तरीका हो सकता है।

वर्तमान में जिस तरह से वैश्विक तनाव बढ़ रहा है, उसने इन केबल्स की सुरक्षा पर एक बड़ा प्रश्नचिह्न लगा दिया है। विशेषज्ञों का मानना है कि आने वाले समय में युद्ध केवल सीमाओं पर नहीं, बल्कि समुद्र के तल पर भी लड़े जाएंगे। इन केबल्स को नुकसान पहुंचाना आज किसी भी आधुनिक सेना के लिए 'हाइब्रिड वॉरफेयर' का एक प्रमुख हिस्सा बन चुका है। कल्पना कीजिए कि यदि किसी संघर्ष के दौरान इन केबल्स को सुनियोजित तरीके से समुद्री बम या माइन ब्लास्ट के जरिए उड़ा दिया जाए या विशेष पनडुब्बियों के माध्यम से काट दिया जाए, तो परिणाम कितने विनाशकारी होंगे। इंटरनेट के बंद होने का मतलब केवल सोशल मीडिया का रुकना नहीं है, बल्कि इसका सीधा अर्थ है कि वैश्विक बैंकिंग प्रणाली ठप हो जाएगी, जिससे खरबों डॉलर का नुकसान मिनटों में हो सकता है। एटीएम काम करना बंद कर देंगे, क्रेडिट कार्ड ट्रांजैक्शन रुक जाएंगे और अंतरराष्ट्रीय व्यापार के लिए किए जाने वाले संचार के सभी माध्यम मृत हो जाएंगे। इससे भी भयावह यह है कि किसी देश की सैन्य और सुरक्षा एजेंसियां, जो गुप्त सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए इन सुरक्षित नेटवर्कों का उपयोग करती हैं, वे एक पल में अंधी और बहरी हो सकती हैं। यह स्थिति न केवल आर्थिक अराजकता पैदा करेगी, बल्कि किसी भी राष्ट्र की संप्रभुता को गंभीर खतरे में डाल देगी। इस खतरे की गंभीरता को समझने के लिए हमें इतिहास और हालिया घटनाओं की ओर देखना होगा। वर्ष 2024 में लाल सागर में हुई घटना ने पूरी दुनिया को झकझोर कर रख दिया था। वहां समुद्र के नीचे बिछी चार प्रमुख केबल्स को नुकसान पहुंचा, जिसका सीधा असर वैश्विक इंटरनेट कनेक्टिविटी और स्पीड पर पड़ा। उस समय इंटरनेट सेवाओं को पूरी तरह सामान्य करने में लगभग अस्सी दिन का समय लगा। यह घटना इस बात का जीवंत प्रमाण है कि समुद्र के नीचे स्थित ये ढांचे कितने असुरक्षित हैं। भले ही ये केबल्स स्टील की परतों और प्लास्टिक के आवरण से सुरक्षित की जाती हैं, लेकिन समुद्र की विशालता और वहां तक पहुंचने की मानवीय सीमाओं के कारण इनकी निगरानी करना लगभग असंभव है। केवल मानवीय हमले ही नहीं, बल्कि प्राकृतिक आपदाएं जैसे समुद्री भूकंप, सुनामी या जहाज के लंगर के टकराने से भी ये केबल्स अक्सर क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। लेकिन जब कोई क्षति युद्ध के दौरान जानबूझकर, किसी रणनीतिक लाभ के लिए पहुंचाई जाती है, तो वह पूरे विश्व के लिए एक सुरक्षा संकट बन जाती है। अंडर-सी केबल्स की मरम्मत करना अपने आप में एक अत्यंत कठिन, खर्चीला और समय लेने वाला कार्य है। ये केबल्स समुद्र के तल में हजारों मीटर की गहराई पर स्थित होती हैं, जहां दबाव इतना अधिक होता है कि कोई भी सामान्य गोताखोर वहां तक नहीं पहुंच सकता। जब कोई केबल खराब होती है, तो उसे ठीक करने के लिए विशेष केबल-रिपेयर जहाजों की आवश्यकता होती है, जिनकी संख्या दुनिया भर में बहुत सीमित है। इन जहाजों को पहले खराबी के सटीक स्थान का पता लगाना होता है, जो कि मीलों लंबी केबल में सुई खोजने जैसा कठिन कार्य है। एक बार स्थान मिल जाने के बाद, रोबोटिक उपकरणों या विशेष हुक के जरिए केबल को समुद्र की सतह पर लाया जाता है। वहां तकनीशियन फाइबर के उन सूक्ष्म रेशों को जोड़ते हैं, जो बाल से भी पतले होते हैं। इस पूरी प्रक्रिया में हफ्तों या कभी-कभी महीनों लग जाते हैं। यदि यह क्षेत्र किसी युद्धग्रस्त समुद्री सीमा में आता है, तो मरम्मत का कार्य लगभग नामुमकिन हो जाता है। यही कारण है कि यदि किसी बड़े पैमाने पर ऐसा हमला किसी युद्ध के दौरान हो, तो दुनिया का एक बड़ा हिस्सा लंबे समय के लिए डिजिटल अंधेरे में चला जाएगा। इस भौतिक नुकसान के साथ-साथ, युद्ध का एक और बहुत खतरनाक पहलू है जो सीधे इंटरनेट को निशाना बनाता है, जिसे हम 'साइबर वॉरफेयर' कहते हैं। आधुनिक युद्धों में साइबर हमले पारंपरिक हथियारों के साथ-साथ उतनी ही ताकत से इस्तेमाल होते हैं। इसमें डीडॉस अटैक, मैलवेयर, रैंसमवेयर और डेटा चोरी के जरिए इंटरनेट, नेटवर्क और डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर को अंदर से तबाह किया जाता है। हाल के वर्षों में रूस-यूक्रेन युद्ध में हजारों साइबर हमले हुए, जिसमें मैलवेयर का इस्तेमाल करके बिजली ग्रिड, बैंकिंग प्रणाली और संचार नेटवर्क को ध्वस्त करने की कोशिश की गई। इसी तरह, मध्य पूर्व और एशिया में हालिया भू-राजनीतिक तनावों के दौरान लाखों साइबर अटैक दर्ज किए गए, जिनका लक्ष्य रेलवे, बैंकिंग और सरकारी साइट्स को ठप करना था। जब किसी देश का इंटरनेट कनेक्टिविटी चार प्रतिशत तक गिर जाता है, तो उसका असर आम नागरिकों से लेकर सेना तक पर पड़ता है। यह एक ऐसा हथियार है जिसे चलाने के लिए किसी सीमा पर सैनिकों को तैनात करने की जरूरत नहीं होती; एक कुशल हैकर कमरे में बैठकर भी किसी देश की अर्थव्यवस्था को पैरालाइज कर सकता है। आजकल 'डेटा संप्रभुता' और 'डिजिटल राष्ट्रवाद' की बातें खूब होती हैं, लेकिन जब तक हमारे डेटा का भौतिक और आभासी मार्ग असुरक्षित है, ये बातें अधूरी ही रहेंगी। दुनिया के अधिकांश अंडर-सी केबल्स का स्वामित्व कुछ बड़ी टेक कंपनियों या फिर अंतरराष्ट्रीय टेलीकॉम कंसोर्टियम के पास है। यह निजी स्वामित्व सुरक्षा की एक और परत को जटिल बना देता है, क्योंकि इन निजी कंपनियों के पास किसी राष्ट्र-राज्य द्वारा समर्थित सैन्य हमले से इन केबल्स की रक्षा करने की क्षमता नहीं है। वर्तमान भू-राजनीतिक स्थिति ऐसी है कि बड़ी शक्तियां अपनी समुद्री क्षमताओं को बढ़ा रही हैं ताकि वे समुद्र के नीचे की गतिविधियों पर नजर रख सकें। ऐसी पनडुब्बियों का विकास किया जा रहा है जो केबल्स से डेटा को चोरी-छिपे टैप कर सकें या उन्हें नुकसान पहुंचा सकें। वैश्विक तनाव बढ़ने के साथ-साथ यह डर भी सच हो रहा है कि कोई भी बड़ी शक्ति इन केबल्स को ब्लैकमेल के हथियार के रूप में उपयोग कर सकती है। यदि कोई देश यह धमकी देता है कि वह किसी विशेष क्षेत्र की इंटरनेट केबल्स को काट देगा, तो वह बिना एक भी गोली चलाए उस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था को तबाह कर सकता है।

निजीकरण का बोलबाला

सरकारी स्कूलों पर गहराता संकट

डॉ. सत्यवान सौरभ

भारत की शिक्षा व्यवस्था आज एक गंभीर संकट के दौर से गुजर रही है। पिछले एक दशक में लगभग 94 हजार सरकारी स्कूल बंद हो चुके हैं, जबकि इसी अवधि में 51 हजार से अधिक निजी स्कूल खुल गए हैं। यह स्थिति न केवल सरकारी शिक्षा प्रणाली की कमजोरियों को उजागर करती है, बल्कि बढ़ते निजीकरण के कारण उत्पन्न सामाजिक असमानता को भी सामने लाती है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 ए के तहत प्रत्येक बच्चे को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार दिया गया है, लेकिन वर्तमान परिस्थितियों में यह अधिकार धीरे-धीरे कमजोर पड़ता दिखाई दे रहा है। 2014-15 से 2023-24 के बीच सरकारी स्कूलों की संख्या 11,07,101 से घटकर 10,17,660 रह गई, यानी लगभग 89,441 स्कूल कम हो गए, जबकि निजी स्कूलों की संख्या 2,88,164 से बढ़कर 3,31,108 हो गई।

यह प्रवृत्ति विशेष रूप से ग्रामीण भारत के लिए चिंताजनक है, जहां गरीब और वंचित वर्गों के बच्चों के लिए शिक्षा तक पहुंच लगातार कठिन होती जा रही है। सरकारी स्कूलों के संकट का एक प्रमुख कारण 'स्कूल मर्जर नीति' है, जिसके तहत कम नामांकन वाले छोटे स्कूलों को बड़े स्कूलों में मिला दिया जाता है। इससे ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में बच्चों के लिए स्कूल तक पहुंच कठिन हो गई है। मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में हजारों स्कूल बंद हुए हैं, जो कुल बंदी का बड़ा हिस्सा हैं। इसके अलावा, शिक्षकों की कमी, कमजोर आधारभूत संरचना और मिड-डे मील जैसी योजनाओं का सही ढंग से क्रियान्वयन न होना भी नामांकन में गिरावट के प्रमुख कारण हैं। National Education Policy 2020 के कुछ

प्रावधान, जैसे एकल शिक्षक स्कूलों को हतोत्साहित करना, भी इस प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप सरकारी स्कूलों में नामांकन में भारी कमी आई है, जबकि निजी स्कूलों में छात्रों की संख्या तेजी से बढ़ी है। गरीब परिवारों के बच्चे अब मजबूरन निजी स्कूलों की ओर रुख कर रहे हैं, लेकिन ऊंची फीस उनके लिए एक बड़ी बाधा बन जाती है। निजी स्कूलों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है और शहरी क्षेत्रों में बड़ी संख्या में बच्चे निजी स्कूलों में पढ़ रहे हैं। हालांकि यह वृद्धि कई चिंताएं भी पैदा करती है। निजी स्कूलों में फीस में भारी वृद्धि देखी जा रही है, जिससे निम्न और मध्यम आय वर्ग के परिवारों के लिए शिक्षा प्राप्त करना कठिन होता जा रहा है। शिक्षा का यह बढ़ता निजीकरण उसे एक सामाजिक सेवा से अधिक एक व्यापार में बदलता जा रहा है। शिक्षा का अधिकार कानून के तहत 25 प्रतिशत सीटें गरीब बच्चों के लिए आरक्षित हैं, लेकिन इसका प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है, जिससे सामाजिक असमानता और गहरी हो रही है। एक ओर संपन्न वर्ग बेहतर संसाधनों और सुविधाओं वाले निजी स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करता है, वहीं दूसरी ओर गरीब वर्ग सीमित संसाधनों वाले सरकारी स्कूलों तक ही सीमित रह जाता है। इस असंतुलन का सीधा प्रभाव ड्रॉपआउट दर पर भी पड़ रहा है। पिछले कुछ वर्षों में लाखों बच्चों ने स्कूल छोड़ दिया है, जिनमें बड़ी संख्या किशोरियों की है। इसके पीछे गरीबी, बाल श्रम, परिवार का प्रवास, स्कूलों की दूरी और सुरक्षा की कमी

> शिक्षा का अधिकार कानून के तहत 25 प्रतिशत सीटें गरीब बच्चों के लिए आरक्षित हैं, लेकिन इसका प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है, जिससे सामाजिक असमानता और गहरी हो रही है। एक ओर संपन्न वर्ग बेहतर संसाधनों और सुविधाओं वाले निजी स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करता है, वहीं दूसरी ओर गरीब वर्ग सीमित संसाधनों वाले सरकारी स्कूलों तक ही सीमित रह जाता है। इस असंतुलन का सीधा प्रभाव ड्रॉपआउट दर पर भी पड़ रहा है। पिछले कुछ वर्षों में लाखों बच्चों ने स्कूल छोड़ दिया है, जिनमें बड़ी संख्या किशोरियों की है। इसके पीछे गरीबी, बाल श्रम, परिवार का प्रवास, स्कूलों की दूरी और सुरक्षा की कमी जैसे कई कारण जिम्मेदार हैं। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियों के लिए शिक्षा प्राप्त करना अधिक कठिन हो जाता है। जब परिवार निजी स्कूलों की फीस वहन नहीं कर पाते और आसपास सरकारी स्कूल उपलब्ध नहीं होते, तो बच्चों का शिक्षा से बाहर होना लगभग तय हो जाता है। यह स्थिति आने वाले समय में बेरोजगारी और सामाजिक असमानता को और अधिक बढ़ा सकती है। शिक्षा का निजीकरण केवल एक शैक्षिक समस्या नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक असमानता को भी गहराता है।

जैसे कई कारण जिम्मेदार हैं। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियों के लिए शिक्षा प्राप्त करना अधिक कठिन हो जाता है। जब परिवार निजी स्कूलों की फीस वहन नहीं कर पाते और आसपास सरकारी स्कूल उपलब्ध नहीं होते, तो बच्चों का शिक्षा से बाहर होना लगभग तय हो जाता है। यह स्थिति आने वाले समय में बेरोजगारी और सामाजिक असमानता को और अधिक बढ़ा सकती है। शिक्षा का निजीकरण केवल एक शैक्षिक समस्या नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक असमानता को भी गहराता है। जब सभी वर्गों को समान शिक्षा के अवसर नहीं मिलते, तो समाज में अवसरों का असंतुलन बढ़ता जाता है। भारत में शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का केवल लगभग 3 प्रतिशत ही खर्च किया जाता है, जबकि इसे 6 प्रतिशत तक बढ़ाने का लक्ष्य अभी भी अधूरा है। इसका प्रभाव महिलाओं के सशक्तिकरण, रोजगार के अवसरों और देश के समग्र आर्थिक विकास पर पड़ता है। यदि यह स्थिति बनी रही, तो यह लोकतंत्र के लिए भी खतरा बन सकती है, क्योंकि एक शिक्षित समाज ही जागरूक और जिम्मेदार नागरिक तैयार करता है। इस संकट से निपटने के लिए सरकार को ठोस और प्रभावी कदम उठाने होंगे। स्कूल मर्जर नीति पर पुनर्विचार किया जाना चाहिए और ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे स्कूलों को संरक्षित किया जाना चाहिए। रिक्त शिक्षक पदों को शीघ्र भरा जाए और शिक्षकों के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाए। सभी स्कूलों में बुनियादी सुविधाएं जैसे शौचालय, स्वच्छ पेयजल और डिजिटल संसाधन सुनिश्चित किए जाएं। मिड-डे मील योजना की गुणवत्ता में सुधार किया जाए और निजी स्कूलों की फीस पर नियंत्रण तथा निगरानी बढ़ाई जाए। शिक्षा का अधिकार कानून के प्रावधानों को सख्ती से लागू किया जाए और शिक्षा पर सार्वजनिक निवेश बढ़ाकर इसे सकल घरेलू उत्पाद के 6 प्रतिशत तक पहुंचाया जाए।

निष्कर्षतः, निजीकरण का बढ़ता प्रभाव सरकारी स्कूलों के लिए एक गंभीर चुनौती बन चुका है। सरकारी स्कूलों की घटती संख्या और निजी स्कूलों की बढ़ती संख्या यह संकेत देती है कि शिक्षा धीरे-धीरे एक मौलिक अधिकार से हटकर एक व्यापार का रूप लेती जा रही है। इसका सबसे अधिक प्रभाव गरीब और वंचित वर्गों पर पड़ रहा है। यदि समय रहते उचित कदम नहीं उठाए गए, तो यह असमानता समाज को गहराई तक प्रभावित करेगी। शिक्षा को बाजार की वस्तु नहीं, बल्कि सामाजिक विकास का आधार मानते हुए इसे मजबूत करना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि आने वाली पीढ़ियों का भविष्य इसी पर निर्भर करता है।

खाकी के व्यवहार में सुधार की उम्मीद कब हो पाएगी पूरी

आम पब्लिक के साथ पुलिस के व्यवहार को कौन नहीं जानता। मोती डूंगरी इलाके में तो मामूली पार्किंग को लेकर महिला एसआई एक कांस्टेबल से भिड़ गई। धक्का-मुक्की कर तमाशा बना सो अलग। असल में यह तो दोनों पुलिसकर्मी थे तब यह हाल था यदि कोई आम आदमी होता तो उसकी क्या गत होती, यह सब जानते ही हैं। खाकी अपने व्यवहार को लेकर हमेशा विवादों में रही है। आरोपी तो छोड़िए यहां फरियादी तक से थाने में ठीक ढंग से बात नहीं की जाती। उसके साथ भी ऐसा व्यवहार किया जाता है कि मानों वो कोई अपराध कर थाने में आया हो। यातायात नियमों में जरा सी चूक पर ट्रेफिक पुलिसकर्मी हाथापाई पर उतर आते हैं। बात-विवाद कोई भी हो, खाकी अपनी धौंस जमाने से नहीं चूकती। ऐसा नहीं है कि सभी पुलिसकर्मी ऐसे हैं पर जो हैं उनकी कारगुजारी की शर्मिंदगी पूरे विभाग को झेलनी पड़ती है। बरसों से समय-समय पर पुलिस के आला अधिकारी ही नहीं मंत्री तक पुलिस को अपने व्यवहार में सुधार लाने की सीख देते रहे हैं। थानों में स्वागत कक्ष भी बनवाए गए ताकि यहां आने वाले हर फरियादी को सम्मान मिल सके, वो अपनी बात-पीड़ा आराम से रख सके। समय-समय पर अदालत भी पुलिस को अपना व्यवहार सुधारने की सीख देती रहती हैं। पुलिस का काम कानून-व्यवस्था बनाए रखने का है पर जबरन जरा-जरा सी बात पर सरे राह किसी का अपमान करना उसकी ड्यूटी नहीं है। पुलिस व्यवस्था में सुधार को लेकर समय-समय पर शीर्ष स्तर से निर्देश और नसीहतें जारी होती रहती हैं। पुलिस महानिदेशक स्तर के अधिकारी भी लगातार यह कहते नजर आते हैं कि खाकी का व्यवहार जनता के प्रति संवेदनशील होना चाहिए, अनावश्यक बल प्रयोग से बचना चाहिए और कानून का पालन करते हुए संवाद को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। लेकिन सवाल यह है कि क्या ये निर्देश जमीन पर पूरी तरह लागू हो पा रहे हैं? परिपत्रों और समीक्षा बैठकों में पुलिस के व्यवहार सुधारने की बात दोहराई जाती है। जनता से शालीनता से पेश आने, शिकायतों को गंभीरता से सुनने और दबाव की बजाय विश्वास का माहौल बनाने की सलाह दी जाती है। बावजूद इसके, कई घटनाएं बताती हैं कि व्यवहार में अपेक्षित बदलाव अभी भी अधूरा है। इससे यह संकेत मिलता है कि केवल निर्देश जारी करना पर्याप्त नहीं, बल्कि उनकी सख्ती से पालना सुनिश्चित करना भी जरूरी है। जब शीर्ष अधिकारी सुधार की बात करते हैं तो उसका असर नीचे तक दिखना चाहिए। थानों और चौकियों में आमजन का अनुभव ही पुलिस की असली छवि बनाता है। यदि वहीं पर कठोरता, अनावश्यक दबाव या अपमानजनक व्यवहार जारी रहे, तो सुधार के संदेश केवल कागजों तक सीमित रह जाते हैं। पुलिस को यह समझना होगा कि वह जनता की सेवक है, शासक नहीं। कानून लागू करने के नाम पर अनावश्यक बल प्रयोग, मारपीट, धमकी या अपमानजनक भाषा का इस्तेमाल लोकतांत्रिक मूल्यों के खिलाफ है। ऐसी घटनाएं पुलिस की छवि धूमिल करती हैं।

वास्तविकता इस आभासी धारणा के बिल्कुल विपरीत और आश्चर्यजनक रूप से भौतिक है

क्या वाकई इंटरनेट को युद्ध से खतरा है ?

महेन्द्र तिवारी
वरिष्ठ पत्रकार

इस खतरे की गंभीरता को समझने के लिए हमें इतिहास और हालिया घटनाओं की ओर देखना होगा। वर्ष 2024 में लाल सागर में हुई घटना ने पूरी दुनिया को झकझोर कर रख दिया था। वहां समुद्र के नीचे बिछी 4 प्रमुख केबल्स को नुकसान पहुंचा, जिसका सीधा असर वैश्विक इंटरनेट कनेक्टिविटी और स्पीड पर पड़ा। उस समय इंटरनेट सेवाओं को पूरी तरह सामान्य करने में लगभग 80 दिन का समय लगा। यह घटना इस बात का जीवंत प्रमाण है कि समुद्र के नीचे स्थित ये ढांचे कितने असुरक्षित हैं।

आज के डिजिटल युग में जब हम स्मार्टफोन की स्क्रीन पर स्पर्श करते हैं और दुनिया के किसी भी कोने की जानकारी क्षण भर में सामने आ जाती है, तो हमारे मन में यह धारणा प्रबल होने लगती है कि इंटरनेट एक अदृश्य और वायरलेस शक्ति है जो हवा या बादलों के माध्यम से तैर रही है। 'क्लाउड' शब्द के बढ़ते प्रयोग ने इस भ्रम को और गहरा कर दिया है, जिससे हमें लगता है कि हमारा डेटा कहीं अंतरिक्ष में सुरक्षित तरीके से तैर रहा है। लेकिन जब भू-राजनीतिक तनाव बढ़ते हैं और युद्ध की बातें सामने आती हैं, तो एक सवाल बार-बार उठता है कि क्या वाकई इस अदृश्य और व्यापक नेटवर्क को युद्ध से खतरा है? इसका सीधा और स्पष्ट उत्तर है- हां, इंटरनेट को युद्ध से सबसे अधिक और संगीन खतरा है, और यह खतरा किसी काल्पनिक साइबर फिल्म से कहीं अधिक वास्तविक और भयावह है।

वास्तविकता इस आभासी धारणा के बिल्कुल विपरीत और आश्चर्यजनक रूप से भौतिक है। हमारी संपूर्ण वैश्विक डिजिटल अर्थव्यवस्था, संचार तंत्र और यहां तक कि हमारी सामाजिक और सैन्य सुरक्षा भी समुद्र की अगाध गहराइयों में बिछे उन फाइबर ऑप्टिक केबल्स के एक जटिल जाल पर टिकी है, जिन्हें 'अंडर-सी केबल्स' कहा जाता है। दुनिया भर में फैले लगभग पांच सौ से अधिक ऐसे केबल्स का नेटवर्क ही वह अदृश्य जीवन रेखा है जो महाद्वीपों को एक दूसरे से जोड़ती है और वैश्विक इंटरनेट डेटा ट्रैफिक के नब्बे प्रतिशत से अधिक हिस्से का वहन करती है। आम धारणा के विपरीत, उपग्रह वैश्विक डेटा का केवल एक से तीन प्रतिशत हिस्सा ही संभाल पाते हैं, क्योंकि वे धीमी गति और अधिक लेटेंसी के साथ काम करते हैं। फाइबर ऑप्टिक केबल्स प्रकाश की गति से डेटा स्थानांतरित करती हैं, जो उन्हें आधुनिक सभ्यता के लिए अपरिहार्य बनाती हैं। लेकिन यही तकनीकी उपलब्धि आज एक बहुत बड़ी रणनीतिक चुनौती और कमजोरी बनकर उभरी है।

इन केबल्स की महत्ता और उनके द्वारा नियंत्रित होने वाले डेटा की मात्रा का विश्लेषण करें, तो हम पाएंगे कि आधुनिक सभ्यता का कोई भी कोना इनसे अछूता नहीं है। बैंकों के लेन-देन से लेकर शेयर बाजार की हलचल तक, और रक्षा प्रणालियों के गुप्त संचार से लेकर आम नागरिकों के वीडियो कॉल तक, सब कुछ इन्हीं गहरे समुद्री मार्गों से होकर गुजरता है। एशिया, यूरोप और अमेरिका जैसे बड़े महाद्वीपों के बीच होने वाला व्यापार और कूटनीतिक विनिमय पूरी तरह से इन केबल्स की अखंडता पर निर्भर है। जब कोई युद्ध छिड़ता है, तो सबसे पहले शत्रु देश की अर्थव्यवस्था और संचार तंत्र को चकनाचूर करने की कोशिश की जाती है। इसी निर्भरता ने एक ऐसा 'एकल बिंदु विफलता' उत्पन्न कर दिया है, जिसे नष्ट करना किसी भी शत्रु देश के लिए पूरी दुनिया को घुटनों पर लाने का सबसे आसान और सस्ता तरीका हो सकता है। वर्तमान में जिस तरह से वैश्विक तनाव बढ़ रहा है, उसने इन केबल्स की सुरक्षा पर एक बड़ा प्रश्नचिह्न लगा दिया है। विशेषज्ञों का मानना है कि आने वाले समय में युद्ध केवल सीमाओं पर नहीं, बल्कि समुद्र के तल पर भी लड़े जाएंगे। इन केबल्स को नुकसान पहुंचाना आज किसी भी आधुनिक सेना के लिए 'हाइब्रिड वॉरफेयर' का एक प्रमुख हिस्सा बन चुका है। कल्पना कीजिए कि यदि किसी संघर्ष के दौरान इन केबल्स को सुनियोजित तरीके से समुद्री बम या माइन ब्लास्ट के जरिए उड़ा दिया जाए या विशेष पनडुब्बियों के माध्यम से काट दिया जाए, तो परिणाम कितने विनाशकारी होंगे। इंटरनेट के बंद होने का मतलब वैश्विक बैंकिंग प्रणाली ठप हो जाएगी, जिससे खरबों डॉलर का नुकसान मिनटों में हो सकता है। एटीएम काम करना बंद कर देंगे, क्रेडिट कार्ड ट्रांजैक्शन रुक जाएंगे और अंतरराष्ट्रीय व्यापार के लिए किए जाने वाले संचार के सभी माध्यम मृत हो जाएंगे। इससे भी भयावह यह है कि किसी देश की सैन्य और सुरक्षा एजेंसियां, जो गुप्त सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए इन सुरक्षित नेटवर्कों का उपयोग करती हैं, वे एक पल में अंधी और बहरी हो सकती हैं। यह स्थिति आर्थिक अराजकता पैदा करेगी। इस खतरे की गंभीरता को समझने के लिए हमें इतिहास और हालिया घटनाओं की ओर देखना होगा। वर्ष 2024 में लाल सागर में हुई घटना ने पूरी दुनिया को झकझोर कर रख दिया था। वहां समुद्र के नीचे बिछी चार प्रमुख केबल्स को नुकसान पहुंचा, जिसका सीधा असर वैश्विक इंटरनेट कनेक्टिविटी और स्पीड पर पड़ा। उस समय इंटरनेट सेवाओं को पूरी तरह सामान्य करने में लगभग अस्सी दिन का समय लगा। जब तक हम समुद्र की गहराई और साइबर स्पेस में छिपे इस खतरे को नहीं समझेंगे, तब तक हमारा 'वायरलेस' होने का सपना एक ऐसे कमजोर धागे से बंधा रहेगा जो किसी भी युद्ध की एक चिंगारी से जलकर राख हो सकता है और आधुनिक सभ्यता को सदियों पीछे धकेल सकता है।

व्यंग्य

लोकप्रियता भुनाने का आनंद

दिनेश विजयवर्गीय
व्यंग्यकार

राजनीति में लोगों के दिल में उतरने वाले भाषण देने में लोकप्रिय युवा नेता मुंशी दौड़ता भागता मिलने आया। मैंने कहा 'मुंशी आजकल मॉर्निंग वॉक में भी नजर नहीं आ रहे हो, क्या बात है ? क्या कहीं व्यस्त हो ?' वह बोला 'अंकल! चुनाव चल रहे हैं। मैं भी टिकट लेने की चाह में गया हुआ था। पर पार्टी ने मुझे टिकट न दे दूसरे कार्यकर्ता को दे दिया । पार्टी पिछले दो चुनाव से टिकट न देकर मेरी उपेक्षा कर रही है। आखिर मैं भी निराश होकर अपनी भाषण देने और जन मन में स्थान बनाने की क्षमता के चलते मित्रों की सलाह पर निर्दलीय चुनाव लड़ने का मन बन रहा हूं ।' 'पर मुंशी, इससे तो पार्टी में तुम्हारा जो कद बना हुआ है वह नीचे लुढ़क जाएगा। और फिर चाहोगे तो भी वह छवि जनता की बीच नहीं बना पाओगे। अब तक की सारी राजनीतिक प्रतिष्ठा प्रभावित होने लगेगी।' 'अंकल! अब वह समय कहां रहा है ,जब पैसों और स्वार्थ से अधिक नैतिकता का मूल्य हुआ करता था।अब तो राजनीति में बैपैंदे के लोटे भी ठीक से समय-समय पर स्थान पा लेते हैं । पर अब जब मुझे पार्टी ने टिकट नहीं दिया तो मुझे लगा कि पार्टी टिकट वितरण करने वालों को छटी का दूध याद दिला दिया जाए। आखिर जब कोई अंगुली टेढ़ी करता है या आंखें तरेरने लगता है तो लोग उसकी और कुछ अनिष्ट होने की भावना से देखने व चिंतन करने लगते हैं।' 'अंकल, अब आपसे क्या छुपाना ! कल रात को पार्टी के खिलाफ जिस उम्मीदवार को टिकट मिला है उसके दो विश्वास पात्र लोग मेरे पास आए थे। वह कहने लगे आप को पार्टी ने टिकट नहीं दिया। बहुत समय से उपेक्षा का दर्द झेल रहे हो। हम आपको यह सुझाव देने आये हैं कि आप इस बार निर्दलीय खड़े रहकर ताल ठोक लो । फिर आपकी पार्टी को आपकी अहमियत का पता चलेगा कि लोकप्रिय व्यक्ति की उपेक्षा क्या कुछ होती है ?' 'अच्छा तो आप मुझे सलाह दे रहे हो निर्दलीय खड़ा होने की। पर इससे आपकी पार्टी के उम्मीदवार को क्या फायदा होगा ?' 'इसका सीधा सा गणित है कि जब आपके चहेते आपको वोट देंगे तो आपकी पार्टी के उम्मीदवार को वोट कब मिलेंगे। और इसके चलते हमारी पार्टी से प्रत्याशी को अधिक वोट मिलने से उन्हें बहुमत मिलेगा और विजय श्री मिलेगी।' ' मैंने कहा अरे भाई! इतनी पंचायती पर क्यों छांट तो रहे हो? सीधे-सीधे अपने दिल की बात कह दो।' 'हम यह कहना चाह रहे हैं कि यदि आप अपनी पार्टी से बागी बनकर चुनाव में खड़े हो जाओ तो हमारे प्रत्याशी की ओर से 50 लाख का आफर है । अब विचार कर लो। वैसे भी आप पार्टी बिना जीतने वाले तो हो नहीं। बस वोट कटाव नेता रहोगे । बागी बनकर वोट प्राप्त करने पर, बाद में आपकी पार्टी है चिंतन करेगी कि टिकट वितरण गलत हो गया ।और जन जन भी यही कहेगा कि पार्टी को इन्हें ही टिकट देना चाहिए था । वे चले गए। मैंने समय-समय पर सटीक राय देने वाली अपनी पत्नी से विचार विमर्श किया, कि क्या कुछ करें? धर्म संकट में हूं। पार्टी का अनुशासन मान कर चुप्पी साथ लें या बागी बनकर निर्दलीय चुनाव में खड़े हो जाएं? चुनाव लड़ने पर विपक्षी पार्टी वाले की ओर से पचास लाख रुपये का ऑफर है।' 'अरे! घर बैठे लक्ष्मी दरवाजा खटखटा रही है, तो खड़े होने में क्या जा रहा है ! अपने कई रुके हुए कार्य पूरे हो जाएंगे । 'ठीक है पत्नी की सलाह से अब मैंने भी निर्णय कर लिया कि मै अपनी लोकप्रियता को भुनाने के लिये कल सुबह निर्दलीय बन फॉर्म भर चुनावी संग्राम में उतरूंगा ।'

स्वर्णिम पन्ने

उड़ीसा का अलग राज्य के रूप में गठन

ओडिशा भारत के पूर्वी हिस्से में एक प्रांत है। प्राचीन काल में यह कलिंग के नाम से भी जानी जाती थी। यह भारत के दक्षिण पूर्वी हिस्सा में बंगाल की खाड़ी की तट पर स्थित है। 1 अप्रैल, 1936 को उड़ीसा आधुनिक राज्य रूप में स्थापित हुआ था। यह राज्य मुख्य रूप से बिहार और उड़ीसा प्रांत के विभाजन तथा मद्रास प्रेसीडेंसी के ओडिया-भाषी गंजाम और कोरापुट जिलों को शामिल करके बनाया गया था। इसलिए 1 अप्रैल को उत्कल दिवस के रूप में मनाया जाता है। ओडिसा, उत्कल, कलिंग के अलावा यह भी उद्र के नाम से भी जाना जाता है। यह भारत की एक धार्मिक और आध्यात्मिक राज्य हे, 12 महीने यहाँ पर तीर्थ यात्रियों की आना जाना लगा रहता है। ओडिशा भारत के नौवां सबसे बड़ा राज्य है, और जनसंख्या से ग्यारहवां सबसे बड़ा है। यहां सर्वाधिक व्यापक रूप से ओडिया भाषा बोली जाती है।

भेजें प्रतिक्रिया और जुड़ें हमसे
एडिट पेज का विशेष प्रयास आपको कैसा लगा इसके बारे में अपनी अमूल्य राय हमें जरूर दें
contact@jagoindiajago.news
98888 88130

सामयिक विमर्श

आईपीएल में भी टिकटों की सियासत: खेल, अधिकार और वीआईपी संस्कृति का टकराव

बलवंत राज मेहता
वरिष्ठ पत्रकार

कभी खेल को जनता का उत्सव कहा जाता था। जहाँ स्टेडियम की हर सीट पर बैठा व्यक्ति समान उत्साह और अधिकार के साथ खेल का आनंद लेता था। लेकिन कर्नाटक में आईपीएल 2026 से पहले उठी वीआईपी टिकट की मांग ने इस भावना पर एक नया सवाल खड़ा कर दिया है। बेंगलुरु के एम. चिन्नास्वामी स्टेडियम में होने वाले मैचों के लिए विधायकों को वीआईपी टिकट और अलग बैठने की व्यवस्था की स्वीकृति, खेल और सत्ता के रिश्ते को फिर से चर्चा के केंद्र में ले आई है। मामला सिर्फ दो टिकटों का नहीं है, बल्कि उस मानसिकता का है जिसमें जनप्रतिनिधि खुद को आम जनता से अलग मानने लगते हैं। जब विधायकों ने विधानसभा में यह तर्क दिया कि वे लाइन में खड़े नहीं हो सकते क्योंकि वे वीआईपी हैं, तब यह बयान केवल एक सुविधा की मांग नहीं रहा। यह लोकतांत्रिक समानता के मूल विचार को चुनौती देता नजर आया।

आईपीएल जैसे आयोजनों की लोकप्रियता का आधार ही यह है कि यह खेल को जन-जन तक ले जाता है। स्टेडियम में बैठा हर दर्शक चाहे वह छात्र हो, मजदूर हो या व्यापारी एक ही टीम के लिए समान जोश से चीयर करता है। ऐसे में यदि विशेष वर्गों के लिए अलग स्पेशल स्टैंड बनाए जाते हैं, तो यह उस सामूहिक अनुभव को खंडित करता है जो खेल की आत्मा है। क्या जनप्रतिनिधियों के लिए इस तरह की सुविधाएं आवश्यक हैं? लोकतंत्र में उनकी भूमिका जनता की आवाज बनने की है, न कि खुद को विशेषाधिकारों के घेरे में सीमित करने की। यदि वे खुद को अलग खड़ा करेंगे, तो यह दूरी केवल स्टेडियम तक सीमित नहीं रहेगी। यह शासन और समाज के रिश्तों में भी झलकने लगेगी। इस पूरे प्रकरण में एक और पहलू उभरता है हकदारी का। जब सार्वजनिक संसाधनों या लोकप्रिय आयोजनों में विशेषाधिकार की मांग की जाती है, तो यह संदेश जाता है कि व्यवस्था में समानता से अधिक प्राथमिकता पद और प्रभाव को दी जा रही है। यही कारण है कि इस निर्णय की आलोचना केवल विपक्ष तक सीमित नहीं रही, बल्कि समाज में भी असहजता देखी गई। हालांकि यह तर्क भी दिया जा सकता है कि प्रोटोकॉल के कारण कुछ विशेष व्यवस्थाएं आवश्यक होती हैं। लेकिन प्रश्न यह है कि क्या यह सुविधा सीमित और विवेकपूर्ण होनी चाहिए, या फिर यह धीरे-धीरे वीआईपी संस्कृति को और मजबूत करने का माध्यम बन जाए? क्रिकेट, भारत में केवल मनोरंजन नहीं बल्कि सामाजिक एकता का प्रतीक है। आईपीएल ने इस भावना को और व्यापक बनाया है। ऐसे में यदि टिकट वितरण भी सियासत का हिस्सा बनने लगे, तो यह खेल की उस निष्पक्ष और समावेशी छवि को नुकसान पहुंचा सकता है। अंततः, यह विवाद हमें एक बड़े सवाल की ओर ले जाता है। क्या हमारे जनप्रतिनिधि खुद को जनता के बीच देखना चाहते हैं या उनसे ऊपर? स्टेडियम की सीटें भले अलग-अलग हों, लेकिन लोकतंत्र की नींव बराबरी पर ही टिकी होती है। इस मूल भावना को भुला दिया गया, तो खेल का मैदान भी धीरे-धीरे सत्ता का मंच बनता चला जाएगा और यह बदलाव किसी भी लोकतंत्र के लिए शुभ संकेत नहीं होगा।

श्री दिव्या

श्री दिव्या भारतीय अभिनेत्री हैं जो मुख्य रूप से तमिल और तेलुगु फिल्मों में काम करती हैं। श्रीदिव्या ने 3 साल की उम्र में अपने करियर की शुरुआत की। उन्होंने बच्चों की फिल्म भारती (2006) में मुख्य भूमिका निभाई। उन्होंने तेलुगु टेलीविजन धारावाहिकों में भी अभिनय किया है। 2010 में रवि बाबू द्वारा निर्देशित तेलुगु रोमांटिक फिल्म मनसारा में नायिका के रूप में पदार्पण किया।

1 अप्रैल, 1993

श्री दिव्या का जन्म हैदराबाद (वर्तमान तेलंगाना) में हुआ था। दिव्या की एक बड़ी बहन श्री राम्या हैं, जो तेलुगु और तमिल फिल्मों में भी अभिनय करती हैं।

श्री दिव्या ने 2011 में अपनी पहली तमिल फिल्म नागरपुरम की शूटिंग की, लेकिन फिल्म में देरी के कारण उनकी तमिल डेब्यू फिल्म वरुथपडथा वलीबार संगम थी। 2014 में वह दो तमिल फिल्मों, सुसेंथिरन की जीवा और वेल्लैकारा दुरई में दिखाई दीं। 2016 में कई फिल्मों में अभिनय किया। 2017 के बाद, उन्होंने एक संक्षिप्त विराम लिया और 2022 में जन गण मन के साथ वापसी की।

लो, ये भी कम नहीं

संपादकीय

होर्मुज पर नरमी से खुली उम्मीद की राह

पश्चिम एशिया में अमेरिका और इजरायल के हमले के बाद ईरान ने जवाब के तौर पर जो मोर्चे खोले, उसमें होर्मुज जलमार्ग को बाधित करना उसकी एक कारगर रणनीति साबित हुई है। इसी वजह से आज हालत यह है कि दुनिया के कई देश ईरान के सख्त रुख की वजह से कच्चे तेल और गैस के संकट का सामना कर रहे हैं। इनमें वैसे देश भी हैं, जिन्होंने ईरान पर अमेरिका और इजरायल के हमले में कोई प्रत्यक्ष भागीदारी नहीं की है, वे किसी भी पक्ष में मैदान में नहीं हैं और मतभेद के मुद्दों का हल संवाद के जरिए करने के समर्थक हैं। भारत ने भी पश्चिम एशिया में उभरे संकट का समाधान बातचीत से निकालने के लिए आवाज उठाई है। शायद यही वजह है कि अब ईरान ने होर्मुज जलमार्ग से चीन और रूस सहित जिन पांच देशों को अपने जहाज निकालने की छूट दी है, उनमें भारत भी शामिल है। यों भारत आने वाले चार जहाज पहले ही होर्मुज जलमार्ग को पार कर चुके हैं, लेकिन अठारह जहाज उसी इलाके में फंसे हुए थे। ईरान के ताजा रुख के बाद उम्मीद जताई जा रही है कि भारत के बाकी जहाज वहां से निकल कर आ सकेंगे और इससे देश में तेल और गैस के गहराते संकट को कम करने में मदद मिलेगी।

हालांकि अमेरिका और इजरायल को लेकर ईरान अब भी सख्त है और शांति प्रस्तावों को लेकर भी उसने कोई सकारात्मक प्रतिक्रिया नहीं दी है। मगर होर्मुज जलमार्ग पर उसके रुख में आई नरमी से दुनिया के कुछ देशों को राहत मिल सकती है।

बाकी ईरान जिन्हें शत्रु देश मानता है, उनके जलपोतों को लेकर वह अब भी सख्त है। जहां तक भारत का सवाल है, तो ईरान के विदेश मंत्री ने

कहा कि हमने कुछ ऐसे देशों को होर्मुज जलडमरूमध्य से गुजरने की इजाजत दी है, जिन्हें हम मित्र मानते हैं। इसमें चीन, रूस, भारत, इराक तथा पाकिस्तान शामिल हैं। दरअसल, पिछले कुछ दिनों से भारत ईरान के साथ लगातार कूटनीतिक संवाद के जरिए पश्चिम एशिया में संघर्ष खत्म कराने के साथ-साथ होर्मुज जलमार्ग से अपने लिए भी एक रास्ता निकालने की कोशिश कर रहा था। कुछ उतार-चढ़ाव को छोड़ दें, तो भारत और ईरान के संबंध दोस्ताना रहे हैं। ऐसे में अगर ईरान ने अगर होर्मुज जलमार्ग के रास्ते आवागमन के लिए भारत को भी सुविधा दी है, तो कूटनीतिक संवाद के एक सकारात्मक हासिल के साथ-साथ इसे उन्हीं संबंधों की एक कड़ी के तौर पर देखा जा सकता है।

गौरतलब है कि होर्मुज जलमार्ग फारस की खाड़ी और ओमान की खाड़ी के बीच एक संकरा रास्ता है, जिससे होकर दुनिया के कई देशों के जलपोत आवाजाही करते हैं। दुनिया के करीब बीस फीसद तेल और तरल प्राकृतिक गैस का परिवहन इसी रास्ते से होता है। यही वजह है कि ईरान ने जब से होर्मुज जलमार्ग को बाधित किया है, उसके बाद से विश्व भर में तेल और गैस की कीमतों में अप्रत्याशित उछाल आया है। भारत की भी ऊर्जा खरीद का एक प्रमुख स्रोत पश्चिम एशिया रहा है। मौजूदा संकट के बीच सरकार ने तेल और गैस का पर्याप्त भंडार होने की बात कही है, लेकिन सच यह है कि आम लोग रसोई गैस, तेल और उर्वरकों की कमी से उपजी मुश्किल का सामना कर रहे हैं।

अब होर्मुज जलमार्ग पर ईरान की नरमी से भले ही फौरी राहत मिल सके, लेकिन जरूरत इस बात की है कि संयुक्त राष्ट्र सहित सभी पक्षों की ओर से पश्चिम एशिया में जारी युद्ध को खत्म कराने के लिए ठोस पहल हो।

थम नहीं रहा दहेज के नाम पर मौत का सिलसिला

इसे विडंबना ही कहा जाएगा कि देश में सख्त कानूनी प्रावधानों के बावजूद दहेज के लिए विवाहिता की हत्या या उसे आत्महत्या के लिए मजबूर करने की घटनाओं का सिलसिला थम नहीं रहा है। इक्कीसवीं सदी में शिक्षा और विज्ञान के क्षेत्र में नए आयाम हासिल करने के बावजूद इस मामले में समाज के एक हिस्से की रूढ़िवादी मानसिकता नहीं बदली है। यही नहीं, कानूनों को सख्ती से लागू करने के मामले में भी विभिन्न स्तरों पर लापरवाही देखी जाती है, जिस कारण इस कुप्रथा की जड़ें नष्ट होने के बजाय गहरी होती जा रही हैं। इसका दंश महिलाओं के खिलाफ हिंसा और उत्पीड़न तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह उनकी जान पर भी भारी पड़ रहा है। सर्वोच्च न्यायालय ने भी अपने एक फैसले में इस पर गहरी चिंता जताई और दहेज के मामलों में महिलाओं की मौत की घटनाओं को समाज पर गहरा धब्बा करार दिया। शीर्ष अदालत ने कहा कि इस सामाजिक कुरीति के कारण आज भी हजारों महिलाएं बेमौत मारी जाती हैं। सरकारी स्तर पर देश में दहेज प्रथा पर अंकुश लगाने के बड़े-बड़े दावे किए जाते हैं, लेकिन आंकड़ों से पता चलता है कि इसकी वास्तविक तस्वीर बेहद चिंताजनक है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो की एक रपट के मुताबिक, वर्ष 2023 में दहेज संबंधी अपराधों के तहत दर्ज मामलों में चौदह फीसद की बढ़ोतरी देखी गई है। देश भर में इससे संबंधित पंद्रह हजार से अधिक मामले दर्ज किए गए, जिनमें छह हजार से ज्यादा महिलाओं की मौत हो गई। जबकि वर्ष 2022 और 2021 में यह संख्या क्रमशः 13,479 और 13,568 थी। सवाल है कि इस तरह की घटनाओं पर रोक क्यों नहीं लग पा रही है? क्या वजह है कि दहेज प्रथा को बढ़ावा देने वालों में कानून का जरा भी खौफ नहीं है! इसके लिए निश्चित तौर पर कानून प्रवर्तन एजंसियों का ढुलमुल रवैया भी जिम्मेदार है। पुलिस की लापरवाही की वजह से कई बार दहेज से संबंधित मामलों के आरोपी अदालत में सबूतों के अभाव में बरी हो जाते हैं। कई दफा पीड़ित महिलाओं को शिकायत दर्ज कराने में खासी दिक्कतों का सामना करना पड़ता है, जो पुलिस की कार्यप्रणाली पर गंभीर सवाल खड़े करता है। दहेज प्रथा केवल सामाजिक बुराई ही नहीं, बल्कि मानवाधिकारों और गरिमा का भी गंभीर उल्लंघन है। मगर कई मामलों में पीड़ित महिलाओं के परिजन कानूनी जागरूकता की कमी और सामाजिक दबाव के कारण पुलिस में शिकायत तक दर्ज नहीं करा पाते। ऐसे में इस बात पर गहराई से विचार करने की जरूरत है कि क्या भौतिक वस्तुएं, पैसा और झूठी शान किसी महिला की जान से ज्यादा मूल्यवान है! इस बात पर भी गौर करना जरूरी है कि दहेज उत्पीड़न या हत्या के मामलों की शिकायत दर्ज करने की प्रक्रिया को आसान बनाया जाए और ऐसे मामलों को गंभीरता से लेकर उनकी गहन जांच की जाए। इस तरह के मामलों की सुनवाई त्वरित अदालतों में की जानी चाहिए, ताकि पीड़ित पक्ष को जल्द न्याय मिल सके। इसके साथ ही सामाजिक स्तर पर भी जागरूकता और अन्य पहलों को प्रोत्साहित करने की जरूरत है, जैसे महिलाओं को शिक्षित और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाना तथा बेटियों को लेकर समानता आधारित दृष्टिकोण को धरातल पर सही मायने में अमल में लाना। सच यह है कि कानूनी सख्ती के समांतर जब तक समाज की सोच नहीं बदलेगी, तब तक किसी भी कुरीति को पूरी तरह खत्म कर पाना संभव नहीं है।

आज का कार्टून

प्रकाश आश्रम इंदौर में बवाल, संन्यासी के गंभीर आरोपों से मचा हड़कंप

जबरन निकाले जाने, धमकी और वित्तीय अनियमितताओं के आरोप; मामला पुलिस और न्यायालय तक पहुँचा

दैनिक सदभावना पाती

इंदौर। इंदौर के सनावदिया स्थित प्रकाश आश्रम इन दिनों गहरे विवादों में घिरा हुआ है। आश्रम में पिछले करीब नौ वर्षों से निवास कर रहे परमहंस संन्यासी स्वामी ददीप्यानंद पुरी ने आश्रम ट्रस्ट और प्रबंधन पर गंभीर आरोप लगाए हैं, जिससे धार्मिक और सामाजिक हलकों में हलचल मच गई है। स्वामी ददीप्यानंद पुरी का आरोप है कि उन्होंने आश्रम में कथित वित्तीय अनियमितताओं, आडंबरों और सनातन परंपराओं के विरुद्ध हो रही गतिविधियों का विरोध किया। इसके बाद आश्रम प्रबंधन द्वारा उन पर लगातार दबाव बनाया गया और धमकियां दी गईं। उनके अनुसार, आश्रम प्रमुख स्वामी रामेश्वरानंद पुरी और अन्य ट्रस्ट सदस्यों ने उन्हें या तो चुप रहने या आश्रम छोड़ने के लिए कहा। स्वामी जी का दावा है कि 16 जनवरी को उन्हें जबरन आश्रम से बाहर निकालने का प्रयास किया गया। इस दौरान स्वामी नित्यानंद पुरी सहित कुछ अन्य लोगों–विनय त्रिपाठी और महेश शर्मा–पर धक्का-मुक्की और जान से

मारने की धमकी देने के आरोप लगाए गए हैं। इस संबंध में पुलिस में शिकायत भी दर्ज कराई गई है। पुलिस हस्तक्षेप के बाद दोनों पक्षों के बीच समझौते की चर्चा जरूर हुई, लेकिन विवाद पूरी तरह शांत नहीं हुआ। स्वामी जी का कहना है कि उन पर लगातार दबाव बनाए रखने की कोशिशें जारी रहीं।

मामला तब और गरमा गया जब यह विवाद मीडिया के माध्यम से सार्वजनिक हुआ, जिससे आश्रम के अनुयायियों में नाराजगी देखने को मिली। इसके बाद आश्रम समिति द्वारा स्वामी ददीप्यानंद पुरी को हटाने के प्रयास तेज कर दिए गए। हाल ही में बुलाई गई एक आपातकालीन सोसाइटी बैठक में उन्हें आश्रम और समिति से हटाने की कोशिश की गई, हालांकि पुलिस शिकायत के चलते बैठक को फिलहाल स्थगित कर दिया गया। मीडिया द्वारा प्रतिक्रिया लेने पर स्वामी ददीप्यानंद पुरी ने खुलकर अपनी बात रखी, जबकि आश्रम प्रबंधन और समिति के अन्य सदस्य सामने आने से बचते नजर आए और इसे आंतरिक मामला बताया। स्वामी ददीप्यानंद पुरी ने आरोप लगाया है कि बीते नौ वर्षों के वित्तीय रिकॉर्ड रजिस्ट्रार कार्यालय में जमा नहीं किए गए, धर्म और गुरु परंपरा के नाम पर धन संग्रह किया जा रहा है, तथा जिन शिष्यों से आश्रम निर्माण के लिए सहयोग लिया गया, उन्हें समिति में स्थान नहीं दिया गया। साथ ही उन्होंने धार्मिक गतिविधियों पर लगाए गए प्रतिबंध हटाने और आश्रम की राशि का उपयोग सामाजिक कार्यों में करने की मांग भी उठाई है। फिलहाल यह पूरा मामला पुलिस और न्यायालय में विचाराधीन है। अब सबकी नजर इस बात पर है कि जांच और न्यायिक प्रक्रिया के बाद सच्चाई क्या सामने आती है और प्रशासन इस मामले में क्या कदम उठाता है।

महिला सुरक्षा और सशक्तिकरण के लिए इंदौर पुलिस की विशेष कार्यशाला, उत्कृष्ट कार्य करने वालों का सम्मान

इंदौर। इंदौर में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के उपलक्ष्य में महिला सुरक्षा, सशक्तिकरण और जनजागरूकता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से इंदौर पुलिस द्वारा एक दिवसीय विशेष कार्यशाला का आयोजन किया गया। यह कार्यक्रम 28 मार्च 2026 को पर्यटन विभाग के सहयोग से शहर के प्रमुख स्थल गोपाल मंदिर स्थित गीता भवन में आयोजित हुआ। कार्यक्रम पुलिस आयुक्त संतोष कुमार सिंह के निर्देशन में संपन्न हुआ, जिसमें वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों, शिक्षाविदों, सामाजिक संगठनों और बड़ी संख्या में महिलाओं ने भाग लिया। कार्यशाला में महिला अपराधों की रोकथाम, सुरक्षा उपाय, बाल विवाह जैसी सामाजिक कुरीतियों और महिलाओं के लिए संचालित विभिन्न शासकीय योजनाओं के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई। पुलिस आयुक्त संतोष कुमार सिंह ने बताया कि इंदौर पुलिस महिला सुरक्षा और सशक्तिकरण के लिए लगातार प्रयासरत है। सृजन, अभिमन्यु और सम्मान जैसे अभियानों के माध्यम से बालिकाओं और महिलाओं को जागरूक किया जा रहा है। सृजन अभियान के तहत अब तक 12,583 किशोरियों को जोड़कर उन्हें सशक्त बनाने का कार्य किया गया है, वहीं मुस्कान अभियान के जरिए पिछले एक वर्ष में 1.54 लाख से अधिक महिलाओं को जागरूक किया गया है। उन्होंने बताया कि प्रत्येक थाना स्तर पर ऊर्जा डेस्क, महिला हेल्प डेस्क, एंटी ह्यूमन ट्रैफिकिंग यूनिट और 'ड्डद्द ष्टड्डद्ध

स्नश्रह्–ड्डश्रद्ब' जैसी सेवाएं सक्रिय रूप से कार्य कर रही हैं। साथ ही समाज की भागीदारी को भी महिला सुरक्षा के लिए आवश्यक बताया गया। कार्यशाला में विशेषज्ञों ने भी अपने विचार साझा किए। आईआईएम इंदौर की सानू मेहता ने महिलाओं के लिए वित्तीय साक्षरता और आर्थिक प्रबंधन पर जानकारी दी, जबकि लॉ कॉलेज के असिस्टेंट प्रोफेसर निर्मल पगारिया ने महिला सुरक्षा से जुड़े कानूनी प्रावधानों और पीड़ित महिलाओं को मिलने वाली विधिक सहायता पर प्रकाश डाला। इसके अलावा सामाजिक कुरीतियों, बाल विवाह और महिला-बाल संरक्षण से जुड़े विषयों पर भी विस्तृत चर्चा की गई। कार्यक्रम के दौरान अपराजिता और आरंभ जैसे एनजीओ द्वारा महिलाओं के लिए सुरक्षित पर्यटन वातावरण और सशक्तिकरण पर प्रस्तुतियां दी गईं। वहीं प्रशिक्षित बालिकाओं ने सेल्फ डिफेंस तकनीकों का प्रदर्शन कर आत्मरक्षा के प्रति जागरूक किया। अंत में महिला सुरक्षा और सशक्तिकरण के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने वाले महेंद्र पाठक, अपराजिता एनजीओ की रेखा जी और थाना छत्रीपुरा की उप निरीक्षक शीतू जरिया को सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में उपस्थित सभी महिलाओं को विभिन्न हेल्पलाइन, कानूनी अधिकारों और सुरक्षा उपायों की जानकारी भी दी गई।

तुलसी नगर में वृद्ध महिला से चैन लूटने वाला शातिर आरोपी गिरफ्तार, लूटी गई चैन और बाइक बरामद

इंदौर। लसूडिया थाना क्षेत्र में 76 वर्षीय वृद्ध महिला से चैन स्नैचिंग की वारदात को अंजाम देने वाले शातिर आरोपी को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया है। घटना 19 मार्च 2026 की सुबह करीब 7:30 बजे तुलसी नगर में हुई, जब शकुन्तला चौकसे नामक महिला पूजा का सामान लेकर घर लौट रही थीं। इसी दौरान एक युवक काले मास्क और बिना नंबर की मोटरसाइकिल से आया, उसने पता पूछने के बहाने महिला को रोका और अचानक धक्का देकर उनके गले से सोने की चैन छीनकर फरार हो गया। घटना की गंभीरता को देखते हुए लसूडिया थाना पुलिस ने मामला दर्ज कर तत्काल जांच शुरू की। वरिष्ठ अधिकारियों के निर्देशन में विशेष टीम गठित कर करीब 50-60 सीसीटीवी कैमरों की जांच की गई और तकनीकी साक्ष्यों के आधार पर आरोपी की पहचान की गई। 26 मार्च की रात मुखबिर की सूचना पर पुलिस ने संदेही सुरेश सरोज (उम्र 50 वर्ष), निवासी देवास हाल निवासी इंदौर, को हिरासत में लेकर पूछताछ की, जिसमें उसने अपराध स्वीकार कर लिया। पुलिस ने आरोपी के पास से करीब 11 ग्राम वजनी सोने की चैन (कीमत लगभग 1.40 लाख रुपए) और वारदात में प्रयुक्त होंडा शाइन बाइक भी बरामद की है। पूछताछ में आरोपी ने बताया कि वह इंदौर में रैपिडो चलाकर इलाके की रेकी करता था और महंगे शौक पूरे करने के लिए इस तरह की वारदातों को अंजाम देता था। आरोपी के खिलाफ देवास में पहले से ही चोरी और लूट के कई मामले दर्ज हैं। फिलहाल पुलिस आरोपी को रिमांड पर लेकर अन्य मामलों में पूछताछ कर रही है।

छोटे-छोटे खुशियों के पल जिंदगी को बना देते हैं आनंदमय

अगर हम अपने भीतर आशा को जीवित रखें, छोटी-छोटी खुशियों को स्वीकार करें और अपने व्यवहार से दूसरों के जीवन में भी उत्साह और शांति का प्रकाश फैलाएं, तो जीवन का मार्ग अधिक सरल और सुंदर बन सकता है। इस प्रकार जीवन को केवल चिंता और तनाव के रूप में देखना उसके व्यापक अर्थ को सीमित कर देना है। जीवन एक ऐसी यात्रा है, जिसमें आनंद, आशा, संघर्ष और अनुभव, सभी मिलकर हमारे अस्तित्व को पूर्णता प्रदान करते हैं। जब हम इस सत्य को समझ लेते हैं, तब हम जीवन को केवल जीते ही नहीं, बल्कि उसे गहराई से अनुभव भी करते हैं।

मनीषा मंजरी

हमारा यह जीवन केवल सांसों का नियमित प्रवाह नहीं है, बल्कि अनुभवों, भावनाओं और चेतना की एक गहन यात्रा भी है। इस यात्रा में सामान्यतः सुख और दुख, आशा और निराशा, संघर्ष और विश्राम सब एक साथ चलते रहते हैं। पर आधुनिक जीवन की भागदौड़, प्रतिस्पर्धा और अनिश्चितताओं ने हमारे मन को इतना व्याकुल कर दिया है कि हम जीवन के वास्तविक सौंदर्य और आनंद को महसूस नहीं कर पाते हैं। हमें ऐसा लगता है कि हमारे जीवन का अधिकांश भाग चिंता, तनाव और असंतोष से भरा हुआ है। मगर गहराई से विचार करें, तो पाएंगे कि मनुष्य का जीवन केवल चिंता और तनाव के लिए नहीं है, बल्कि आनंद, आशा और संतुलन के लिए भी है। जीवन की कठिनाइयां हमें परखने और मजबूत बनाने के लिए आती हैं, लेकिन उनका उद्देश्य हमारे भीतर के उत्साह और आशा को समाप्त करना नहीं होता।

जब हम जीवन को केवल समस्याओं और संघर्षों की शृंखला मान लेते हैं, तब हम अपने ही भीतर के आनंद के स्रोत से दूर हो जाते हैं, लेकिन जीवन को एक व्यापक चेतना की प्रक्रिया के रूप में देखें, तो हमें अनुभव होगा कि चिंता और तनाव जीवन के अंतिम सत्य नहीं हैं। उनके साथ-साथ आनंद, आशा और संतुलन भी जीवन के अभिन्न आयाम हैं। हमारा मन स्वभावतः चंचल होता है। यह या तो अतीत की स्मृतियों में उलझा रहता है या भविष्य की आशंकाओं में स्वयं को भटकाता रहता है। इसी कारण वर्तमान क्षण की सहजता और सुंदरता हमसे अक्सर छूट जाती है। चिंता का मूल भी यही है, वह उस समय पैदा होती है, जब मन वर्तमान से दूर हो जाता है। दर्शन की दृष्टि से देखा जाए, तो जीवन का वास्तविक अनुभव केवल वर्तमान में ही संभव है। जब हमारा मन वर्तमान के इस क्षण को स्वीकार करता है और उसमें उपस्थित छोटी-छोटी खुशियों को पहचानता है, तब जीवन का बोझ हल्का होने लगता है। अक्सर हम यह मान बैठते हैं कि सुख केवल बड़ी-बड़ी सामाजिक उपलब्धियों में निहित है, जैसे प्रतिष्ठा, संपत्ति या सफलता में। मगर यह विचार अधूरा है। जीवन का गहन आनंद कई बार उन साधारण क्षणों में छिपा होता है, जिन्हें हम सामान्य समझकर अनदेखा कर देते हैं। जैसे किसी प्रियजन की मुस्कान, प्रकृति का शांत सौंदर्य या मन का एक शांत क्षण। यही छोटे-छोटे अनुभव जीवन को सार्थकता प्रदान करते हैं। अगर हम इन सूक्ष्म आनंदों को पहचानना सीख जाएं, तो हमारे भीतर संतोष का भाव विकसित होने लगता है। सकारात्मकता का अर्थ यह नहीं है कि हम दुख या कठिनाइयों से बच सकते हैं। जीवन में संघर्ष और पीड़ा का होना स्वाभाविक है, क्योंकि वही अनुभव हमारे व्यक्तित्व को परिपक्व बनाते हैं। सकारात्मकता का वास्तविक अर्थ यह है कि हम कठिन परिस्थितियों के बीच भी आशा को जीवित रख सकें। यह आशा ही वह शक्ति है, जो अंधकार के क्षणों में भी हमें आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है।

इसके साथ ही यह भी महत्त्वपूर्ण है कि हम अपने व्यवहार और शब्दों के माध्यम से दूसरों के जीवन में भी आशा और उत्साह का संचार करें। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उसका जीवन दूसरों से गहराई से जुड़ा हुआ होता है। हमारे शब्द और व्यवहार कई बार किसी के मन पर गहरा प्रभाव डाल सकते हैं। अगर हम अपने व्यवहार में सहानुभूति, करुणा, संवेदनशीलता और सकारात्मकता रखें, तो हम अनजाने में ही किसी के जीवन में प्रकाश की किरण बन सकते हैं। एक स्नेहपूर्ण शब्द, एक प्रोत्साहन या एक छोटी-सी मदद भी किसी निराश व्यक्ति के मन में नई आशा जगा सकती है। यही कारण है कि दार्शनिक दृष्टि से जीवन का मूल्य केवल व्यक्तिगत सुख में नहीं, बल्कि उस प्रकाश में भी है, जिसे हम दूसरों के जीवन में बांटते हैं। जब हम अपने भीतर की सकारात्मक ऊर्जा को साझा करते हैं, तब हम अपने अस्तित्व को अधिक सार्थक बनाते हैं। आज के युग में जब हम लगातार बाहरी उपलब्धियों की दौड़ में निरंतर व्यस्त रहते हैं, तब यह याद रखना भी जरूरी है कि जीवन की वास्तविक शांति बाहर नहीं, बल्कि भीतर से उत्पन्न होती है। अगर हम अपने भीतर संतुलन, आशा और करुणा को विकसित कर लें, तो बाहरी परिस्थितियां हमें अधिक विचलित नहीं कर पातीं। इस स्थिति में जीवन केवल संघर्ष का क्षेत्र नहीं रह जाता, बल्कि आत्मबोध और अनुभव की एक गहरी यात्रा बन जाता है। यह विचार करना जरूरी है कि जीवन का सत्य यही है और उसमें प्रकाश तथा अंधकार, दोनों साथ-साथ उपस्थित रहते हैं। मगर हमारे पास यह स्वतंत्रता होती है कि हम किस पक्ष को अधिक महत्त्व देते हैं।

यही मौका कई बार सबसे संवेदनशील साबित होता है। अगर हम अपने भीतर आशा को जीवित रखें, छोटी-छोटी खुशियों को स्वीकार करें और अपने व्यवहार से दूसरों के जीवन में भी उत्साह और शांति का प्रकाश फैलाएं, तो जीवन का मार्ग अधिक सरल और सुंदर बन सकता है। इस प्रकार जीवन को केवल चिंता और तनाव के रूप में देखना उसके व्यापक अर्थ को सीमित कर देना है। जीवन एक ऐसी यात्रा है, जिसमें आनंद, आशा, संघर्ष और अनुभव, सभी मिलकर हमारे अस्तित्व को पूर्णता प्रदान करते हैं। जब हम इस सत्य को समझ लेते हैं, तब हम जीवन को केवल जीते ही नहीं, बल्कि उसे गहराई से अनुभव भी करते हैं।

सम्पादकीय

"मानवता सुख शांति प्रेम का, अखिल विश्व में हो
विस्तारस्वतंत्रता का हनन न होवे, रहे सुरक्षित जन अधिकार"

समान संहिता पर राह दिखाते राज्य, गुजरात में बहुमत से पारित यूसीसी

गत दिनों गुजरात विधानसभा में विस्तृत चर्चा के बाद 'गुजरात यूनिफॉर्म सिविल कोड बिल, 2026' को बहुमत से पारित कर दिया गया। इस कदम के साथ गुजरात, उत्तराखंड के बाद दूसरा ऐसा राज्य बन गया है, जहां व्यक्तिगत मामलों में धर्म-आधारित अलग-अलग कानूनों के स्थान पर एकसमान कानूनी ढांचा लागू किया गया है। विधेयक के अनुसार विवाह समारोह धार्मिक रीति-रिवाजों के अनुसार संपन्न किए जा सकते हैं, किंतु उनका पंजीकरण अनिवार्य होगा। पंजीकरण न कराने की स्थिति में दस हजार रुपये तक का जुर्माना निर्धारित किया गया है। विवाह की न्यूनतम आयु पुरुषों के लिए 21 वर्ष और महिलाओं के लिए 18 वर्ष तय की गई है। बहुविवाह को पूर्णतः प्रतिबंधित कर दिया गया है तथा पति या पत्नी के जीवित रहते दूसरा विवाह अमान्य माना जाएगा। तलाक के आधारों को भी स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है, जिनमें क्रूरता, परित्याग, व्यभिचार, मतांतरण और मानसिक विकार शामिल हैं। साथ ही आपसी सहमति से तलाक का प्रावधान भी रखा गया है, किंतु विवाह के एक वर्ष के भीतर तलाक की अनुमति नहीं दी जाएगी। लिव-इन रिलेशनशिप को कानूनी मान्यता देते हुए उसके पंजीकरण को अनिवार्य किया गया है। यदि किसी पक्ष की आयु नाबालिग पाई जाती है, तो उसके माता-पिता को सूचित किया जाएगा। लिव-इन संबंध से जन्मे बच्चे को वैध संतान का दर्जा दिया जाएगा तथा महिला साथी को भरण-पोषण का अधिकार प्रदान किया गया है। बच्चों के पालन-पोषण में माता-पिता, दोनों की समान जिम्मेदारी सुनिश्चित की गई है। साथ ही उत्तराधिकार और संपत्ति के बंटवारे में पूर्ण लैंगिक समानता लागू की गई है, जिससे विभिन्न व्यक्तिगत कानूनों के कारण उपजी असमानताओं को समाप्त करने का प्रयास किया गया है। यह कानून पूरे गुजरात में लागू होगा और गुजरात के मूल निवासी, जो राज्य के बाहर रहते हैं, उन पर भी प्रभावी रहेगा। इसके अंतर्गत वे व्यक्ति भी शामिल किए गए हैं, जो पिछले दस वर्षों से लगातार गुजरात में निवास कर रहे हैं या राज्य अथवा केंद्र सरकार की सेवा में कार्यरत हैं। हालांकि अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को इस कानून से छूट प्रदान की गई है, ताकि उनकी पारंपरिक प्रथाओं और सांस्कृतिक पहचान का संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके। इसमें जबरन विवाह पर दंड का प्रावधान किया गया है, साथ ही हलाला जैसी कुप्रथाओं को स्पष्ट रूप से प्रतिबंधित किया गया है। इस कानून के लागू होने का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव लैंगिक न्याय के क्षेत्र में दिखाई देगा। महिलाओं को अब सभी समुदायों में संपत्ति, उत्तराधिकार और भरण-पोषण के मामलों में समान अधिकार प्राप्त होंगे। लिव-इन संबंधों में आर्थिक सुरक्षा मिलने से उनकी स्थिति अधिक सुदृढ़ होगी और बच्चों के अधिकार भी सुरक्षित रहेंगे। पंथ के आधार पर कानूनी अंतर्धार्मिक विवाह अधिक सुगम होंगे और संपत्ति से जुड़े विवादों में जटिलताएं भी कम होने की संभावना है। कानूनी प्रक्रिया में भी उल्लेखनीय सरलीकरण आएगा। अदालतों पर बोझ कम होगा, क्योंकि अब विवादों का निपटारा एक ही कानूनी ढांचे के अंतर्गत किया जा सकेगा। इससे न्याय वितरण अधिक तेज, पारदर्शी और प्रभावी बनेगा। पारिवारिक मामलों में मुकदमों की संख्या घटने से सामाजिक स्थिरता को भी बल मिलेगा। आर्थिक दृष्टि से देखा जाए तो संपत्ति संबंधी विवादों में कमी आने से व्यापार और निवेश का परिवेश भी अधिक अनुकूल होगा। अब इसके प्रभावी क्रियान्वयन के लिए सरकार को कई ठोस कदम उठाने होंगे। सबसे पहले, एक सुदृढ़ डिजिटल पंजीकरण प्रणाली विकसित करनी होगी। साथ ही ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में व्यापक जागरूकता अभियान चलाना होगा। प्रशिक्षित अधिकारियों की नियुक्ति और न्यायिक कर्मचारियों को नए प्रविधानों से अवगत कराना भी उतना ही महत्वपूर्ण है।

इसको चरणबद्ध तरीके से लागू करने से संभावित चुनौतियों का बेहतर ढंग से सामना किया जा सकेगा। जनता के बीच विश्वास निर्माण के लिए निरंतर संवाद और सहभागिता भी अनिवार्य होगी। राजनीतिक दृष्टि से यह निर्णय अन्य राज्यों के लिए एक महत्वपूर्ण उदाहरण बन सकता है और केंद्र सरकार पर राष्ट्रीय स्तर पर समान नागरिक संहिता (यूसीसी) लागू करने का दबाव भी बढ़ा सकता है। गुजरात विधानसभा का यह निर्णय भारतीय लोकतंत्र की परिपक्वता को दर्शाता है, जहां विविधता का सम्मान करते हुए समानता को प्राथमिकता दी गई है। यदि इस कानून का प्रभावी क्रियान्वयन होता है, तो एक प्रगतिशील राज्य के रूप में गुजरात की पहचान और पुख्ता होगी। यह कानून पंथ से ऊपर उठकर प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार प्रदान करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण पहल है। इससे महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ होगी, सामाजिक न्याय को बढ़ावा मिलेगा और राष्ट्रीय एकता को नई मजबूती प्राप्त होगी। निःसंदेह गुजरात का यह कदम इतिहास में एक महत्वपूर्ण पड़ाव के रूप में दर्ज होगा, क्योंकि यह लंबे समय से चल रही बहस को ठोस कार्रवाई में परिवर्तित करने का उदाहरण है। समानता अब केवल संवैधानिक आदर्श तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि वास्तविकता की दिशा में अग्रसर होती दिखाई दे रही है, जो पूरे देश के लिए प्रेरणास्रोत बन सकती है।

> "गुजरात विधानसभा ने 'गुजरात यूनिफॉर्म सिविल कोड बिल, 2026' पारित कर दिया है, जिससे यह उत्तराखंड के बाद यूसीसी लागू करने वाला दूसरा राज्य बन गया है।

ट्रंप के लिए वियतनाम बना ईरान, निक्सन और बुश से होने लगेगी तुलना

> "ईरान के साथ अमेरिकी टकराव एक महीने से अधिक समय से जारी है, जिससे वैश्विक आर्थिक संकट गहरा गया है। होर्मुज जलमार्ग बंद होने से तेल, गैस और उर्वरक की कमी हो गई है, जिससे एशिया, यूरोप और अमेरिका में महंगाई बढ़ रही है।

जिस ईरान युद्ध को छेड़ने से पहले अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने सोचा होगा कि महज चार दिनों में ही जंग का फैसला हो जाएगा, वह टकराव महीने भर से ज्यादा लंबा खिंच गया है और उस पर जल्द विराम के भी कोई आसार नहीं दिख रहे। इस दौरान अमेरिका के लगभग 40 अरब डालर खर्च हो चुके हैं। रणभूमि पर सैनिक नहीं उतारने की बारंबार दुहाई देने के बावजूद ट्रंप को लगभग सात हजार मरीन और पैराशूट सैनिक भेजने पड़ रहे हैं, लेकिन ईरान न किसी तरह की हार मानने को तैयार है और न सीधी बातचीत को। अमेरिकी कांग्रेस और संयुक्त राष्ट्र से अनुमति लिए बिना ईरान के परमाणु और मिसाइल खतरे से रक्षा के बहाने छेड़े इस युद्ध ने पूरी दुनिया को गंभीर आर्थिक संकट में झोंक दिया है। ऐसा इसलिए, क्योंकि अपने व्यापक विनाश से तिलमिलाया ईरान अब अपने 454 किलो संवर्धित यूरेनियम को सौंपना और बैलिस्टिक मिसाइल कार्यक्रम को सीमित करना तो दूर, होर्मुज जलमार्ग पर कब्जा करने पर तुल गया है। ईरान की निगरानी में गुजरे कुछ जहाजों के अलावा यह जलमार्ग पिछले महीने भर से बंद है। इसकी वजह से तेल, गैस, उर्वरक, हीलियम और प्लास्टिक के कच्चे माल की तंगी हो गई है। भारत, चीन, जापान और दक्षिण कोरिया समेत एशिया की सभी अर्थव्यवस्थाओं की निर्भरता खाड़ी पर सर्वाधिक है। इसलिए, वहां तो महंगाई और मंदी का खतरा है ही यूरोप और अमेरिका में भी महंगाई पर काबू पाने के लिए ब्याज दरें बढ़ाने की बातें होने लगी हैं। इसे 1970 के दशक में इजरायल-मिस्र-सीरिया युद्ध और इस्लामी क्रांति के तेल संकटों से भी बड़ा ऊर्जा संकट माना जा रहा है। होर्मुज बंद रहने से उपजे आर्थिक संकट की तपिश एशिया, अफ्रीका और यूरोप के साथ-साथ अमेरिका भी पहुंच चुकी है। अमेरिका में डीजल की कीमतें 25 प्रतिशत तक बढ़ गई हैं। डीजल और उर्वरक की महंगाई का सीधा असर किसानों की आमदनी पर पड़ रहा है। रोजमर्रा का सामान महंगा होने से ट्रंप के मागा समर्थकों में भी नाराजगी है। युद्ध का विरोध करने वालों का आंकड़ा 61 प्रतिशत से ऊपर चला गया है। ट्रंप का अपना जनसमर्थन इतिहास के न्यूनतम बिंदु पर है। सीनेट में विपक्षी डेमोक्रेटिक पार्टी के सीनेटर युद्धमंत्री हेगसेथ और विदेशमंत्री रूबियो को समितियों में तलब करने पर अड़े हैं। नवंबर में होने जा रहे संसदीय चुनाव में यदि ट्रंप की रिपब्लिकन पार्टी ने कांग्रेस में अपना बहुमत खो दिया तो ट्रंप पर महाभियोग की तलवार भी लटकने लगेगी। इसलिए वे अब इस युद्ध को किसी ऐसे समझौते के साथ समाप्त करने के लिए छटपटा रहे हैं, जिसमें उनकी जीत का ढोल पीटने

की गुंजाइश हो। इसलिए वे किसी भी मध्यस्थ के जरिये संदेश भेज कर बातचीत की हवा बांधने की कोशिश कर रहे हैं। दिलचस्प बात यह है कि मध्यस्थता के लिए उन्हें चीन या रूस जैसा कोई देश नहीं मिला जिसके ईरान के साथ सामरिक रिश्ते हों। ओमान और कतर जैसे पुराने मध्यस्थ भी तैयार नहीं हुए। बस एक पाकिस्तान मिला।

फारस और ओमान की खाड़ियों को मिलाने वाले होर्मुज जलमार्ग की चौड़ाई उसके मोड़ पर मात्र 21 समुद्री मील है जिसमें से 12 समुद्री मील तक ईरान की जलसीमा है और 12 समुद्री मील ओमान की। दोनों की जलसीमाएं एक-दूसरे से सटी हैं, लेकिन संयुक्त राष्ट्र के जलमार्ग कानून के अनुसार ये दोनों देश अपनी जलसीमाओं से होकर गुजरने वाले जहाजों को रोक नहीं सकते। जैसे विमानों को दूसरे देशों की वायुसीमा से होकर उड़ान भरने का अधिकार है, वैसे ही जहाजों को जलसीमा से होकर गुजरने का। यहां समस्या अधिकारों की न होकर अंतरराष्ट्रीय नियमों के पालन की है। ईरान पर हमले के समय तो अमेरिका और इजरायल ने संयुक्त राष्ट्र के नियमों का ध्यान नहीं रखा। न ही ईरान के चीन और रूस जैसे मित्रों ने या दूसरे देशों ने हमले रोकने के लिए कोई आवाज उठाई। अब ईरान से उसके होर्मुज जलमार्ग से होकर गुजरने के अधिकार की मांग किस मुंह से करेंगे। इसे खुलवाने के लिए ट्रंप ने नाटो और दूसरे मित्र देशों को दुत्कारा और फटकारा, लेकिन किसी ने कुछ नहीं किया। पिछले सप्ताह नाटो के महासचिव मार्क रूटर ने होर्मुज खुलवाने के लिए नाटो देशों समेत तीस देशों का संगठन खड़ा करने की बात जरूर की, मगर ईरान का कहना है कि होर्मुज जलमार्ग बंद कहां है? मित्र देशों के जहाजों के लिए तो खुला है। बस अमेरिका, इजरायल और उनके समर्थक देशों के जहाजों के लिए बंद है। उन्हें जाने के लिए भारी चुंगी अदा करनी होगी। कहां तो अमेरिका ने ईरान की मुल्लाशाही को गिराने के लिए उसके तेल पर प्रतिबंध लगा रखे थे। कहां अब ईरान ने अमेरिका और उसके मित्र देशों के जहाजों के होर्मुज से गुजरने पर प्रतिबंध लगा दिए हैं। उसे खुलवाने के लिए ट्रंप एक तरफ ईरान के बिजलीघर उड़ाने और कहर बरपाने की धमकी दे रहे हैं और त्वरित हमलों में दक्ष मरीन और पैराशूट सैनिकों को खाड़ी में तैनात कर रहे हैं। दूसरी तरफ धमकी की समयसीमा बढ़ाते जा रहे हैं। जहां ट्रंप ईरान की लड़ाई को होर्मुज खुला रखने की लड़ाई में बदल कर अंतरराष्ट्रीय समुदाय का खोया साथ हासिल करने की चाल चल रहे हैं, वहीं ईरान यमन के हूती संगठन को भी लड़ाई में उतार कर उस बाब-अल-मंदाब जलमार्ग को रोकने की तैयारी कर रहा है जो लाल सागर से होते हुए स्वेज नहर तक ले जाता है। ट्रंप सारे पत्ते अपने हाथ में होने के चाहे जितने दावे करें, पर लगता यही है कि वे फंस चुके हैं। यदि वे ईरान के बिजलीघरों को उड़ाते हैं तो ईरान के जवाबी हमलों की आशंका से तेल और शेयर बाजारों में और हड़कंप मचेगा। यदि सेना को ईरान के खार्ग या किसी और द्वीप पर उतारते हैं तो बाजारों में हड़कंप के साथ-साथ अमेरिका में भी उनका मुखर विरोध होगा। यदि होर्मुज खुलवाए बिना लौट जाते हैं तो उन्हें मागा राष्ट्रपति के रूप में नहीं, बल्कि वियतनाम से हारकर लौटे निक्सन और इराक से हारकर लौटे बुश की तरह ईरान से हार कर लौटे

लॉक डाउनन सिर्फ सियासी शोशेबाजी या भावी संकट की 'पब्लिक टेस्टिंग'?

उधर पश्चिम एशिया में ईरान अमेरिका इजराइल युद्ध अपने दौर में प्रवेश कर रहा है तो इधर भारत में राजनीतिक शोशों और लोगों में डर पैदा करने की नई मिसाइलें चल रही हैं। इसका ताजा उदाहरण वैश्विक ऊर्जा संकट के चलते भारत भर में लॉक डाउन लगने की आशंका का है। सरकार का कहना है कि यह सिर्फ अफवाह है, ऐसे किसी विचार पर बात नहीं हो रही है। दूसरी तरफ विपक्षी दलों का तर्क यह है कि इस बार कोई घातक वायरस भले न हो, लेकिन ईंधन का गंभीर संकट समूची आर्थिकी को लकवाग्रस्त कर देगा। यानी पर्याप्त ईंधन ही नहीं होगा तो सारी गतिविधियां खुद-ब-खुद ठप हो जाएंगी। अघोषित लॉक डाउन लग जाएगा। इस संदर्भ में सरकार की सफाई है कि ऐसा कुछ नहीं होने वाला। ईंधन की आपूर्ति बनाए रखने की हर संभव कोशिश की जा रही है। कुछ विपक्षी नेता एक काल्पनिक आशंका को हकीकत से जोड़ने पर आमादा हैं। हालांकि जो आम लोग वास्तव में परेशान हैं, उनकी चिंता सिर्फ इतनी है कि ईंधन की सुलभता वाले दिन कब लौटेंगे। याद करें वही 'लॉक डाउन,' जो देश में कोरोना प्रकोप के दौरान लगा था और जिसकी याद कर आज भी लोग सिहर उठते हैं। 'लॉक डाउन' वह भौतिक और मानसिक स्थिति है, जिसमें लगभग सब कुछ थम जाता है, सिवाय इंसान की सांसों के। यानी संचार बंद, सामाजिक संवाद बंद, कार्यस्थलों पर कामकाज बंद, सामूहिक गतिविधियां बंद। एक जबरन थोपा गया एकांतिक जीवन, जिसे जिंदा रहने के लिए जरूरी माना गया हो। तब लॉक डाउन चरणों में लगा था और पहले दौर ने लोगों की रोजी-रोटी तक छीन ली थी। हालांकि दूसरे, दौर में सरकार ने कुछ आर्थिक गतिविधियों को छूट दी थी। बहरहाल, ईरान इजराइल अमेरिका युद्ध में यूं तो भारत की कोई प्रत्यक्ष भूमिका नहीं है, लेकिन हम उसकी आंच में तेजी से झुलस रहे हैं। इसमें हमारा रोल कुल इतना है कि हम सबसे संपर्क में हैं और किसी तरह अपने जहाज निकलवाने की कोशिश कर रहे हैं। परंतु जंग से हमारे आयात के साथ निर्यात पर भी बुरा असर पड़ रहा है। युद्ध लंबा चला तो हालात और भी बदतर हो सकते हैं। तो क्या इसी आशंका के चलते 'लॉक डाउन' का शिगूफा छोड़ा गया है? सवाल यह भी है कि लोगों से सचेत रहने की सरकारी चेतावनियों के बीच 'लॉक डाउन' की बात आई कहां से, ऐसी बात को हवा देने के पीछे मकसद क्या है, क्या ऐसी परिस्थितियां बन गई हैं कि कोरोना काल की तरह फिर लॉक डाउन लगाया जाए? और सच में लगे तो इससे देश का कितना नुकसान होगा? यदि लॉक डाउन की बात केवल सियासी शोशेबाजी है तो फिर इसका सियासी लाभ किसके खाते में जा सकता है, साथ में यह भी कि क्या ऐसा करना देश विरोधी नहीं है? केवल युद्ध के कारण किसी देश में लॉक डाउन लगा हो, ऐसा कोई उदाहरण सामने नहीं है, उन देशों में भी नहीं, जो सीधे युद्धों में उलझे हैं। लॉक डाउन असाधारण आपात सामाजिक स्थिति है, जब संचार पर पूरी तरह ताले पड़ जाते हैं और दूरियां रखने को ही जिंदा रहने की गारंटी मान लिया जाता है। आज से 6 साल पहले समूची दुनिया में एक नए और खतरनाक वायरस कोरोना महामारी के कारण ऐसी स्थिति बनी थी। कोविड 19 वायरस मानव स्पर्श से फैलता था और फेंफड़ों पर हमला कर व्यक्ति की जान ले लेता था। लिहाजा आइसोलेशन ही बचने का सॉल्यूशन माना गया। एक विचित्र स्थिति पैदा हुई, जब 'सामाजिक प्राणी' कहलाने वाले मनुष्य को ज्यादा से असामाजिक होने पर विवश किया गया। लेकिन आज तो वैसी स्थिति नहीं है। याद रहे कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने देश में कोरोना वायरस के प्रकोप के चलते 24 मार्च 2020 को रात आठ बजे कोरोना प्रकोप के कारण पूरे देश में 21 दिन के लॉक डाउन का ऐलान किया था। उन्होंने कहा था कि लोग यह भूल जाएं कि घर से बाहर निकलना क्या होता है। तब तक देश में कोरोना वायरस के 519 मामलों की पुष्टि हो चुकी थी और नौ लोगों की मौत भी हो चुकी थी। संयोग से इस घटनाक्रम के एक माह पहले ही तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप भारत आए थे। और अब ईरान-अमेरिका युद्ध के केन्द्र में भी वो और नेतन्याहू हैं। दरअसल लॉक डाउन का यह ताजा 'वायरस' हाल में रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन के उस बयान के बाद फैला, जिसमें उन्होंने मास्को में उद्योगपतियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि ईरान-इजरायल युद्ध के कारण दुनिया भर में आर्थिक मंदी और कोरोना जैसी स्थिति जैसे-ईंधन की कमी पैदा होने का अंदेशा है। जिसके परिणाम कोरोना महामारी की तरह हो सकते हैं। उन्होंने साफ तौर पर लॉकडाउन लगने जैसी बात नहीं कही। लेकिन पुतिन का इतना चेताना भी भारत में चुनावी चूल्हे में आग फूंकने के लिए काफी था। चुनावग्रस्त पश्चिम बंगाल में मुख्यमंत्री ममता बैनर्जी ने तत्काल इसे तत्काल उछालते हुए कहा कि देश में केन्द्र सरकार देश में लॉकडाउन लगा सकती है और लोग घरों में बंद हो सकते हैं। इसी संदर्भ में 2021 के विधानसभा चुनाव की याद दिलाते हुए ममता ने कहा कि कोविड महामारी के बावजूद उनकी पार्टी ने सभी पाबंदियों के बावजूद चुनाव लड़ा था और भारी बहुमत से जीती। पार्टी अब किसी भी परिस्थिति में फिर से तैयार रहेगी। इसमें यह संदेश छुपा था कि अगर लॉक डाउन लगा तो यह टीएमसी के फायदे में ही होगा। यानी यहां लॉक डाउन की आशंका से ज्यादा उसकी चाहत है। ममता के बयान को कुछ दूसरे विपक्षी नेताओं ने और सुलगाने की कोशिश की और बतौर सबूत पेट्रोल पंपों पर और गैस एजेंसियों पर लगी लोगों की लंबी लाइनों की तस्वीरें सोशल मीडिया पर साझा की जाने लगीं। ममता तो अब यह भी कह रही हैं कि उनकी जान लेने की साजिश की जा रही है। यहां कॉमन बात यह है कि प्रधानमंत्री ने भी अपने भाषण में कोविड संकट का जिक्र किया और ममता बैनर्जी ने भी कोविड लॉक डाउन का हॉरर सीन रिक्रिएट करने की कोशिश की। यह संयोग है या फिर एक भावी गंभीर संकट की 'पब्लिक टेस्टिंग?' यही सवाल आज लोगों के मन को मथ रहा है। हालांकि संकटों में कहीं गई बात को लोगों ने देश की भाग्य रेखाओं से जोड़ दिया तो सोशल मीडिया पर कई लोगों ने इसका मजाक भी बनाया। अलबत्ता कोविड और पश्चिम एशिया के भू-राजनीतिक संकट में एक समानता है, वो ये कि दोनों के कारण वैश्विक अर्थव्यवस्था बुरी तरह हिट होगी। इसकी शुरुआत हो भी चुकी है, क्योंकि युद्ध की समाप्ति के कोई लक्षण अभी दिखाई नहीं दे रहे हैं। भारत की राजनीतिक शतरंज में एक मुद्दा और उछल रहा है, वो ये कि इस वैश्विक संकट में भारत द्वारा मध्यस्थता का। कहा जा रहा है कि चूंकि भारत के सभी से अच्छे रिश्ते हैं, इसलिए हमे सभी पक्षों के बीच सुलह के लिए मध्यस्थता करनी चाहिए। बात सही है। लेकिन कोई भी मध्यस्थता तभी सफल होती है, जब सम्बन्धित पक्षों को उस पर विश्वास हो।

माओवाद से मुक्ति की घड़ी, देश के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि

माओवाद से मुक्ति की समयसीमा निकट आ जाने के पूर्व बस्तर में 25 लाख के इनामी माओवादी सरगना पापा राव ने अपने 17 साथियों के साथ जिस तरह हथियार डाले, उसे माओवादियों के इस सबसे बड़े गढ़ में माओवादी हिंसा के अंत का एक निर्णायक क्षण मानना स्वाभाविक है, क्योंकि यह इस क्षेत्र का आखिरी बड़ा माओवादी सरगना माना जाता था। देश का माओवाद से मुक्ति की कगार पर पहुंचना एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। इस उपलब्धि के लिए पूरा श्रेय मोदी सरकार और विशेष रूप से गृहमंत्री अमित शाह को जाता है, जिन्होंने यह संकल्प लिया कि एक निश्चित अवधि में माओवादियों को घुटने टेकने के लिए विवश किया जाएगा। यह संकल्प पूरा होता इसलिए दिखाई दे रहा है, क्योंकि सुरक्षा बलों ने एक व्यापक और कहीं अधिक प्रभावी रणनीति के तहत माओवाद के खात्मे का अभियान छेड़ा। अच्छी बात यह रही कि इस अभियान में माओवाद ग्रस्त सभी राज्यों और वहां के सुरक्षा बलों ने पूरा सहयोग दिया। यदि माओवाद दशकों से देश के लिए सिरदर्द और आंतरिक सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा बना रहा तो इसलिए कि पहले की सरकारों ने उससे निपटने के मामले में वैसी प्रतिबद्धता का परिचय नहीं दिया, जैसी आवश्यक थी। अब जब माओवाद अंतिम सांसें गिनता दिख रहा है तो यह ध्यान रहे कि ग्रामीण क्षेत्रों में हथियारबंद माओवादी भले ही असहाय-निरुपाय दिख रहे हों, लेकिन अर्बन नक्सल कहे जाने वाले उनके उन समर्थकों को अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए, जो माओवादी संगठनों को वैचारिक खुराक देते रहे हैं। स्पष्ट है कि केंद्र सरकार एवं राज्य सरकारों को हताश-निराश माओवादियों को फिर से सिर उठाने का अवसर नहीं देना चाहिए। यह हिंसक विचारधारा किसी भी सूरत में दोबारा नहीं पनपनी चाहिए। माओवाद घोर अतिवादी एवं सभ्य समाज को चुनौती देने वाली एक विषैली और विजातीय विचारधारा है। स्पष्ट है कि इस विचारधारा का सामना विचार के स्तर पर भी करना होगा। ऐसा करते समय यह भी स्मरण रखना होगा कि निर्धन-वंचित ग्रामीणों और विशेष रूप से वनवासियों के हितों की रक्षा की फर्जी आड़ लेकर पनपी इस विचारधारा को समय-समय पर राजनीतिक संरक्षण भी मिला। चूंकि माओवादी भोले-भाले ग्रामीण लोगों के हितों के बहाने कमीशनखोरी और उगाही करने वाले गिरोह में तब्दील हो गए थे, इसलिए वे अपने को सशक्त करते चले गए। सबसे आश्चर्यजनक बात यह रही कि वे विभिन्न स्रोतों से आधुनिक हथियार एवं विस्फोटक भी हासिल करने में समर्थ रहे। यह सबको और विशेष रूप से माओवादियों के दबे-छिपे समर्थकों और उनसे हमदर्दी रखने वालों को समझने की आवश्यकता है कि माओवाद सरीखी विनाशकारी विचारधारा के लिए इस देश में कोई स्थान नहीं हो सकता।

सोशल मीडिया प्रैंक बनाम अप्रैल फूल- हंसी, भ्रम और फेक न्यूज का खतरनाक संगम

साढ़े चार शताब्दी से 1 अप्रैल वह दिन होता आ रहा है, जब मजाक करना एक तरह से %वैध% माना जाता है। हालांकि, आज यह सवाल पहले से ज्यादा जरूरी हो गया है, क्या अप्रैल फूल अब भी वही है या उसने एक नया, ज्यादा जटिल और कभी-कभी खतरनाक रूप ले लिया है? डिजिटल दौर में यह दिन केवल मजाक तक सीमित नहीं रहा। यह सोशल मीडिया, प्रैंक कल्चर और फेक न्यूज के एक ऐसे मिश्रण में बदल चुका है, जहां हंसी और भ्रम के बीच की रेखा तेजी से मिटती जा रही है। दरअसल, पहले अप्रैल फूल का मूल स्वभाव सीमित था। यह मजाक उन लोगों के बीच होता था, जो एक-दूसरे को जानते थे। इसमें भरोसा था कि मजाक एक सीमा के भीतर रहेगा और अंत में हंसी ही बचेगी। इस दिन की खासियत यही थी कि %फूल% बनने के बाद भी व्यक्ति खुद हंस सकता था। उसमें अपमान नहीं, बल्कि एक हल्की-सी शरारत का आनंद होता था। यह एक सामाजिक अभ्यास भी था, जहां हम थोड़ी देर के लिए गंभीरता छोड़कर सहज हो जाते थे, लेकिन डिजिटल प्लेटफॉर्म्स के आने के बाद यह संतुलन बदल गया। अब मजाक व्यक्तिगत नहीं रहा, बल्कि सार्वजनिक प्रदर्शन बन गया है। इंस्टाग्राम, यूट्यूब और अन्य प्लेटफॉर्म्स पर प्रैंक अब एक इंडस्ट्री बन चुका है। यहां मजाक का उद्देश्य हंसी नहीं, बल्कि अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचना है। यहीं से समस्या शुरू होती है। जब मजाक %कंटेंट% बन जाता है तो उसकी दिशा बदल जाती है। अब यह इस बात पर निर्भर करता है कि क्या ज्यादा चौंकाने वाला है? क्या ज्यादा वायरल हो सकता है, न कि क्या सही है? इस पूरे परिदृश्य में सबसे खतरनाक तत्व फेक न्यूज है। पहले अप्रैल फूल का मजाक सीमित दायरे में रहता था, लेकिन आज एक एडिटेड फोटो, एक झूठा वीडियो या एक बनावटी खबर कुछ ही मिनटों में लाखों लोगों तक पहुंच सकती है। समस्या केवल झूठी खबर का फैलना नहीं है, बल्कि उसका %सच जैसा दिखना% है। एआई, डीपफेक और एडिटिंग टूल्स ने यह संभव कर दिया है कि कोई भी व्यक्ति या घटना इतनी वास्तविक लगे कि उसे पहचानना मुश्किल हो जाए। ऐसे में जब कोई %मजाक% के नाम पर

गलत जानकारी फैलाता है तो वह केवल हंसी का कारण नहीं बनता, वह भ्रम और अविश्वास का कारण बनता है। कई बार लोग यह सोचकर खबर शेयर कर देते हैं कि यह मजाक है, लेकिन सामने वाला उसे सच मान लेता है। यही वह बिंदु है, जहां अप्रैल फूल और फेक न्यूज एक-दूसरे में घुल जाते हैं। फेक न्यूज का असर केवल डिजिटल दुनिया तक सीमित नहीं रहता। इसका असर वास्तविक जीवन में भी दिखाई देता है। किसी शहर में %हमला होने% की अफवाह, किसी सेलिब्रिटी की झूठी मौत की खबर या किसी सरकारी फैसले की गलत जानकारी, ये सब कुछ मिनटों में फैल जाते हैं और लोगों के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। भारत जैसे देश में, जहां सूचना तेजी से फैलती है, लेकिन सत्यापन उतनी तेजी से नहीं होता, वहां इसका असर और गंभीर हो सकता है। कई बार ऐसी अफवाहें घबराहट, भीड़ या तनाव की स्थिति पैदा कर देती हैं। और तब यह सवाल उठता है, क्या यह अभी भी मजाक है? सोशल मीडिया ने हर व्यक्ति को %प्रेषक% बना दिया है। अब हर कोई कंटेंट बना सकता है, शेयर कर सकता है और प्रभावित कर सकता है, लेकिन इसके साथ एक जिम्मेदारी भी आती है। क्या हम जो साझा कर रहे हैं, वह सही है? क्या वह किसी को भ्रमित कर सकता है? क्या उससे किसी की प्रतिष्ठा या सुरक्षा प्रभावित हो सकती है? ये सवाल अब अनदेखे नहीं किए जा सकते। अप्रैल फूल के पारंपरिक स्वरूप में यह जिम्मेदारी स्वाभाविक रूप से मौजूद थी, क्योंकि दायरा सीमित था, लेकिन डिजिटल दुनिया में दायरा अनंत है, इसलिए जिम्मेदारी भी उतनी ही बड़ी हो गई है।

दैनिक सवेरा टाइम्स

नई दिल्ली, बुधवार, 1 अप्रैल 2026

आज के वैज्ञानिक स्पष्ट रूप से सोचने की बजाय गहराई से सोचते हैं। गहराई से सोचने पर कोई व्यक्ति पूरी तरह पागल हो सकता है। –निकोला टेस्ला

मोदी @ 8,931 : 'नमो' शासन की सतत् यात्रा

जैसे-जैसे भारत आगे बढ़ रहा है, इन 8,931 दिनों का महत्व उस मजबूत आधार में है जो उन्होंने तैयार किया है

संजय टंडन
लेखक भाजपा के वरिष्ठ नेता एवं राष्ट्रीय कार्यकारिणी सदस्य हैं

जब नरेंद्र मोदी भारत के सबसे लंबे समय तक सेवा देने वाले शासन प्रमुख बनते हैं, तो उनकी यात्रा निरंतरता, सुधार और व्यापक पैमाने की कहानी प्रस्तुत करती है–जिसने शासन प्रणाली को नया रूप दिया, नागरिकों को सशक्त बनाया और भारत को समावेशी विकास और राष्ट्रीय उद्देश्य पर आधारित एक सशक्त और तेजी से बढ़ती वैश्विक शक्ति के रूप में स्थापित किया।

जब इतिहास नेतृत्व का मूल्यांकन करता है, तो वह केवल भाषणों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि दृष्टि की स्थिरता और कार्यान्वयन की निरंतरता को देखता है। 8,931 दिनों के सार्वजनिक जीवन–पहले गुजरात के मुख्यमंत्री और अब प्रधानमंत्री के रूप में–के साथ, नरेंद्र मोदी ने भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में एक अद्वितीय रिकॉर्ड स्थापित किया है। पवन कुमार चामलिंग के कार्यकाल को पीछे छोड़ते हुए यह उपलब्धि केवल संख्या नहीं, बल्कि जनविश्वास, शासन की निरंतरता और राष्ट्र-प्रथम सेवा के प्रति अटूट प्रतिबद्धता का प्रतीक है। इस उपलब्धि का महत्व केवल लंबी अवधि में नहीं, बल्कि उस परिवर्तन में है जो इसके साथ आया है। दो दशकों से अधिक समय में, मोदी का शासन मॉडल राज्य स्तर के नवाचार से राष्ट्रीय स्तर के क्रियान्वयन तक विकसित हुआ है, जिसमें प्रशासनिक दृढ़ता, नीतिगत सुधार और जनसंपर्क का अनूठा मिश्रण देखने को मिलता है। उनका नेतृत्व कार्यान्वयन, जवाबदेही और तकनीक के उपयोग को प्राथमिकता देता है।

इस यात्रा के केंद्र में भारत का आर्थिक पुनरुत्थान है। आज भारत दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में से एक है, जो मजबूत घरेलू मांग, सशक्त सेवा क्षेत्र और बुनियादी ढांचे में निरंतर सार्वजनिक निवेश से समर्थित है। कर सुधार से लेकर दिवाला समाधान तक के संरचनात्मक बदलावों ने अर्थव्यवस्था को मजबूत किया है और व्यापार करने में आसानी को बढ़ाया है। वैश्विक स्तर पर चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में भारत का उभरना इन्हीं प्रयासों का परिणाम है।

सबसे महत्वपूर्ण सुधारों में से एक वस्तु एवं सेवा कर (गुड्स एंड सर्विस टैक्स) है, जिसने जटिल अप्रत्यक्ष कर प्रणाली को एक एकीकृत व्यवस्था में बदला। 2017 में लागू होने के बाद, जीएसटी ने कर प्रणाली को सरल बनाया, करों के दोहराव को कम किया और एक साझा राष्ट्रीय बाजार को बढ़ावा दिया। दरों का सरलीकरण, डिजिटल अनुपालन और कर आधार का विस्तार जैसे निरंतर सुधारों ने इसे और मजबूत किया है।

भारत का विनिर्माण और निवेश केंद्र के रूप में उभार भी तेज हुआ है। 'मेक इन इंडिया' और उत्पादन-लिंक्ड प्रोत्साहन (पीएलआई) योजनाओं ने 14 लाख करोड़ रुपये का उत्पादन और 11.5 लाख से अधिक रोजगार उत्पन्न किए हैं। बैंकिंग क्षेत्र भी मजबूत हुआ है, जहां एनपीए घटकर 2.6% रह गए हैं। सिर्फ आर्थिक मोर्चे पर ही नहीं, बल्कि कल्याण और समावेशन के क्षेत्र में भी सरकार का ध्यान अभूतपूर्व रहा है। लगभग 81 करोड़ लोगों को मुफ्त अनाज मिल रहा है। 12 करोड़ से अधिक शौचालय बनाए गए हैं और 15 करोड़ घरों में नल से पानी की सुविधा पहुंची है। प्रधानमंत्री आवास योजना के तहत 4 करोड़ से अधिक घर बनाए गए हैं।

वित्तीय समावेशन भी एक प्रमुख आधार रहा है। मुद्रा योजना के तहत 52 करोड़ से अधिक ऋण दिए गए हैं, जबकि पीएम स्वनिधि योजना से 68 लाख स्ट्रीट वेंडर्स लाभान्वित हुए हैं। कोविड-19 महामारी के दौरान 20 करोड़ महिलाओं को सीधे नकद हस्तांतरण किया गया। कृषि क्षेत्र को भी निरंतर प्राथमिकता दी गई है। 2025-26 का कृषि बजट 2013-14 की तुलना में पांच गुना अधिक है। पीएम किसान योजना के तहत 3.7 लाख करोड़ रुपये सीधे किसानों को दिए गए हैं, जबकि फसल बीमा के तहत 1.75 लाख करोड़ रुपये वितरित किए गए हैं। 25 करोड़ से अधिक मृदा स्वास्थ्य कार्ड जारी किए गए हैं और 1,473 मंडियों को eNAM प्लेटफॉर्म से जोड़ा गया है।

महिला सशक्तिकरण–नारी शक्ति–एक प्रमुख स्तंभ के रूप में उभरा है। उज्ज्वला योजना से 10.33 करोड़ परिवारों को लाभ मिला है। मुद्रा ऋणों का 68% महिलाओं को दिया गया है। स्वयं सहायता समूहों से 10 करोड़ से अधिक महिलाएं जुड़ी हैं। युवा शक्ति – 'अमृत पीढ़ी'–भी इस दृष्टि का केंद्र है। 1.6 करोड़ से अधिक युवाओं को कौशल विकास योजनाओं के तहत प्रशिक्षित किया गया है और 1.6 लाख से अधिक स्टार्टअप को मान्यता मिली है। नई शिक्षा नीति और 23IIT, 21IIM तथा AIIMS जैसे संस्थानों का तीन गुणा विस्तार मानव संसाधन विकास के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

बुनियादी ढांचे का विकास अभूतपूर्व रहा है। राजमार्ग निर्माण 34 किमी प्रतिदिन की गति से हो रहा है, जबकि ग्रामीण सड़क नैटवर्क लगभग 99 प्रतिशत तक पहुंच चुका है। मैट्रो नैटवर्क 2014 के 248 किलोमीटर से बढ़कर 2025 में 1,000 किलोमीटर से अधिक हो गया है। 86 हवाई अड्डों का संचालन और 400 वंदे भारत ट्रेनों की शुरुआत इस बदलाव को दर्शाती है। भारत की डिजिटल क्रांति वैश्विक स्तर पर एक उदाहरण बन गई है। 116 करोड़ मोबाइल उपयोगकर्त्ता और 6.93 लाख किलोमीटर ऑप्टिकल फाइबर नैटवर्क के साथ कनैक्टिविटी गांवों तक पहुंची है। डेटा की लागत 308 रुपये प्रति जीबी से घटकर 9.34 रुपये हो गई है। अप्रैल 2025 में यूपीआई लेनदेन 24 लाख करोड़ रुपये तक पहुंच गया।

राष्ट्रीय सुरक्षा और वैश्विक भूमिका में भी उल्लेखनीय प्रगति हुई है। रक्षा निर्यात 2024-25 में 23,622 करोड़ रुपये तक पहुंच गया, जो 2014 के मुकाबले 34 गुना वृद्धि है। सशक्त कूटनीति और रणनीतिक निर्णयों ने भारत को वैश्विक मंच पर एक महत्वपूर्ण शक्ति बनाया है।

यह यात्रा दिल्ली से शुरू नहीं हुई थी। गुजरात के मुख्यमंत्री के रूप में नरेंद्र मोदी ने 'वाइब्रेंट गुजरात' और 'ज्योतिग्राम योजना' जैसे प्रयासों से अपने शासन मॉडल की नींव रखी। कच्छ भूकंप के बाद पुनर्निर्माण ने उनकी संकट को अवसर में बदलने की क्षमता को दर्शाया।

इस लंबे कार्यकाल की सबसे बड़ी विशेषता इसकी निरंतरता है। जहां लंबे समय तक शासन में ठहराव आ सकता है, वहीं मोदी युग निरंतर सुधार, नीतिगत लचीलापन और साहसिक निर्णयों से परिभाषित रहा है। जैसे-जैसे भारत आगे बढ़ रहा है, इन 8,931 दिनों का महत्व उस मजबूत आधार में है जो उन्होंने तैयार किया है। अंततः नेतृत्व का मूल्यांकन केवल अवधि से नहीं, बल्कि परिवर्तन से होता है। गांधीनगर से नई दिल्ली तक नरेंद्र मोदी की यात्रा एक ऐसे शासन का प्रतीक है, जिसमें विस्तार, उद्देश्य और क्रियान्वयन का संतुलन दिखाई देता है।

देश के कृषि क्षेत्र में फसल भंडारण और भुगतान में देरी की समस्या

भारत में अधिकतर खेतीबाड़ी परम्परागत फसल चक्र के अंतर्गत होती है। धान के बाद गेहूं, गेहूं के बाद फिर धान अर्थात रबी और खरीफ का फसल चक्र। इस समय खेतों में गेहूं पकने के बाद कटने के लिए तैयार है। कई स्थानों पर कटने के बाद मंडियों में पहुंच रहा है। इससे पहले गन्ने की फसल मंडियों में पहुंची थी जो बाजार और चीनी मिलों को बेची गई। पंजाब ने तो फिर भी किसानों की अधिकतर मुश्किलों को काफी हद तक हल कर लिया है लेकिन देश के अन्य बड़े राज्यों में फसल का भुगतान किसानों को समय पर नहीं मिलता। गन्ना किसानों के बकाए के बीच एक समस्या यह हो गई है कि किसानों का बकाया 32 गुणा बढ़ गया है और चीनी मिलों के पास किसानों का 16 हजार करोड़ रुपया फंसा हुआ है।

गन्ना फसल के बकाए में सबसे अधिक दूभर स्थिति कर्नाटक में है जहां किसानों के गन्ना भुगतान का 4956 करोड़ रुपया बकाया बाकी है। इसके बाद महाराष्ट्र में 4252 करोड़ रुपये और उत्तर प्रदेश में 3787 करोड़ रुपये तक का बकाया है।

पंजाब में जब फसलें मंडियों में बिकने के लिए आती हैं तो सरकारें घोषणा करती हैं कि किसानों को फसल का भुगतान उसी समय कर दिया जाएगा। पंजाब में इन घोषणाओं पर अमल भी किया गया है। इसलिए पंजाब में केवल 535 करोड़ रुपये ही बकाया बाकी है। इसका अर्थ यह है कि सरकारों की नीयत हो तो किसी भी समस्या को हल किया जा सकता है। अभी पिछले दिनों पंजाब में सरकार ने यह घोषणा की है कि प्रदेश में बिजली मुफ्त होने के बावजूद बिजली अनुदान के कर्ज का बोझ घटा दिया है और विद्युत क्षेत्र में राजस्व में भी वृद्धि हुई है।

पूरे देश में किसानों की स्थिति का आकलन करते हैं तो पाते हैं कि जब किसान फसलें लेकर मंडियों में आते हैं तो सबसे पहले सही कीमत लेने के लिए उन्हें थोड़ा समय प्रतीक्षा करनी पड़ती है इसलिए फसल का भंडारण करना पड़ता है। लेकिन यह समस्या इसलिए हल नहीं होती क्योंकि गोदाम पहले से ही भरे रहते हैं। किसानों को मजबूरन अपनी फसल खुले में रखनी पड़ती है। दूसरी ओर आजकल पर्यावरण प्रदूषण के कारण मौसमों की स्थिति खराब ही चलती रहती है। खुले में पड़ी फसल अगर बरसात की चपेट में आ जाए तो उसकी गुणवत्ता पर बुरा असर पड़ता है। नतीजा, किसानों को भुगतान कम मिलता है। इसे देखते हुए पंजाब सरकार ने घोषणा कर रखी है कि किसानों के लिए समुचित गोदाम बनाए जाएंगे।

देश में अब तक इस समस्या का हल नहीं हो पाया। खैर, बड़ा प्रश्न तो यह है कि चीनी मिलों के पास किसानों का इतना बकाया क्यों रुका हुआ है। असल में कारण यह है कि देश में हर साल 300 से 330 लाख मीट्रिक टन चीनी का उत्पादन होता है जबकि इसकी खपत 270 से 290 लाख मीट्रिक टन है। इसलिए जो मिलें अपनी पूरी खरीद नहीं बेच पातीं, वहां किसानों का भुगतान भी फंस जाता है।

अब सरकार गन्ने को एथेनॉल के उत्पादन में इस्तेमाल करने का विकल्प निकाल रही है और इस समस्या का हल करने का प्रयास किया जा रहा है। अब चीनी का न्यूनतम समर्थन मूल्य भी 2900 से बढ़ाकर 3100 रुपये हो गया है और स्टॉक सीमा भी लागू हो गई है। इसलिए पंजाब में तो गन्ना उत्पादकों का भुगतान सुचारू रूप से चल रहा है लेकिन दूसरे राज्यों में यह समस्या अभी भी मुंह बाए खड़ी है। इस बात को सार्वजनिक वितरण की संसदीय समिति की अध्यक्ष सांसद कनिमोझी करुणानिधि ने भी माना है और गन्ने के बकाए के 32 गुणा बढ़ जाने पर चिंता प्रकट की है। हमारा अपना विचार यह है कि ऐसी समस्याओं का हल तुरंत किया जाना चाहिए। नीतिगत फैसलों को टाला नहीं जाए। **–शीतल विज**

माता-पिता की देखभाल करने के लिए कानून

भौतिक पदार्थों के लालच से ग्रस्त अधिकांश लोगों ने नैतिकता को ताक पर रख दिया है। ऐसे लोग दूसरों की तो क्या अपने मां-बाप तक की परवाह नहीं करते। माता-पिता के अपमान और तिरस्कार की ऐसी खबरें आती हैं कि सुनकर रूह कांप जाती है। हाल ही में रेमंड कम्पनी के मालिक विजयपत सिंघानिया के देहावसान हुआ। बहुत कामयाब व्यापारी होने के बावजूद 7-8 साल पहले उन्होंने कम्पनी के 37 प्रतिशत शेयर बेटे को दे दिए थे। इसके बाद उनका जीवन बदहाली और निराशा में गुजरा। उन्हें उचित देखभाल और मान-सम्मान मिलना बंद हो गया। ऐसी घटनाएं असमर्थ या समर्थ दोनों परिवारों में घट रही हैं। जमीन-जायदाद के लिए मां-बाप की हत्या तक किए जाने की खबरें सामने आती रहती हैं।

कानून तो यह भी कहता है कि अगर माता-पिता अपनी संतान को स्व-अर्जित जायदाद दे देते हैं लेकिन संतान उनकी देखभाल नहीं करती तो वे अपनी संपत्ति वापस ले सकते हैं। देश में अधिकांश लोगों की प्रवृत्ति यह बन चुकी है कि जब कमाई के बावजूद उनकी जरूरतें पूरी नहीं होती तो उनकी उपेक्षा का सबसे पहला शिकार माता-पिता ही होते हैं। गत सप्ताह तेलंगाना विधानसभा में एक विधेयक 'तेलंगाना कर्मचारी जवाबदेही और माता-पिता सहायता निगरानी विधेयक 2026' पारित किया गया है जिसके तहत प्रावधान है कि अगर कोई वेतनभोगी कर्मचारी अपने बुजुर्ग माता-पिता की देखभाल नहीं करता तो उक्त कर्मचारी के वेतन में अपने-आप कटौती करके मां-बाप को दे दी जाएगी।

इस कानून की जद में सरकारी और निजी कर्मचारी दोनों आएंगे। इसमें कर्मचारियों के वेतन का 15 प्रतिशत तक काटकर उनके माता-पिता को दिया जा सकता है। अपने आप में किसी राज्य सरकार द्वारा पारित किया गया यह पहला कानून है। वरिष्ठ नागरिकों के कल्याण के लिए 2007 का कानून देश में लागू है लेकिन तेलंगाना में पारित इस विधेयक में संतान की जवाबदेही और स्पष्ट कर दी गई है। यह गलत नहीं है कि लापरवाह लोगों को कानून के दायरे में लाकर बाध्य किया जाना चाहिए।

अगर संतान परवाह नहीं करती तो जिला कलैक्टर को शिकायत की जा सकती है जिस पर एक्शन लिया जाएगा। यह कानून नेताओं पर भी लागू होगा। फिर भी हमें एक कमी यह नजर आ रही है कि देश में अधिकतर लोग अनियमित कामकाज या व्यापार करते हैं यानी वेतनभोगी नहीं है। ऐसे लोगों पर यह कानून कैसे लागू होगा? उनके माता-पिता का इस कानून से कैसे लाभ होगा? यह बात भी स्पष्ट की जानी चाहिए। **–शीतल विज**

Email: letter2editor@dainiksaveratimes.net

नक्सलवाद का पतन: सुरक्षा, विकास और पुनर्वास की नीति

पार्थ कपोले

लोकसभा में सोमवार शाम केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने देश में नक्सलवाद के अंत की बात दृढ़ता से कही। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली केंद्र सरकार ने 2014 में ही नक्सलवाद समाप्त करने का लक्ष्य तय किया था। केंद्रीय गृहमंत्री पद संभालने के बाद अमित शाह ने भी '31 मार्च 2026 तक देश से नक्सलवाद समाप्त करेंगे' ऐसी घोषणा की थी। कई लोगों ने इस घोषणा को गंभीरता से नहीं लिया था। 'गरीबी हटाओ' शैली की गांधी-नेहरू परिवार की घोषणाओं पर पली-बढ़ी इकोसिस्टम ने तो इस घोषणा का मजाक ही उड़ाया था। लेकिन ऐसा करते समय इस इकोसिस्टम को यह भूल गया था कि अब सत्ता में नक्सलवादियों के पोषक नहीं हैं।

परिणामस्वरूप इकोसिस्टम अपनी ही धुन में मग्न था। उसी समय केंद्र सरकार ने नक्सलवाद के उन्मूलन के लिए रणनीति बनाकर उस पर काम शुरू कर दिया था। अपने भाषण में केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने स्पष्ट रूप से कहा कि भारत से नक्सलवाद अब समाप्त हो चुका है, यह कहने में कोई संकोच नहीं है। भारत के इस नक्सलवाद विरोधी संघर्ष का अध्ययन करने पर उसमें एक विशेष बात दिखाई देती है–पुनर्वास को दिया गई प्राथमिकता। नक्सलवादियों ने हथियार उठाकर भारत के खिलाफ ही युद्ध छेड़ा था। लेकिन उनका मुकाबला करते समय उन्हें पहले आत्मसमर्पण का अवसर दिया गया। इसके लिए विभिन्न योजनाएं भी लागू की गईं। केंद्र सरकार, महाराष्ट्र सरकार, छत्तीसगढ़ सरकार और ओडिशा सरकार की योजनाएं इसमें प्रमुख रही हैं।

महाराष्ट्र का नक्सलवाद विरोधी दृष्टिकोण आत्मसमर्पण और पुनर्वास की नीति के अनुरूप एक समन्वित और बहुआयामी है। केंद्र सरकार की योजना से जुड़ी राज्य की नीति के कारण लाभों के वितरण और क्रियान्वयन में एकरूपता बनाए रखी गई है। एसआरई और एससीए के तहत प्राप्त केंद्रीय निधि के कारण राज्य को एक ओर कठोर सुरक्षा कार्रवाई करते हुए पुनर्वास के प्रयास भी प्रभावी ढंग से आगे बढ़ाने में मदद मिली है। छत्तीसगढ़ और ओडिशा के साथ संयुक्त त्रिराज्यीय अभियानों में महाराष्ट्र की सक्रिय भूमिका दिखाई देती है, जहां आत्मसमर्पण नीतियां क्रियान्वयन को पूरक बनाती हैं। जिला खनिज निधि के तहत लागू परियोजनाओं के कारण विशेष रूप से गढ़चिरौली जैसे क्षेत्रों में आधारभूत ढांचे, शिक्षा और रोजगार सृजन को बढ़ावा मिला है। सड़क संपर्क, मोबाइल नैटवर्क का विस्तार और खनन व औद्योगिक परियोजनाओं से उत्पन्न रोजगार के अवसरों के कारण स्थानीय लोगों की विद्रोही नैटवर्क पर निर्भरता कम हुई है। साथ ही कौशल विकास कार्यक्रम और सी-60 बल जैसी पुलिस भर्ती अभियानों के कारण युवाओं के लिए मुख्यधारा में आने और प्रशासन में भागीदारी के नए रास्ते खुले हैं। महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री-गृहमंत्री देवेंद्र फडणवीस का नेतृत्व इसमें अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है।

कुल मिलाकर, महाराष्ट्र का मॉडल विकास आधारित आत्मविश्वास निर्माण, सुरक्षा तंत्र का दबाव बनाए रखना और पुनर्वास के लिए प्रोत्साहन देना–इन तीनों तत्वों का संतुलित संयोजन है।

छत्तीसगढ़ ने नक्सलवाद विरोधी संघर्ष में आत्मसमर्पण और पुनर्वास को केंद्र में रखते हुए एक प्रभावी, प्रोत्साहन आधारित नीति विकसित की है। 2024 में संशोधित नीति के कारण आत्मसमर्पण में वृद्धि हुई है, जिसमें 50,000 रुपये की तत्काल सहायता, रैंक के अनुसार 3 लाख से 12 लाख रुपये तक के पुरस्कार और हथियार समर्पण के लिए बड़े आर्थिक प्रोत्साहन देकर निःशस्त्रीकरण को बढ़ावा मिला है। उच्च-मूल्य कार्यकर्ताओं के लिए 10 लाख रुपये सहायता या सरकारी नौकरी का अवसर, साथ ही जमीन-घर सहायता से दीर्घकालीन स्थिरता सुनिश्चित होती है।

रोजगार, कौशल विकास, निजी क्षेत्र की भागीदारी और शैक्षणिक-सामाजिक सुविधाओं के कारण पुनर्वास अधिक सुदृढ़ हुआ है। ओडिशा ने भी संरचित और प्रोत्साहन-आधारित मॉडल के माध्यम से आत्मसमर्पण को गति दी है। 2.5 लाख से 5 लाख रुपये आर्थिक सहायता, व्यवहार से जुड़े चरणबद्ध भुगतान, उच्च-मूल्य कार्यकर्ताओं के लिए 10 लाख रुपये प्रोत्साहन और हथियार समर्पण के लिए श्रेणीबद्ध राशि से निःशस्त्रीकरण को बढ़ावा मिला है।

36 महीनों का मासिक वजीफा, आवास, स्वास्थ्य सेवाएं, कौशल विकास और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के कारण पुनर्वास अधिक प्रभावी हुआ है। सहयोग की शर्तों पर आधारित इस नीति से खुफिया तंत्र को मदद मिलती है और नियंत्रण व प्रोत्साहन का संतुलन बनाते हुए ओडिशा ने स्वैच्छिक आत्मसमर्पण प्रक्रिया को मजबूत किया है। कुल मिलाकर देखा जाए तो नक्सलवाद विरोधी संघर्ष अब केवल सुरक्षा कार्रवाई का विषय नहीं रह गया है, बल्कि यह विकास, सुशासन और वैचारिक स्पष्टता का संगम बन गया है। छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र और ओडिशा जैसे राज्यों ने आत्मसमर्पण और पुनर्वास की प्रभावी नीतियों के माध्यम से नक्सलवादियों को मुख्यधारा में लाने का मार्ग खोला है, वहीं केंद्र सरकार ने ठोस राजनीतिक इच्छाशक्ति और समन्वित कार्रवाई के जरिए इस संघर्ष को निर्णायक मोड़ दिया है। आज स्थिति यह है कि एक ओर कठोर कार्रवाई और दूसरी ओर विकास आधारित पुनर्वास की दोहरी नीति के कारण नक्सलवाद की नींव कमजोर हो रही है। परिणामस्वरूप देश नक्सल मुक्त भारत की दिशा में निर्णायक कदम बढ़ाता दिखाई दे रहा है।

ऐसा हुआ है बदलाव: पिछले 11 वर्षों में 596 फोर्टिफाइड पुलिस स्टेशन बनाए गए। नक्सल प्रभावित जिलों की संख्या 2014 में 126 थी, जो अब केवल 2 रह गई है। सर्वाधिक प्रभावित जिले 2014 में 35 थे, वर्तमान में शून्य हैं। नक्सल घटनाओं को दर्ज करने वाले पुलिस स्टेशन 350 से घटकर 60 रह गए हैं। 2024-2026 (मार्च 2026 तक) अवधि में 706 नक्सली मुठभेड़ों में मारे गए। 2218 नक्सली गिरफ्तार हुए और 4839 नक्सलियों ने आत्मसमर्पण किया

ऑपरेशन: ऑपरेशन ऑक्टोपस (2022): बिहार के बूढ़ा पहाड़ क्षेत्र में संचालित। ऑपरेशन डबल बुल (8-25 फरवरी 2022): झारखंड के गुमला, लोहरदगा और लातेहार जिलों में; तीनों जिले नक्सल मुक्त। ऑपरेशन थंडरस्टॉर्म (1-3 सितंबर 2022): झारखंड के सरायकेला, पश्चिम सिंहभूम और खूंटी जिलों में; क्षेत्र नक्सल मुक्त। ऑपरेशन भीमबर्ग (जून-जुलाई 2022): बिहार के मुंगेर जिले में। ऑपरेशन चक्रबांधा (2022): बिहार के गया और औरंगाबाद जिलों में; क्षेत्र नक्सल मक्त।

ऑपरेशन ब्लैक फॉरेस्ट: तेलंगाना-छत्तीसगढ़ सीमा पर 50 किमी लंबा और 37 किमी चौड़ा पहाड़ी क्षेत्र में कार्रवाई। नक्सलियों का स्थायी कैंप, 5 वर्षों का भंडार (भोजन, हथियार, सोलर व्यवस्था) 400-500 कैडर मौजूद। 21 दिन तक ऑपरेशन चला 0+ नक्सली मारे गए, शेष मारे गए/आत्मसमर्पण

प्रमुख नक्स नेताओं पर कार्रवाई

-बसवराजू (महासचिव)- मारा गया, हिडमा-मारा गया, गजुरल्ला रवि-मारा गया, कदारी सत्यनारायण रेड्डी-मारा गया, गणेश उइके-मारा गया, वेणुगोपाल-आत्मसमर्पण, वासुदेव-आत्मसमर्पण, पल्लुरी प्रसाद राव-आत्मसमर्पण, रामदेव मांझी-आत्मसमर्पण, टिपरी तिरुपति -आत्मसमर्पण।

उत्तराखंड में यूसीसी पर वैश्विक प्रश्न-चिन्ह

हाल ही में जारी 'अमेरिकी अंतर्राष्ट्रीय धार्मिक स्वतंत्रता आयोग' की 2026 की वार्षिक रिपोर्ट ने भारत की आंतरिक नीतियों को लेकर अंतर्राष्ट्रीय विमर्श को पुनः तीव्र कर दिया है। इस बार विवाद का केंद्र केवल राष्ट्रीय नीतियां नहीं बल्कि उत्तराखंड की समान नागरिक संहिता (यूसीसी) भी है। यह अपने आप में ऐतिहासिक और कूटनीतिक रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि पहली बार किसी हिमालयी राज्य के क्षेत्रीय विधान को धार्मिक स्वतंत्रता और मानवाधिकारों के वैश्विक मानकों के संदर्भ में इस गहनता से परखा गया है। रिपोर्ट में भारत को लगातार सातवें वर्ष 'विशेष चिंता वाले देश' की श्रेणी में रखने की अनुशंसा की गई है और उत्तराखंड की इस संहिता को धार्मिक स्वतंत्रता की कथित गिरती स्थिति के एक प्राथमिक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

क्षेत्रीय विधान से अंतर्राष्ट्रीय विमर्श तक: उत्तराखंड देश का पहला राज्य है जिसने स्वतंत्रता के पश्चात समान नागरिक संहिता को मूर्त रूप देकर उसे प्रशासनिक ढांचे के साथ धरातल पर उतारा। इस कानून का घोषित ध्येय विवाह, विच्छेद, उत्तराधिकार और भरण-पोषण जैसे नागरिक विषयों पर विभिन्न समुदायों के व्यक्तिगत कानूनों के स्थान पर एक समरूप व्यवस्था स्थापित करना है। राज्य सरकार इसे महिला अधिकारों, विधिक समानता और सामाजिक न्याय के एक क्रांतिकारी अध्याय के रूप में प्रचारित करती रही है। मुख्यमंत्री पुष्कर सिंह धामी ने इसे देवभूमि से पूरे देश के लिए एक 'न्याय का प्रकाश' बताया है किंतु अमेरिकी आयोग ने इसे भिन्न दृष्टिकोण से देखा है। आयोग का तर्क है कि यह संहिता अल्पसंख्यक समुदायों–विशेषकर मुस्लिम, ईसाई और पारसी के उन निजी कानूनों को निर्बल करती है जो दशकों से भारत के बहुलतावादी विधिक ढांचे का अभिन्न अंग रहे हैं। आयोग ने उत्तराखंड की इस संहिता को केवल एक राज्य स्तरीय कानून नहीं बल्कि भारत के बदलते विधिक और सामाजिक स्वरूप के 'प्रायोगिक प्रतिमान' के रूप में प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि यह विधान अब राज्य की सीमाओं तक सीमित न रहकर अंतर्राष्ट्रीय अधिकार विमर्श और कूटनीतिक चर्चा का विषय है।

चर्चा/ जय सिंह रावत

विधिक बारीकियां और वैचारिक संघर्ष: इस संहिता के भीतर कई ऐसे प्रावधान हैं जिन पर आयोग ने विशेष चिंता व्यक्त की है। उदाहरण के तौर पर, उत्तराधिकार के नियमों में पुत्र और पुत्री को समान अधिकार देना राज्य की दृष्टि में लैंगिक न्याय है किंतु रिपोर्ट इसे कुछ धार्मिक समुदायों के 'धार्मिक विश्वासों और प्रथाओं' में हस्तक्षेप के रूप में देखती है। इसके अतिरिक्त विवाह विच्छेद (तलाक) के लिए केवल न्यायिक प्रक्रिया को अनिवार्य बनाना उन समुदायों के लिए चुनौती माना गया है जहां धार्मिक रीति-रिवाजों के माध्यम से विच्छेद की परंपरा रही है। अमेरिकी आयोग ने अपनी रिपोर्ट में इस बात पर भी बल दिया है कि 'समानता' का अर्थ 'एकरूपता' नहीं होना चाहिए

निजता का अधिकार और राज्य का हस्तक्षेप: रिपोर्ट की सर्वाधिक प्रखर आपत्ति लिव-इन संबंधों के अनिवार्य पंजीकरण को लेकर है। संहिता के अनुसार, ऐसे संबंधों में रहने वाले व्यक्तियों को एक महीने के भीतर पंजीकरण कराना अनिवार्य है अन्यथा उन्हें कारावास और अर्थदंड का सामना करना पड़ सकता है। आयोग का मानना है कि दो वयस्कों के आपसी सहमति वाले निजी संबंधों को राज्य के समक्ष दर्ज कराना निजता के मौलिक अधिकार में प्रत्यक्ष अतिक्रमण है।

सांस्कृतिक स्वायत्तता और जनजातीय छूट का विरोधाभास: रिपोर्ट का एक अत्यंत सूक्ष्म और गंभीर पक्ष उत्तराखंड की अनुसूचित जनजातियों को इस संहिता से बाहर रखने की व्यवस्था पर केंद्रित है। राज्य की पांच प्रमुख जनजातियों–जौनसारी, भोटिया, थारू, बुक्सा और राजी–को उनकी अद्वितीय सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं को अक्षुण्ण रखने के उद्देश्य से इस कानून के दायरे से मुक्त रखा गया है। स्थानीय स्तर पर इसे जनजातीय संस्कृति के संरक्षण की दृष्टि से एक संवेदनशील कदम माना गया। भारत सरकार और विदेश मंत्रालय ने इस रिपोर्ट को पूर्णतः पक्षपातपूर्ण, प्रेरित और त्रुटिपूर्ण बताकर अस्वीकार कर दिया है।

उत्तराखंड का यह प्रयोग पूरे देश के लिए: उत्तराखंड की समान नागरिक संहिता अब केवल एक राज्य का कानून नहीं रह गई है, बल्कि यह इस बात का पैमाना बन गई है कि आधुनिक भारत अपनी प्राचीन विविधता और भविष्य की विधिक एकरूपता के बीच संतुलन कैसे बनाएगा। यह विवाद दो विचारधाराओं का टकराव है–एक जो राष्ट्र की एकता के लिए नियमों की एकरूपता को आवश्यक मानती है, और दूसरी जो मानती है कि न्याय तभी संभव है जब विविध संस्कृतियों की विशिष्टता को स्वीकार किया जाए। अतः, उत्तराखंड का यह प्रयोग पूरे देश के लिए एक प्रयोगशाला है।

कार्टून कोना

विद्या मित्र

तलाश –सुरेश सेठ

खबर गर्म है,
एक चूहे का
पोस्टमार्टम हो गया
वह क्यों मरा,
कैसे मरा?
पशु, जीव प्रेमी चकित,
दयार्द्र दुखी हमदर्द
कैसे बनें हम?
उसके मृत्यु दुख से कैसे भरें?
जो मरा वह न पशु था
न जीव तालिका में उसका नाम।
महामारियां गुजर गईं
लावारिस लाशें मिलती रहीं,
गंगा की रेत में,
मोबाइल टावरों पर,
सड़कों पर लगे धरनों में,
नशों के नाबदान में,
सात समुद्र पार
जाने की छटपटाहट में,
दयार्द्र, दुखी, हमदर्द कैसे हों?
कातिल की तलाश कहां करें?
बातों के जंगल में,
घोषणाओं और दावों में,
उसकी सफलता में अघाते
युगपुरुषों में?
तलाश शर्मिंदा है,
देश अमृत महोत्सव
मना रहा है,
देश शतकीय उत्सव की
ओर बढ़ रहा है।
देश दुनिया में पांचवें से उठ
तीसरी महाशक्ति बन गया,
यहां अपना चेहरा ही
पहचान में नहीं आता?
कत्ल कर दिए गए किसी
चूहे जैसा चेहरा,
जो आदमी है न पशु
न पशु है, न जीव।
रुको,
इस चेहरे की तालिका में
तलाश अभी जारी है।

(आदमी का चेहरा खो गया। तरक्की के कोलाहल के बीच एक साधारण व्यक्ति न पशु रहा न जीव। उसी गुमशुदा चेहरे की परख पहचान करती है सुरेश सेठ की नई कविता।)

सोनिया गांधी के लेख: नैतिकता, कूटनीति और राजनीति

हाल के समय में सोनिया गांधी द्वारा लिखे गए लेख और वक्तव्य सार्वजनिक बहस का विषय बने हुए हैं। एक ओर मार्च 2026 में प्रकाशित उनके लेख में उन्होंने ईरान के सर्वोच्च नेता और शिया धर्मगुरु अयातुल्लाह अली खामेनेई की हत्या पर भारत सरकार की चुप्पी को लेकर प्रश्न उठाए। वहीं जून 2025 में लिखे गए अपने एक अन्य लेख में उन्होंने गाजा में चल रहे संघर्ष के संदर्भ में भारत की प्रतिक्रिया को लेकर आलोचना की थी।

इन लेखों में उनका तर्क यह रहा कि भारत की विदेश नीति को नैतिकता, अंतर्राष्ट्रीय कानून और मानवीय मूल्यों के आधार पर स्पष्ट आवाज उठानी चाहिए परंतु इन वक्तव्यों के साथ एक व्यापक प्रश्न भी सामने आता है–क्या यह वास्तव में सिद्धांत आधारित कूटनीति का आग्रह है या फिर ऐसी चयनात्मक नैतिकता जो अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की जटिलताओं और भारत के राष्ट्रीय हितों को पर्याप्त महत्व नहीं देती? सबसे पहले उस विचार की चर्चा आवश्यक है जिसे अक्सर 'नियम-आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था' कहा जाता है। अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का अध्ययन करने वाले अनेक विशेषज्ञ मानते हैं कि ऐसी व्यवस्था वर्षों से कमजोर पड़ चुकी है।

देशकाल/ गजेन्द्र सिंह

विश्व राजनीति आज आदर्शों से अधिक शक्ति संतुलन, रणनीतिक हितों और गठबंधनों पर आधारित है। पश्चिम एशिया के संघर्षों से लेकर पूर्वी यूरोप और इंडो-पैसिफिक तक, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में नैतिकता की भाषा अक्सर वास्तविक शक्ति राजनीति से पीछे रह जाती है। ऐसी स्थिति में यदि कोई नेता वैश्विक घटनाओं को केवल नैतिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है और भू-राजनीतिक वास्तविकताओं की अनदेखी करता है तो उसका दृष्टिकोण अधूरा प्रतीत हो सकता है। इस आलोचना का दूसरा पहलू चयनात्मक नैतिक आक्रोश है। कुछ विश्लेषकों का मानना है कि अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर नैतिक भाषा तो प्रबल रूप से सामने आती है लेकिन भारत के अपने ऐतिहासिक अनुभवों पर वही तीव्रता दिखाई नहीं देती।

विवाद का एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष ईरान की राजनीतिक संरचना से जुड़ा है। ईरान के सर्वोच्च नेता अयातुल्लाह अली खामेनेई को अक्सर 'राष्ट्र प्रमुख' के रूप में संबोधित किया जाता है लेकिन उनकी नियुक्ति प्रक्रिया सामान्य लोकतांत्रिक चुनाव से भिन्न है। ईरान में सर्वोच्च नेता का चयन विशेषज्ञों की सभा नामक इस्लामिक निकाय द्वारा किया जाता है जो मुख्यतः धर्मगुरुओं का समूह है। आलोचकों के अनुसार यह व्यवस्था लोकतांत्रिक जनादेश की बजाय एक इस्लामिक-राजनीतिक ढांचे पर आधारित है। ईरान की सरकार पर सबसे गंभीर आरोप महिलाओं के अधिकारों और राजनीतिक असहमति के दमन से जुड़े हैं।

पश्चिम एशिया की राजनीति में ईरान की विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण पहलू उसके क्षेत्रीय प्रभाव से जुड़ा हुआ है। यह प्रभाव उन संगठनों के माध्यम से भी देखा जाता है जिन्हें विभिन्न स्तरों पर तेहरान का समर्थन मिलने की बात अंतर्राष्ट्रीय विश्लेषणों में कही जाती रही है। इनमें प्रमुख रूप से हमास, हिज्बुल्लाह और हूती जैसे समूह शामिल हैं। अंततः यह बहस एक बड़े प्रश्न की ओर ले जाती है–भारत की विदेश नीति का आधार क्या होना चाहिए?

दैनिक सवेरा टाइम्स

DELHIN/2013/53563

पोस्टल रजि. नं. PB-JL-058/25-27

0181-2370100, 4625005, 4626006, 4629009

0181-2224455

जीवन

हर परिस्थिति में मुस्कराने की कला

कांतिलाल मांडोत

ीवन एक अनवरत प्रवाह है, जहां ख और दुःख धूप-छांव की तरह साथ लते हैं। जिस प्रकार दिन के बाद रात ा आना अनिवार्य है, उसी प्रकार ीवन में हर्ष और विषाद का चक्र भी ाभाविक है। सामान्यतः मनुष्य केवल ख की कामना करता है और दुःख से यभीत रहता है, किंतु सत्य यह है कि :ख भी जीवन का एक अपरिहार्य अंग । यदि हम केवल अनुकूलता की पेक्षा करें और प्रतिकूलता आने पर चलित हो जाएं, तो हम जीवन के स्तविक सौंदर्य और उसके संपूर्ण वरूप को कभी समझ नहीं पाएंगे। कृति ने मनुष्य को विवेक और बुद्धि ा अनुपम वरदान दिया है। यही वह क्ति है जो उसे कठिनतम परिस्थितियों भी समाधान खोजने के योग्य बनाती । यदि दृष्टिकोण सकारात्मक हो, तो :ख को भी एक मूल्यवान सीख में और ड़ा को प्रेरणा में बदला जा सकता है। जस प्रकार वैज्ञानिक प्रक्रिया से पशिष्ट से ऊर्जा उत्पन्न की जाती है, क उसी प्रकार एक समझदार व्यक्ति पने जीवन के कष्टों को आत्म-कास की दिशा दे सकता है। यह र्णतः हमारे नजरिए पर निर्भर करता है। क्सर हम दुःख का कारण बाहरी रिस्थितियों को मानते हैं, जबकि सका मूल हमारे भीतर ही छिपा होता । जब मनुष्य अपने कर्तव्यों से विमुख कर प्रमाद और असावधानी में जीने गता है, तब वह स्वयं अपने कष्टों का जन करता है। 'प्रमाद' का अर्थ है थार्थ को न समझना और विवेक का याग कर देना। जब हम अपने भीतर के स दोष को पहचान कर उससे ऊपर ठने का संकल्प लेते हैं, तब जीवन को क नई और सार्थक दिशा मिलती है। ह समझना अनिवार्य है कि विलाप रना या निराशा में डूबना किसी मस्या का अंत नहीं है। दुःख के समय र मान लेना स्वयं को और अधिक र्बल बनाना है। इसके विपरीत, धैर्य ौर साहस से किया गया सामना उसी :ख को शक्ति के स्रोत में बदल देता । जो व्यक्ति कांटों के बीच भी स्कराना सीख लेता है, वही वास्तव में ीवन के अमृत का रसास्वादन कर ता है।

संपादकीय

डिजिटल क्रांति या 'डिजिटल जहर'

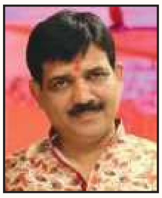

आज भारत तेजी से डिजिटलाइजेशन की ओर अग्रसर है, जिसमें स्मार्टफोन और विशेषकर 'एंड्रॉयड' का सबसे बड़ा योगदान है। वैश्विक स्तर पर जहां एंड्रॉयड उपयोगकर्ताओं की संख्या लगभग 3.9 अरब है, वहीं भारत में वर्ष 2025-26 के अनुमानों के अनुसार स्मार्टफोन उपयोगकर्ताओं की संख्या 75 करोड़ तक पहुंच चुकी है। इनमें से लगभग 90% स्मार्टफोन एंड्रॉयड आधारित हैं, जिसका अर्थ है कि देश में करीब 67 करोड़ लोग इस प्लेटफॉर्म का उपयोग कर रहे हैं। सस्ते डेटा प्लान, किफायती हैंडसेट और डिजिटल सेवाओं के विस्तार ने हर हाथ में मोबाइल पहुंचा दिया है। हालांकि, इस डिजिटल क्रांति का एक स्याह पक्ष 'डिजिटल जहर' के रूप में सामने आ रहा है। मोबाइल और स्क्रीन की बढ़ती लत बच्चों और किशोरों के लिए एक गंभीर सामाजिक और स्वास्थ्य संकट बनती जा रही है। आंकड़े इस समस्या की भयावहता को स्पष्ट करते हैं। यह चिंताजनक है कि भारत में 0-5 वर्ष के बच्चे प्रतिदिन औसतन 2.2 घंटे स्क्रीन पर बिता रहे हैं, जो विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्धारित सुरक्षित सीमा से दोगुना है। 2 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए स्क्रीन टाइम 'शून्य' होना चाहिए, लेकिन वे भी औसतन 1.2 घंटे मोबाइल या टीवी देख रहे हैं। स्कूल जाने वाले बच्चों की स्थिति और भी विकट है। एक अध्ययन के अनुसार, 62.5% बच्चों में 'स्क्रीन एडिक्शन' (लत) के लक्षण पाए गए हैं। रिपोर्ट बताती है कि 74% छात्र रोजाना 2 घंटे से अधिक और लगभग 21% बच्चे 4 घंटे से अधिक समय गेमिंग या सोशल मीडिया पर बिताते हैं। लगभग 70% माता-पिता स्वीकार करते हैं कि उनके बच्चे वीडियो और ओटीटी प्लेटफॉर्म्स के आदी हो चुके हैं। आर्थिक सर्वेक्षण 2025-26 ने भी इस डिजिटल लत को युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य, पढ़ाई और एकाग्रता के लिए एक बड़ा खतरा बताया है। इस लत के दुष्परिणाम अब स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे हैं। एकाग्रता में कमी, चिड़चिड़ापन, अनिद्रा, सामाजिक दूरी और अवसाद जैसी समस्याएं तेजी से बढ़ रही हैं। हाल ही में राज्यसभा में भी इस मुद्दे को गंभीरता से उठाया गया, जहां विशेषज्ञों ने इसे 'डिजिटल गुलामी' करार दिया। बच्चे मोबाइल के बिना स्वयं को असहज और अधूरा महसूस करते हैं। सोशल मीडिया पर 'लाइक्स' और 'कमेंट्स' की होड़ ने बच्चों में हीन भावना और मानसिक तनाव को जन्म दिया है। यह भी एक कड़वा सच है कि कई डिजिटल प्लेटफॉर्म्स का डिजाइन ही इस प्रकार बनाया जाता है कि उपयोगकर्ता उनका आदी हो जाए। इस चुनौती से निपटने के लिए अब राष्ट्रीय स्तर पर ठोस नीति बनाने की आवश्यकता है। राज्यसभा में स्कूलों के पाठ्यक्रम में 'डिजिटल हेल्थ' को शामिल करने और गेमिंग कंपनियों पर सख्त नियम लागू करने की मांग उठी है। केवल प्रतिबंध लगाना समाधान नहीं है; अभिभावकों को बच्चों के साथ संवाद बढ़ाना होगा, उन्हें खेल-कूद और रचनात्मक गतिविधियों के लिए प्रेरित करना होगा।

-राकेश जैन गोदिका

परिदृश्य

सफल जीवन की परंपरा को प्रोत्साहित करें

एडवोकेट किशन सनमुखदास भावनानी

वैश्विक स्तर पर इस सृष्टि में मानव जीवन का उदय कब हुआ? शायद इस प्रश्न का सटीक उत्तर देना कठिन हो, किंतु पीढ़ियों से चला आ रहा यह प्रवाह हमें बहुत कुछ सिखाता है। हम अपने पूर्वजों से सुनते आए हैं कि अब 'कलियुग' का समय है। इससे पूर्व 'सतयुग' था, जहाँ सभी जीव सुखी और संपन्न थे, पुण्य का बोलबाला था और पाप का नामोनिशान न था। इसके विपरीत, आज कलियुग में पाप का बवंडर दिखाई देता है। यह गाथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही है। आज की वैश्विक स्थिति का सूक्ष्म अवलोकन करें, तो वास्तव में पुण्य की अपेक्षा पापों का विस्तार अधिक दिखाई देता है। शायद इसीलिए इस युग को कलियुग कहा गया है। यदि हमारे व्यक्तिगत जीवन में आँख में एक छोटा सा तिनका या पैर में कांटा चुभ जाए, तो हमें कितनी असहनीय पीड़ा होती है। कभी-कभी यह कष्ट इतना बढ़ जाता है कि ऑपरेशन तक की नौबत आ जाती है। इसी प्रकार, दबी हुई कपास (रुई) में लगी आग की विभीषिका की कल्पना करें, जो भीतर ही भीतर सब नष्ट कर देती है। पाप का परिणाम भी ऐसा ही होता है। पाप करने वालों को उनकी दुर्दशा और कष्टों का फल इसी जन्म में भोगना पड़ता है। मैंने स्वयं अपने जीवन में और समाज में ऐसे कई उदाहरण देखे हैं जहाँ गलत कर्मों का फल व्यक्ति को जीते-जी मिला है। इसलिए यह आवश्यक है कि हम छल-कपट से दूर रहकर एक पारदर्शी और सफल जीवन जीने की रीति को प्रोत्साहित करें। पाप की व्याख्या अत्यंत विस्तृत है। सामान्यतः पाप सर्वप्रथम मनुष्य की दृष्टि (नजरिया) से प्रवेश करता है, तत्पश्चात उसके विचारों को मलिन करता है और अंततः चरित्र को दूषित कर देता है। वे सभी कृत्य जो हमें या दूसरों को पीड़ा देते हैं, वे पाप की श्रेणी में आते हैं। जैसे: हिंसा, आत्महत्या के विचार, हत्या, चोर लूट, बलात्कार, नशा, बेजुबान जानवरों पर क्रूरता, माता-पिता क कष्ट देना, अबला और बालकों पर अत्याचार, और अपने लाभ लिए देश या परिवार से गद्दारी करना। गुरुओं का अपमान और झूठ फरेब पर विश्वास करना भी पाप ही है। हमें ऐसे कर्म करने चाहि कि हमारे न रहने पर भी लोग हमारी अच्छाई को याद करें और ह दूसरों के लिए प्रेरणा बन सकें।

किस्मत और कर्म का विज्ञान

मनुष्य योनी 'कर्म योनी' है। यहाँ हम अपनी किस्मत स्वयं लिखते हैं। जैसे एक किसान जो बीज बोता है, उसे वही फसल प्राप्त होती है; यदि कोई बबूल बोकर आम की इच्छा रखे, तो यह संभव नहीं। अज्ञानता में हम जो भी बोते जा रहे हैं, वही भविष्य में हमें प्राप्त होगा। इसे ही लोग 'किस्मत' कहते हैं, जबकि यह हमारे ही कर्मों का लेखा-जोखा है। यह सृष्टि का एक 'ऑटोमैटिक सिस्टम' है जो अटल है। तंत्र-मंत्र या केवल दिखावे की पूजा-पाठ से पाप नहीं कटते, क्योंकि हम सृष्टि के रचयिता से अधिक बुद्धिमान नहीं हो सकते।

कर्तव्य ही धर्म है

पाप और धर्म की व्याख्या हमारे कर्तव्यों से जुड़ी है। पिता का पुत्री के प्रति, संतान का माता-पिता के प्रति, शिक्षक का शिष्यों के प्रति और एक नागरिक का देश के प्रति जो दायित्व है, वही उसका 'धर्म' है। इन कर्तव्यों के विरुद्ध किए गए समस्त कृत्य 'अधर्म' या 'पाप' कहलाते हैं।

प्रेरणा

आपके दिल में न तो पीड़ा हो, न ही आपको किसी का डर हो। - **थॉमस हार्डी**

संपादकीय

युद्ध से बाहर निकलने का रास्ता तलाश रहे हैं ट्रम्प

ट्रम्प सरकार के लोग संकेत देने लगे हैं कि अमेरिका युद्ध को रोकना चाहता है। मध्यावधि चुनाव के पूर्व उनकी लगातार गिरती साख और बढ़ते जनांदोलन ने ट्रम्प को शायद मजबूर किया है कि वह बगैर किसी शर्त के युद्ध रोकने के लिए एकतरफा फैसला लें। यह भी खबर है कि ट्रम्प अब होर्मुज मार्ग खोलने की जिम्मेदारी उन देशों पर डालेंगे, जो इससे दो तरह से प्रभावित हैं- पहला, वे देश जो युद्ध के विनाशकारी प्रभाव और उत्पादन न होने से आर्थिक क्षति झेल रहे हैं यानी खाड़ी के देश, और दूसरा, वे देश जिनकी अर्थव्यवस्था क्रूड की महंगाई से आहत है जैसे समूचा यूरोप, भारत और चीन। हालांकि एक ओर अमेरिका ईरान पर भारी बमबारी कर रहा है लेकिन यह प्रयास जंग में जीत बताने के लिए है। व्हाइट हाउस प्रवक्ता ने पिछले 24 घंटों में संकेत दिए हैं कि प्रशासन ईरान के सैन्य व हथियार-निर्माण प्रतिष्ठानों को अभी तक हुई क्षति को अपनी जीत मानता है। यानी ट्रम्प अमेरिकी जनता को बताएंगे कि उद्देश्य पूरा हो गया। युद्ध रोकने के बाद ट्रम्प की इमेज को शांति के मसीहा के रूप में एक बार फिर देश और विदेश में चमकाने की कोशिश हो सकती है। ट्रम्प शासन मानने लगा है कि युद्ध में ईरान को झुकाकर होर्मुज मार्ग खुलवाना महीनों का काम है, जिसमें अमेरिकी जंगी बेड़ों के अलावा जल-थल सेना को भारी क्षति हो सकती है। कुछ माह बाद होने वाले मिडटर्म चुनावों में जीत अगर डेमोक्रेटिक पार्टी की हुई तो संसदीय समितियां राष्ट्रपति पर उनके कई आदेशों को लेकर जांच और मुकदमा भी करा सकती हैं।

जीने की राह

पं. विजयशंकर मेहता
humarehanuman@gmail.com

सद्गुणों को विजयी बनाना है तो मौन और ध्यान को साधें

इन दिनों दुनिया में जो देश युद्ध कर रहे हैं, उनको लेकर विश्लेषकों का कहना है जिस देश का जासूसी नेटवर्क तगड़ा होगा और जो एआई का इस्तेमाल भरपूर करेगा, वो जीतेगा। दुनिया का जो दृश्य है, उससे हम क्या सीखें? खासतौर पर आध्यात्मिक रूप से, क्योंकि एक युद्ध रोज हम भी अपने भीतर लड़ते हैं- दुर्गुणों और सद्गुणों का। इस महाभारत से कोई मनुष्य नहीं बचा। हृदय का स्थान सद्गुणों के पास है, रजोगुण शरीर पर हैं और मन दुर्गुणों को सुरक्षा देता है। तीन गुणों से बनी हुई यह काया एक आंतरिक युद्ध से जूझती है। मौन और ध्यान- ये जासूसी का नेटवर्क है। जिसने यह दोनों साध लिए, उसके दुर्गुण, उसके सद्गुणों को पराजित नहीं कर पाएंगे। पांडव यदि सद्गुण हैं, कौरव दुर्गुण हैं तो पांडवों की जीत के पीछे श्रीकृष्ण का जबरदस्त जासूसी नेटवर्क था। पांडवों के सबसे छोटे भाई सहदेव ज्योतिषी थे और उन्होंने दुर्योधन को विजय के लिए जो पूजा बताई थी, उसकी भी जानकारी श्रीकृष्ण के पास आ गई और उसका तोड़ निकाला। तो हमें अपने सद्गुणों को विजयी बनाना है। मौन और ध्यान, दो बातों को साधना चाहिए।

• Facebook:Pt. Vijayshankar Mehta

शब्दों का जादू

अश्वगाथा

दो मरियल घोड़े \ शहर की चमक-दमक के बीच
एक बारात की बग्घी का वजन ढो रहे हैं
बग्घी पर बैठा दूल्हा \ इस समय सिकंदर-सा प्रतीत होता है
परंतु यदि यह कमजोर घोड़े \ गश खाकर सड़क पर गिर पड़ें
तब दूल्हे का क्या होगा? \ क्या होता सिकंदर का
यदि उसका घोड़ा भी युद्ध के दौरान किसी अहम क्षण में ठहर जाता?

नेपोलियन के घोड़े का बिदकना \ इतिहास में मशहूर है
शायद इसलिए कि \ जिद्दी और गुस्सैल घोड़ों को साधता नेपोलियन
और अधिक महान दिखे \ जबकि ऐसा भी हो सकता था
कि नेपोलियन को दुलत्ती पड़ती और उसी के साथ \ घोड़ों के सामने
मनुष्य की असहायता की एक छोटी-सी कथा भी बची रह जाती।

इतने घोड़े मारे गए हैं युद्धों में \ कि कभी-कभी लगता है
यदि घोड़ों को ज्ञात होता \ कि उन पर आरूढ़ बादशाहों की प्रत्येक
विजय के साथ \ वे अपनी आगामी पीढ़ियों पर राजसी ठाठ की छवि
एक भार की तरह छोड़ रहे हैं\ तो शायद किसी निर्णायक क्षण पर वे
बिदक जाते अपने बादशाहों को रणभूमि की धूल में पटक कर।
तब शायद \ घोड़ों के बेकाबू होने का इतिहास\ और सुदृढ़ होता।

अगर ऐसा होता \ तो बग्घी का भार ढोते ये घोड़े
मानवीय उपयोगिता की निर्दयी दुनिया से दूर किसी मैदान में
हरी-हरी घास चर रहे होते।
-शिवम तोमर, ग्वालियर (मूल कविता के सम्पादित अंश)

भास्कर कविता उत्सव की शीर्ष 100 कविताओं में चयनित

पाठकों के पत्र

सोलर कुकर को प्रोत्साहन दें

एलपीजी किल्लत के बीच सोलर कुकर का उपयोग समस्या को काफी हद तक हल कर सकता है। इससे समय और पैसों की बचत होती है। जहां निर्बाध प्रकाश पहुंचता है, वहां ये बहुत उपयोगी हैं। सरकार और कंपनियों को सोलर कुकर पर सब्सिडी देकर लोगों को प्रोत्साहित करना चाहिए। **-ममता माथुर,** जयपुर, राजस्थान

अस्पतालों में सुरक्षा प्रबंध हों

रायपुर के प्राइवेट हॉस्पिटल में बिना सेफ्टी गियर के सेप्टिक टैंक की सफाई करते समय जहरीली गैस से तीन सफाई कर्मचारी मारे गए। कटक के एक सरकारी अस्पताल में आग लगने से 12 मरीजों की मौत हो गई। अस्पतालों में सुरक्षा प्रबंध समुचित हों, ताकि लापरवाही से जान न जाएं। **-एसके खोसला,** चंडीगढ़

आप अपने पत्र editpage@dbcorp.in पर भेज सकते हैं

क्या आप जानते हैं

बर्फ में नहीं जमता है यह मेंढक

आर्कटिक सर्कल में एक ऐसा अनूठा मेंढक है, जो बर्फ में जमने के बाद भी जीवित रहता है। 'वुड फ्रॉग' कहलाने वाला यह मेंढक कुछ ऐसे विशेष एंटीफ्रीज रसायन उत्सर्जित करता है, जिनके कारण -16 डिग्री पर 70% तक जमने के बावजूद इसकी कोशिकाएं सक्रिय रहती हैं।
250 दिनों तक बर्फ में जमा रह सकता है यह मेंढक।

बामुलाहिजा • हमें दुश्मनों में डर पैदा करने की ताकत बनानी होगी, यही क्षेत्र में शांति की गारंटी है...

पाकिस्तान को नहीं पता आगे क्या करना है

भू-राजनीति

शेखर गुप्ता
एडिटर-इन-चीफ, 'द प्रिन्ट'
X @ShekharGupta

लोग इस बात पर शोर मचा रहे हैं कि पाकिस्तान अमेरिका और ईरान के बीच बातचीत में शामिल है और हम नहीं हैं। ऐसा क्यों? क्या हम महत्वहीन हो गए हैं? क्या हमने अपनी नैतिक ताकत खो दी है? विपक्ष सरकार पर हमला करेगा, क्योंकि उसका काम ही यही है। सरकार भी इस सवाल का जवाब खोजने की कोशिश कर रही है। लेकिन इसका जवाब यह नहीं हो सकता कि हम पाकिस्तान जैसे 'दलाल' देश नहीं हैं।

सरकार कड़वी सच्चाई क्यों नहीं बोल सकती, इसे समझना आसान है। सच यही है कि भारत इस मामले में पूरी तरह तटस्थ नहीं है। वह अरब-इजराइल-अमेरिका के साथ है। ईरान के साथ भी भारत के अहम हित जुड़े हैं, इसलिए वह उसके खिलाफ नहीं जा सकता, लेकिन खुलकर उसके साथ भी नहीं खड़ा हो सकता। मामला जटिल है। जब यह युद्ध खत्म होगा, तब भी भारत के हित जीतने वाले और हारने वाले दोनों से जुड़े रहेंगे।

इसी वजह से चीन ने कभी बीच-बचाव की कोशिश नहीं की और न ही संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में इस मुद्दे को उठाया। वो समझदार है। वो देख रहा है कि उसके प्रतिद्वंद्वी एक-दूसरे को कैसे कमजोर कर रहे हैं। चीन पुरानी भावनाओं में नहीं फंसा है। वह अपनी ताकत बढ़ा रहा है। जिसको 'ग्लोबल साउथ' कहा जाता है, उसमें उसने 'बीआरआई' (बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव) के जरिए लगभग 32 देशों को अपने साथ जोड़ लिया है, उन्हें ऊंचे ब्याज पर कर्ज देकर।

चीन शांत है। अगर भारत को मध्यस्थता के लिए बुलाया भी जाए या वह सिर्फ संदेश पहुंचाने का काम करे, जैसा अभी पाकिस्तान कर रहा है, तब भी चीन ईर्ष्या में कोई कदम नहीं उठाएगा। उसे यह सब मजाक जैसा लगेगा, क्योंकि वह जानता है कि भू-राजनीति भावनाओं का खेल नहीं है। यह धैर्य और लंबे समय की योजना का मामला है। ताकत बनाने में समय लगता है और पूरा ध्यान उसी पर देना पड़ता है।

पाकिस्तान ने एक मामले में शुरुआती बढ़त ले ली थी- रणनीतिक स्पष्टता में। हालांकि, इतिहास बताता है कि यह अकसर उसके लिए नुकसानदेह साबित हुआ। उसने अपनी पूरी रणनीतिक ताकत एक ही लक्ष्य पर लगा दी- भारत को कमजोर करना, अगर खत्म नहीं कर सके तो। कम्युनिज्म से लड़ने के लिए वह 1950 के दशक में ही अमेरिका के नेतृत्व वाले सैन्य गठबंधनों में शामिल हो गया। नेहरू ने इसे गंभीरता से लिया और अय्यूब खान से कहा कि कम्युनिस्ट चीन से दोनों को खतरा है। उन्हें उम्मीद थी पाकिस्तान भारत का साझेदार बनेगा, लेकिन जल्द ही पाकिस्तान चीन के करीब चला गया और सीमा तय करने में लग गया, जिसमें ज्यादातर सीमा कश्मीर के उस हिस्से से गुजरती थी, जो उसके कब्जे में है।

इसका नतीजा यह हुआ कि 1960 के दशक तक पाकिस्तान अमेरिका और चीन के साथ जुड़ गया। उसका मकसद सैन्य ताकत से कश्मीर हासिल करना था। इसी सोच से उसने 1965 की लड़ाई लड़ी, लेकिन हार गया। मुल्क में असंतोष बढ़ गया। आखिरकार अय्यूब को सत्ता छोड़नी पड़ी और जुल्फिकार अली भुट्टो चुनाव हार गए। अवामी लीग ने बहुमत हासिल किया और पाकिस्तान के पहले असली चुनाव के नतीजों को मानने से इनकार कर दिया गया। फिर पाकिस्तान ने अमेरिका और चीन के साथ अपने रिश्तों का इस्तेमाल किया और जुलाई 1971 में हेनरी किसिंजर को गुप्त रूप से चीन ले गया। इससे दुनिया भर में हलचल मच गई, भारत भी चौंक गया। उस समय पाकिस्तानी नेता याह्या खान और भुट्टो खुद को बहुत सफल मान रहे थे, लेकिन पांच महीने के भीतर ही मुल्क का आधा हिस्सा अलग हो गया।

असल में उस समय पूर्वी पाकिस्तान आबादी में पश्चिम पाकिस्तान से आगे था। इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है। कराची में भारत के महावाणिज्यदूत मणिलाल त्रिपाठी ने एक पाकिस्तानी अखबार के संपादक को चिट्ठी लिखकर मजाक में कहा कि क्योंकि पाकिस्तान की जनता ने ही पाकिस्तान के विचार को खारिज कर दिया है, इसलिए बचे हुए मुल्क का नाम बदल देना चाहिए : हम सिंधुदेश नाम सुझाते हैं। यह उस लेख के जवाब में था जिसमें कहा गया था कि भारत को खुद को इंडिया नहीं कहना चाहिए क्योंकि बंटवारे के साथ उसका अस्तित्व खत्म हो गया। उसे सिर्फ भारत कहना चाहिए।

अमेरिका से दुश्मनी के बजाय दोस्ती ज्यादा घातक होती है...

अमेरिका और ईरान के बीच पाक का बातचीत में शामिल होना रणनीतिक नहीं अल्पकालिक घटना है और उन्हें नहीं पता कि आगे क्या करना है। बिना राष्ट्रीय ताकत के कोई सामरिक कदम रणनीतिक नहीं बन सकता। वैसे भी अमेरिका से दोस्ती घातक है।

पाकिस्तान ने 1979 में फिर ऐसा ही कदम उठाया और अफगानिस्तान में सोवियत संघ का विरोध करने के लिए अमेरिका के साथ जुड़ गया। इससे उसे फायदा भी मिला, लेकिन लाखों शरणार्थी आए और जिहादी संस्कृति फैल गई। पाकिस्तान या 'एफ-पाक' में पनपे जिहादियों ने अमेरिका में ट्विन टावर्स पर हमला किया। 2001 में पाकिस्तान फिर अमेरिका का 'मजबूत साझेदार' बना और अगले दशक तक 22 अरब डॉलर की सैन्य और आर्थिक मदद पाता रहा, जब तक कि ओसामा को एबटाबाद में नहीं ढूंढ लिया गया और मदद रुक नहीं गई।

इसके बाद उसके पास क्या बचा? जिहादी संस्कृति, जो उसकी अपनी सत्ता के लिए खतरा बनी; गहरे और हिंसक धार्मिक विभाजन; आत्मघाती हमलों का चलन और अफगानिस्तान से तालिबान के खिलाफ लड़ाई।

1954 के बाद के इन 70 वर्षों में जिन चार बड़े कदमों ने दुनिया का ध्यान खींचा, उन्होंने पाकिस्तान को और कमजोर और गरीब बना दिया; वहां की एकता कमजोर हुई; उसके सबसे लोकप्रिय नेता को जेल में डाल दिया गया और एक कठपुतली जैसा फील्ड मार्शल सत्ता संभाल रहा है। अगर वे सोचते हैं कि वे फिर कोई करिश्मा कर रहे हैं, तो उन्हें मुबारक। पाकिस्तान किसिंजर की उस मशहूर बात को सच साबित करता दिखता है कि अमेरिका से दुश्मनी खतरनाक हो सकती है, लेकिन उससे दोस्ती घातक है।

भारत को अपनी सीमाओं को मजबूत करने और दुश्मनों में डर पैदा करने की ताकत बनानी होगी। यही इस क्षेत्र में शांति की गारंटी हो सकती है। यह पाकिस्तान के लिए भी बेहतर होगा क्योंकि डर पैदा करने की पारंपरिक ताकत ही उसे खुद को नुकसान पहुंचाने से रोक सकती है। इस पूरे तर्क का सार यह है कि अमेरिका और ईरान के बीच बातचीत में शामिल होने का पाकिस्तान का 'करिश्मा' रणनीतिक नहीं अल्पकालिक है और उन्हें यह नहीं पता कि आगे क्या करना है। बिना राष्ट्रीय ताकत के कोई सामरिक कदम रणनीतिक नहीं बन सकता। **(ये लेखक के अपने विचार हैं)**

इस लेख को मोबाइल पर सुनने के लिए QR कोड को स्कैन करें।

हम राजस्थानी • कानून मजबूत, अमल अभी कम

प्रदेश में खाद्य सुरक्षा कमजोर, अब सख्ती व जागरूकता जरूरी

फूड सेफ्टी

प्रदीप मेहता
सेक्रेटरी जनरल कट्स इंटरनेशनल
psm@cuts.org

भारत में खाद्य सुरक्षा के लिए एक व्यापक कानूनी ढांचा मौजूद है। खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम के तहत भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) देश में खाद्य पदार्थों के लिए वैज्ञानिक मानक तय करता है और उनके निर्माण, भंडारण, वितरण व बिक्री को नियंत्रित करता है। इन मानकों का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि बाजार में उपलब्ध भोजन सुरक्षित हो और खाद्य व्यवसाय संचालक निर्धारित गुणवत्ता का पालन करें। हालांकि किसी भी व्यवस्था की वास्तविक प्रभावशीलता इस पर निर्भर है कि इन मानकों को जमीन पर कितने प्रभावी ढंग से लागू किया जा रहा है। राजस्थान जैसे बड़े राज्य में यह चुनौती और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। तेजी से बढ़ते शहर, पर्यटन उद्योग का विस्तार और हजारों छोटे-बड़े खाद्य व्यवसाय - इन सबके बीच खाद्य सुरक्षा मानकों का पालन सुनिश्चित करना आसान नहीं है। खाद्य अर्थव्यवस्था में बड़े विनिर्माता और पैकेज्ड खाद्य कंपनियों के साथ-साथ होटल, ढाबे, स्ट्रीट फूड विक्रेता और पारंपरिक मिठाई की दुकानें भी शामिल हैं। यह विविधता जहां राज्य की खाद्य संस्कृति को समृद्ध बनाती है, वहीं प्रभावी निगरानी की आवश्यकता भी बढ़ाती है।

हालिया आंकड़े इस चुनौती की गंभीरता को सामने रखते हैं। वर्ष 2024-25 के दौरान राजस्थान में नियमित निरीक्षण और निगरानी के तहत 18,213 खाद्य नमूने एकत्रित किए गए। इनमें से 863 नमूने असुरक्षित, 3,734 निम्न गुणवत्ता के और 131 नमूने गलत लेबल वाले पाए गए।

दीपावली और होली पर मिठाइयों और दुग्ध उत्पादों की मांग बढ़ने के साथ प्रशासन द्वारा विशेष जांच अभियान चलाए जाते हैं। इन अभियानों में मिलावटी दूध, दूषित मसाले और निम्न गुणवत्ता की मिठाइयां मिलने के मामले सामने आते हैं। ऐसे अभियान जरूरी हैं, लेकिन वे यह भी बताते हैं कि प्रतिस्पर्धी बाजार में असुरक्षित प्रथाओं के लिए अभी भी प्रलोभन मौजूद हैं। हाल के वर्षों में राज्य ने इस दिशा में कार्रवाई तेज की है। राजस्थान ने खाद्य नमूना संग्रहण में उल्लेखनीय वृद्धि की है। वर्ष 2023-24 में 16,600 से अधिक नमूने एकत्रित किए गए, जो राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा निगरानी कार्यक्रम के तहत निर्धारित लक्ष्य का लगभग 284 प्रतिशत है। इसके साथ ही कानूनी कार्रवाई भी बढ़ी है। वर्ष 2025 में अप्रैल से जून के बीच अदालतों ने खाद्य मिलावट से जुड़े मामलों में 489 व्यक्तियों को दोषी ठहराया, जो सख्त कार्रवाई का संकेत है।

फिर भी संरचनात्मक चुनौतियां बनी हुई हैं। राजस्थान में सौ से भी कम खाद्य सुरक्षा अधिकारी हजारों खाद्य व्यवसायों की निगरानी के लिए जिम्मेदार हैं, जिससे नियामक क्षमता पर दबाव पड़ता है। इन चुनौतियों की झलक एफएसएसएआई द्वारा जारी राज्य खाद्य सुरक्षा सूचकांक 2023-24 में भी दिखाई देती है। इसमें राजस्थान का कमजोर प्रदर्शन दर्शाता है कि राज्य की खाद्य सुरक्षा व्यवस्था के कई पहलुओं - विशेषकर संस्थागत क्षमता, उपभोक्ता जागरूकता और नियामक ढांचे को और मजबूत करने की जरूरत है।

राजस्थान में स्ट्रीट फूड विक्रेता और छोटे भोजनालय, लाखों लोगों के लिए सस्ती भोजन व्यवस्था और रोजगार का स्रोत हैं। इसलिए केवल दंडात्मक कार्रवाई के बजाय प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण पर भी ध्यान देना जरूरी है।

स्वच्छता, सुरक्षित भंडारण और खाद्य संभालने की बेहतर पद्धतियों को बढ़ावा देने से खाद्य सुरक्षा जोखिमों को काफी हद तक कम किया जा सकता है। उपभोक्ता जागरूकता भी खाद्य सुरक्षा व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्तंभ है। एफएसएसएआई द्वारा विकसित डिजिटल प्लेटफॉर्म जैसे 'फूड सेफ्टी कनेक्ट' उपभोक्ताओं को खाद्य सुरक्षा से संबंधित शिकायतें दर्ज कराने का अवसर देते हैं। याद रखें, सुरक्षित भोजन कोई विशेषाधिकार नहीं बल्कि हर उपभोक्ता का मौलिक अधिकार है। सरकार, व्यवसाय, नागरिक समाज और स्वयं उपभोक्ताओं - सभी को मिलकर इस अधिकार की रक्षा करनी होगी।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मुद्दा • इनके नेटवर्क पर चीनी कम्पनियों का वर्चस्व

सीसीटीवी से हो रही जासूसी राष्ट्रीय सुरक्षा को बड़ा खतरा

निगरानी

विराग गुप्ता
सुप्रीम कोर्ट के वकील
viraggupta@hotmail.com

दिल्ली और दूसरे शहरों में सीसीटीवी से पाकिस्तान के लिए हो रही जासूसी का खुलासा चिंताजनक है। लेकिन इस जासूसी का मास्टरमाइंड चीन है। चीनी सीसीटीवी कैमरों की बिक्री पर सरकार ने आज से प्रतिबंध जरूर लागू किया है, लेकिन पुराने कैमरों को हटाने की कोई योजना नहीं है। चीनी टेलीकम्युनिकेशन उपकरणों पर प्रतिबंध के बावजूद सीसीटीवी नेटवर्क पर चीनी कम्पनियों का ही वर्चस्व है। इससे चीन को भारत के सामरिक क्षेत्रों की जासूसी का अवसर मिल जाता है। इजराइल ने ईरान के सीसीटीवी और मोबाइल नेटवर्क की जासूसी करके ही सुप्रीम लीडर पर हमला किया था। मणिबेन पटेल पर प्रकाशित पुस्तक के अनुसार सरदार पटेल ने भी प्रधानमंत्री नेहरू को चेतावनी देते हुए लिखा था कि भारत की सुरक्षा के लिए पाकिस्तान से ज्यादा चीन खतरनाक है। चीनी सीसीटीवी कैमरों के खतरों से जुड़े 4 पहलुओं को समझना जरूरी है :

1. स्मार्ट सिटी, सरकारी दफ्तर, मेडिकल स्टोर, सड़क, हाईवे, रेलवे स्टेशन, ट्रेन, बस, स्कूल, एयर पोर्ट, बंदरगाह, अस्पताल और रक्षा क्षेत्रों में सरकारी आदेश की वजह से करोड़ों चीनी सीसीटीवी लगे हैं। सरकारी प्रतिबंध के बाद अब आयातित चीनी उपकरणों के माध्यम से भारत में कैमरे असेम्बल हो रहे हैं। ईरान संकट के बाद साइबर सुरक्षा के लिए बनाई गई केंद्रीय एजेंसी सीईआरटी और रक्षा मंत्रालय ने टेलीकॉम नेटवर्क से साइबर सुरक्षा के खतरे के लिए कई एडवाइजरी जारी की हैं। लेकिन गांवों, कस्बों और महानगरों में फैले सीसीटीवी नेटवर्क का नियंत्रण चीनी खुफिया एजेंसियों के पास बना हुआ है।

2. दिल्ली में 2018 के बाद दो चरणों में पीडब्ल्यूडी के माध्यम से 652 करोड़ रुपये से लगभग 2.64 लाख कैमरे लगे हैं। पुलिस और एनडीएमसी के अलावा पार्षद, विधायक और सांसद निधि से सोसाइटी और बाजारों में कैमरों का जाल बढ़ रहा है। इनमें से 32 हजार से ज्यादा कैमरे काम नहीं कर रहे। मजेदार बात यह है कि इन लाखों कैमरों के सुरक्षा ऑडिट के लिए पीडब्ल्यूडी बाहरी सलाहकार कम्पनी की नियुक्ति कर रही है, जो लगभग 6.5 साल में अपनी रिपोर्ट देगी। इस दौरान चीनी कैमरों का नेटवर्क बदस्तूर जारी रहेगा।

3. विदेशों से आयात, टेलीकॉम उपकरणों की सुरक्षा और सीसीटीवी डेटा से जुड़े विषयों पर कानून बनाने और उन्हें लागू करने की जिम्मेदारी केंद्र सरकार की है। आईटी मंत्रालय के तहत एसटीक्यूसी एजेंसी कैमरों से जुड़े सोर्स कोड, फर्म वेयर और हार्डवेयर की क्वालिटी और सुरक्षा की जांच करती है। लेकिन इसमें चार तरह से गफलत होने से संकट मंडरा रहा है। पहला- चीनी कैमरों और उपकरणों के प्रतिबंध को लागू करने के लिए कार्गो और बंदरगाहों में आयात के समय जांच का सही बंदोबस्त नहीं है। दूसरा- ताइवान, हांगकांग और दुबई के माध्यम से आयात हो रहे चीनी उपकरणों और कैमरों पर रोक नहीं है। तीसरा- बाजार में बड़े पैमाने पर गैर-मान्यता प्राप्त कैमरे बिक रहे हैं। चौथा- जनता, स्थानीय निकाय और पुलिस को कैमरों के बारे में बीआईएस और एसटीक्यूसी द्वारा जारी नियमों और मानकों की जानकारी नहीं है।

अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया और यूरोप में चीनी सीसीटीवी कैमरों पर प्रतिबंध है। लेकिन भारत में जनता की सुरक्षा और अपराधों की रोकथाम के नाम पर लगे सीसीटीवी नेटवर्क का नियंत्रण चीन में होने से राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरा बढ़ा है।

4. सुप्रीम कोर्ट के अनेक आदेशों के बावजूद पुलिस थानों और जांच एजेंसियों में सीसीटीवी नहीं लगे। घरों और बाजार में सुरक्षा के नाम पर लगाए कैमरों के डेटा की सुरक्षा के लिए डीपीडीपी कानून भी लागू नहीं हो रहा है। सुरक्षा कारणों से अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया और यूरोप ने चीनी कैमरों के आयात पर प्रतिबंध लगा रखा है। लेकिन भारत में 2017 में जारी मेक इन इंडिया के आदेश, रजिस्ट्रेशन के बारे में 2021 के आदेश, बीआईएस के आईएस 16910 के मानक और कैमरों की खरीद के लिए मार्च 2024 में जारी सरकारी आदेशों का पालन नहीं होने से राष्ट्रीय सुरक्षा को चहुंमुखी खतरा बढ़ता जा रहा है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

डिफ्रेंट एंगल • ट्रांसजेंडरों ने बाधाओं को पार कर मुख्यधारा में स्थान बनाया है, उनके हकों को न छीना जाए...

ट्रांसजेंडरों के अधिकारों पर हम फिर से पीछे लौटकर जा रहे हैं

सिविल राइट्स

अरुंधती काटजू
सीनियर एडवोकेट

एक दशक से अधिक समय से न्यायालय, केंद्र और राज्य मिलकर ट्रांसजेंडरों के अधिकारों का विस्तार करते आ रहे थे। लेकिन अब केंद्र कानून में संशोधन कर हमें फिर से पीछे ले जाना चाहता है। 2014 में, नेशनल लीगल सर्विसेस अथॉरिटी बनाम भारत सरकार मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना था कि ट्रांसजेंडरों को गरिमा के साथ जीने का अधिकार है। अदालत ने सरकार को थर्ड-जेंडर को मान्यता देने के निर्देश देते हुए कहा था कि संविधान स्व-निर्धारित लैंगिक पहचान की रक्षा करता है।

2019 में, केंद्र ने ट्रांसजेंडर पर्सन्स (प्रोटेक्शन ऑफ राइट्स) एक्ट पारित किया। इसने 'ट्रांसजेंडर व्यक्ति' को व्यापक रूप से परिभाषित किया, जिसमें हिजड़े किन्नर, अरावनी, जोगता जैसी पारंपरिक पहचानें तथा नॉन-बाइनरी पर्सन्स, जेंडरक्वीर्स, ट्रांसजेंडर पुरुष व महिलाओं जैसी गैर-पारंपरिक पहचानें शामिल थीं। धारा 4(2) ने स्व-निर्धारित लैंगिक पहचान की रक्षा की। इसकी तुक भी थी। हम अपनी लैंगिक पहचान स्वयं ही 'घोषित' करते हैं- अपने दस्तावेजों पर और अपने पहनावे व व्यवहार के जरिये। हम कौन हैं- यह बताने के लिए हमें सरकार की मंजूरी की आवश्यकता नहीं होती।

2019 के अधिनियम ने सर्जरी को अनिवार्य नहीं बनाया था। यह उचित था। जेंडर परिवर्तन के लिए होने वाली सर्जरी महंगी है और भारत में आसानी से उपलब्ध नहीं है। ट्रांसजेंडर व्यक्ति बिना किसी मेडिकल हस्तक्षेप के 'ट्रांसजेंडर पहचान प्रमाण पत्र' प्राप्त कर सकते थे और सर्जरी के बाद 'जेंडर परिवर्तन' प्रमाण पत्र हासिल कर सकते थे। इस अधिनियम ने वे सभी संरक्षण प्रदान किए, जिन्हें हम अपने किसी भी ऐसे प्रियजन के लिए चाहेंगे, जो ट्रांसजेंडर हों। सरकार को उन्हें समाज में शामिल करना चाहिए और चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करनी चाहिए; नियोक्ता और शैक्षणिक संस्थान उनके साथ भेदभाव नहीं कर सकते। इसने नेशनल काउंसिल फॉर ट्रांसजेंडर पर्सन्स की स्थापना की। अधिनियम ने ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को कॉलेजों, कार्यालयों और सरकार में अपने अधिकारों पर दावे के लिए फ्रैमवर्क भी दिया।

जब अमेरिका में ट्रांसजेंडर अधिकारों पर प्रहार किए जा रहे थे, तब भारत इस मुद्दे पर लीडर के रूप में उभरा। पिछले दशक में खासा परिवर्तन देखा गया। यूपी में ट्रांसजेंडर बच्चे और जीवनसाथी कृषि भूमि के उत्तराधिकार के पात्र बने। कर्नाटक ने सरकारी नौकरियों में ट्रांसजेंडर्स को आरक्षण दिया। वे सिविल सेवक, पुलिस अधिकारी, कॉलेज प्राचार्य बने। मेरे अपने वकालात के पेशे में लॉ स्कूलों में ट्रांसजेंडर छात्र हैं और न्यायालयों तथा लॉ फर्मों में ट्रांस वकील प्रैक्टिस कर रहे हैं।

इन अधिकारों का विस्तार करने के बजाय केंद्र अब इनसे पीछे हट रहा है। संशोधन अधिनियम- जो राष्ट्रीय परिषद के सदस्यों से परामर्श किए बिना पारित किया गया- कहता है कि केवल हिजड़े, किन्नर, जोगता और अरावनी ही 'ट्रांसजेंडर्स' हैं। संशोधन अधिनियम धारा 4(2) को भी हटा देता है, जो ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के स्व-पहचान के अधिकार की रक्षा करती थी। ये बदलाव रेट्रोस्पेक्टिव हैं, इसलिए जिन लोगों ने 2019 के अधिनियम के तहत ट्रांसजेंडर प्रमाण पत्र प्राप्त किए थे और बिना सर्जरी के अपने आधार और अन्य दस्तावेज बदले थे, वे अब अपने कानूनी दर्जे को लेकर अनिश्चित हैं। यदि कोई व्यक्ति सर्जरी कराता है, तो चिकित्सा संस्थान को जिला मजिस्ट्रेट को इसकी सूचना देनी होगी- जिसे हममें से अधिकांश लोग निजता का गंभीर उल्लंघन मानेंगे। ट्रांसजेंडरों ने भारी बाधाओं को पार कर मुख्यधारा में स्थान बनाया है। केंद्र को उनकी सराहना करनी चाहिए। इसके बजाय, वह उनके अधिकार छीन रहा है।

(ये लेखिका के अपने विचार हैं)

मूर्ख दिवस: तनाव भरे दौर में मुस्कान का पर्व

– योगेश कुमार गोयल

मूर्ख दिवस (1 अप्रैल) पर विशेष

विश्वभर में 1 अप्रैल को मनाया जाने वाला मूर्ख दिवस साधारण दिन नहीं बल्कि हंसी, उल्लास और हल्के-फुल्के मजाक का ऐसा अवसर है, जो लोगों को रोजमर्रा की तनावपूर्ण जिंदगी से कुछ पल के लिए राहत प्रदान करता है। इस दिन छोटे-बड़े, बच्चे-बुजुर्ग, सभी एक-दूसरे के साथ मजाक करते हैं और बिना किसी दुर्भावना के हंसी-ठिठोली के माध्यम से माहौल को खुशनुमा बना देते हैं। इस दिवस की सबसे खास बात यह है कि इसमें किए जाने वाले मजाक आमतौर पर हानिरहित होते हैं। लोग ऐसी कल्पनात्मक या मनगढ़ंत बातें प्रस्तुत करते हैं, जिन पर सामने वाला आसानी से विश्वास कर ले और बाद में जब सच्चाई सामने आए तो दोनों पक्ष हंसी में डूब जाएं। कई बार तो बड़े-बड़े बुद्धिमान और चतुर लोग भी इस दिन मजाक का शिकार बन जाते हैं, जिससे वातावरण और भी मनोरंजक हो उठता है।

यह परंपरा केवल आम लोगों तक सीमित नहीं रही है बल्कि बड़े मीडिया संस्थान, प्रतिष्ठित कंपनियां और नामी ब्रांड भी इस दिन अनोखे और रचनात्मक ह्यप्रैंक्सह्न के जरिए लोगों का मनोरंजन करते हैं। इतिहास में कई रोचक उदाहरण मिलते हैं। 1957 में बीबीसी ने ह्यस्पेगेटी ट्रीह्न की खबर प्रसारित की, जिसमें बताया गया कि स्विट्जरलैंड में पेड़ों पर स्पेगेटी उगती है। हजारों लोगों ने इस पर विश्वास कर लिया। इसी तरह 1996 में बर्गर किंग ने ह्यलेफ्ट-हैंड व्हॉपरह्न बर्गर की घोषणा कर लोगों को चौंका दिया। डिजिटल युग में यह परंपरा और व्यापक हो गई है। सोशल मीडिया और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स के जरिए ऐसे मजाक कुछ ही मिनटों में लाखों लोगों तक पहुंच जाते हैं। हालांकि, कभी-कभी लोग सच्ची खबरों को भी ह्यअप्रैल फूलह्न समझकर नजरअंदाज कर देते हैं और बाद में पछताते हैं।

मूर्ख दिवस की उत्पत्ति को लेकर विभिन्न मत हैं। एक प्रचलित धारणा के अनुसार, प्राचीन समय में कई देशों में नया वर्ष 1 अप्रैल से शुरू होता था। जब कैलेंडर प्रणाली में बदलाव हुआ और नए साल की शुरूआत 1 जनवरी से होने लगी, तब भी कुछ लोग पुरानी परंपरा का पालन करते रहे। ऐसे लोगों का मजाक उड़ाने के लिए 1 अप्रैल को ह्यमूर्ख दिवसह्न के रूप में मनाया जाने लगा। धीरे-धीरे यह परंपरा मनोरंजन का माध्यम बन गई। भारतीय संस्कृति में भले यह परंपरा पश्चिम से आई हो लेकिन इसके मूल में निहित भावना (हंसी, आनंद और आपसी मेलजोल) भारतीय जीवन मूल्यों से भी मेल खाती है। आज की भागदौड़ और तनावपूर्ण जीवनशैली में जहां लोगों के पास हंसने का समय कम हो गया है, वहां यह दिन एक सुखद अवसर प्रदान करता है।

हालांकि, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि मजाक की सीमा शालीनता और संवेदनशीलता के भीतर ही होनी चाहिए। किसी की भावनाओं को ठेस पहुंचाने, अपमान करने या नुकसान पहुंचाने वाला मजाक इस दिवस की भावना के विपरीत है। मूर्ख दिवस का उद्देश्य किसी को नीचा दिखाना नहीं बल्कि सबको साथ लेकर हंसना और खुशियां बांटना है।

वास्तव में, शुद्ध हास्य न केवल मानसिक तनाव को कम करता है बल्कि आपसी संबंधों को भी मजबूत बनाता है। यह मन में सकारात्मकता और भाईचारे की भावना का संचार करता है। ऐसे में मूर्ख दिवस आज के समय में और भी अधिक प्रासंगिक हो जाता है। अंततः कहा जा सकता है कि मूर्ख दिवस केवल मजाक का दिन नहीं बल्कि जीवन में खुशियों के छोटे-छोटे पल तलाशने और उन्हें साझा करने का उत्सव है। यदि इसे शालीनता और सद्भाव के साथ मनाया जाए तो यह दिन सचमुच हंसी के अनमोल पलों से जीवन को सराबोर कर सकता है।

आज का राशिफल

ग्रहों की चाल को देखते हुए कुछ राशियों के जीवन में खुशियों का आगमन होगा

मेष : स्वास्थ्य में उतार-चढ़ाव रह सकता है, इसलिए लापरवाही न करें. व्यापार में छोटे-मोटे लाभ के अवसर मिलेंगे, लेकिन बड़े मुनाफे के लालच में गलत फैसला नुकसान करा सकता है. कोई पुराना मित्र आपसे मिल सकता है, जिससे भावनात्मक सहारा मिलेगा. धन से जुड़ी किसी भी डील को बहुत सोच-समझकर फाइनल करें. विदेश जाकर पढ़ाई करने वाले छात्रों को अच्छी संस्था से जुड़ने का मौका मिल सकता है.

वृषभ : लेन-देन के मामलों में सतर्क रहें, वरना गलती भारी पड़ सकती है. घर में पूजा-पाठ या कोई शुभ कार्य हो सकता है. माता की सेहत को लेकर थोड़ी चिंता रह सकती है. दिया हुआ कर्ज वापस मिल सकता है, जिससे आर्थिक राहत मिलेगी. संपत्ति में वृद्धि के योग हैं और परिवार में विवाह या मांगलिक कार्य की बात पक्की हो सकती है.

मिथुन : मन में भ्रम बना रहेगा और कामों में बार-बार रुकावट आ सकती है. संतान के करियर को लेकर कोई अहम फैसला लेना पड़ सकता है. व्यापारियों को साझेदारी से बचना चाहिए, वरना धोखे की संभावना है. प्रेम संबंधों में किसी गलत बात पर सहमति न दें, नहीं तो पछताना पड़ सकता है.

कर्क : दिन लाभदायक रहेगा, लेकिन गलत तरीकों से पैसा कमाने से बचें. आपकी समझदारी कार्यक्षेत्र में फायदा दिलाएगी. कुछ लोग दोस्त बनकर नुकसान पहुंचाने की कोशिश कर सकते हैं, सावधान रहें. दूर के किसी रिश्तेदार से निराशाजनक खबर मिल सकती है. प्रॉपर्टी डील से बड़ा फायदा होने के योग हैं.

सिंह : मौज-मस्ती और उत्साह भरा दिन रहेगा. भाग्य आपका साथ देगा, लेकिन कामों में लापरवाही न करें. जीवनसाथी की सलाह से बिजनेस में फायदा होगा. भाई-बहनों से मतभेद खत्म हो सकते हैं. किसी वरिष्ठ व्यक्ति को मनाने की कोशिश करनी पड़ेगी.

कन्या : दिन मिला-जुला रहेगा. जल्दबाजी में लिया गया फैसला नुकसान दे सकता है. परिवार के साथ अच्छा समय बीतेगा. विवाह योग्य लोगों के लिए अच्छे प्रस्ताव आ सकते हैं. ससुराल पक्ष से कोई खुशखबरी मिलेगी और बिजनेस की लंबी योजनाएं आगे बढ़ेंगी.

तुला : मान-सम्मान और प्रभाव बढ़ेगा. संपत्ति से जुड़ा कोई मामला सुलझ सकता है. नए काम की शुरूआत के लिए दिन अनुकूल है. ऑफिस में किसी महिला सहकर्मी से सावधान रहें और बॉस की गलत बात पर सहमति न दें.

वृश्चिक : सामान्य लेकिन कामकाजी दिन रहेगा. सामाजिक क्षेत्र में मान-सम्मान बढ़ेगा. परिवार की समस्याएं थोड़ी परेशान कर सकती हैं. जीवनसाथी के साथ बाहर समय बिताएंगे. संतान की सेहत पर ध्यान देना जरूरी होगा.

धनु : व्यवसाय के लिए दिन बहुत अच्छा है. आय के नए अवसर मिल सकते हैं. पिता के साथ धार्मिक यात्रा का योग है. वाहन सावधानी से चलाएं. प्रॉपर्टी में निवेश लाभदायक रहेगा.

मकर : काम और परिवार दोनों में संतुलन बना रहेगा. बड़ों का सहयोग मिलेगा. जीवनसाथी से कोई सरप्राइज मिल सकता है. राजनीति या सरकारी काम से फायदा होगा. धन से जुड़ी समस्या दूर होगी.

मीन : बुद्धि से फैसले लेना जरूरी होगा. विरोधी सक्रिय रहेंगे और मानसिक तनाव रह सकता है. भगवान की भक्ति से मन को शांति मिलेगी. संतान अच्छा प्रदर्शन करेगी और बाहर पढ़ाई का मौका मिल सकता है.

वैश्विक भारत : उद्योगों की रफ्तार, अर्थव्यवस्था का विस्तार

– डॉ. मयंक चतुर्वेदी

> महंगाई पर नियंत्रण और वित्तीय अनुशासन भी भारत की आर्थिक स्थिरता को मजबूत बनाते हैं। सरकार द्वारा संतुलित राजकोषीय नीति और भारतीय रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीतियों ने अर्थव्यवस्था को स्थिर बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हालांकि वैश्विक स्तर पर कई चुनौतियां मौजूद हैं, जैसे भू-राजनीतिक तनाव, आपूर्ति श्रृंखला में व्यवधान और ऊर्जा कीमतों में उतार-चढ़ाव फिर भी यहां अच्छी बात यह है कि भारत ने अपनी नीतिगत दृढ़ता और आंतरिक मांग के बल पर इनका प्रभाव सीमित रखा है। अंततः, फरवरी 2026 के भारत का औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आईआईपी) आंकड़े सिर्फ एक महीने की उपलब्धि न होकर यह उस निरंतर प्रयास और नीति-निर्माण का परिणाम हैं

भारत आज वैश्विक अर्थव्यवस्था में ऐसी शक्ति के रूप में उभर रहा है, जिसकी गति, स्थिरता और विविधता ये तीनों ही उसे विशेष बनाती हैं। इस संबंध में सामने आए आर्थिक आंकड़े इस बात की पुष्टि कर रहे हैं कि देश विकास के नए आयाम स्थापित कर रहा है। विशेष रूप से औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आईआईपी) में दर्ज प्रगति इस व्यापक आर्थिक मजबूती का स्पष्ट संकेत है।

फरवरी 2026 में भारत की औद्योगिक वृद्धि दर बढ़कर 5.2 प्रतिशत हो गई, जो जनवरी के 4.8 प्रतिशत से अधिक है। कहना होगा कि यह वृद्धि आर्थिक गतिविधियों में निरंतरता और विस्तार का प्रमाण है। इस वृद्धि के पीछे सबसे बड़ा योगदान मैन्युफैक्चरिंग सेक्टर का रहा, जिसने छह प्रतिशत की प्रभावशाली वृद्धि दर्ज की। चूंकि औद्योगिक उत्पादन सूचकांक में इस क्षेत्र की हिस्सेदारी लगभग 75 प्रतिशत है, इसलिए इसका मजबूत प्रदर्शन पूरी औद्योगिक अर्थव्यवस्था को गति देता है। वस्तुतः मैन्युफैक्चरिंग क्षेत्र की यह प्रगति आज कई मायनों में महत्वपूर्ण है। यह उत्पादन क्षमता में वृद्धि को तो दशार्ती ही है, साथ में रोजगार सृजन की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारत जैसे युवा देश में, जहां हर वर्ष लाखों छात्र इंजीनियरिंग और तकनीकी शिक्षा प्राप्त कर कार्यक्षेत्र में प्रवेश करते हैं, वहां यह क्षेत्र गुणवत्तापूर्ण रोजगार उपलब्ध कराने का प्रमुख माध्यम बनता जा रहा है। फरवरी 2026 में मैन्युफैक्चरिंग के 23 उद्योग समूहों में से 14 में सकारात्मक वृद्धि दर्ज होना इस क्षेत्र की व्यापक मजबूती को दर्शाता है।

विशेष रूप से बुनियादी धातु, मोटर वाहन और मशीनरी एवं उपकरण जैसे क्षेत्रों में दोहरे अंकों की वृद्धि यह संकेत देती है कि भारत का औद्योगिक ढांचा अब अधिक परिपक्व और प्रतिस्पर्धी हो रहा है। बुनियादी धातु क्षेत्र में वृद्धि से निर्माण और अवसंरचना को बल मिलता है, जबकि ऑटोमोबाइल और मशीनरी क्षेत्र कृषि, परिवहन और उद्योगों की उत्पादकता को बढ़ाते हैं। खनन और बिजली क्षेत्र भी इस विकास यात्रा में पीछे नहीं हैं। फरवरी में खनन क्षेत्र में 3.1 प्रतिशत और बिजली उत्पादन में 2.3 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। ये दोनों क्षेत्र औद्योगिक गतिविधियों की रीढ़ माने जाते हैं और इनमें वृद्धि का अर्थ है कि उत्पादन के लिए आवश्यक कच्चा माल और ऊर्जा की उपलब्धता सुनिश्चित हो रही है।

इसके अलावा उपयोग-आधारित वर्गीकरण के आंकड़े भारत की अर्थव्यवस्था के भीतर हो रहे संरचनात्मक परिवर्तन को उजागर करते हैं। पूंजीगत वस्तुओं के उत्पादन में 12.5 प्रतिशत की वृद्धि यह दशार्ती है कि उद्योगों में निवेश बढ़ रहा है। मशीनों और उपकरणों का अधिक उत्पादन इस बात का संकेत है कि उद्योग विस्तार की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं, जिससे भविष्य में उत्पादन, आय और रोजगार में और वृद्धि होगी। इसी प्रकार उपभोक्ता वस्तुओं, विशेषकर इलेक्ट्रॉनिक सामान, रेफ्रिजरेटर और टीवी के उत्पादन में 7.3 प्रतिशत की वृद्धि यह स्पष्ट करती है कि देश में मांग का स्तर बढ़ रहा है। यह बढ़ती आय, मध्यम वर्ग के विस्तार और उपभोग आधारित अर्थव्यवस्था की मजबूती का संकेत है। जब उपभोक्ता खर्च बढ़ता है, तब यह पूरे आर्थिक चक्र को गति देता है, उत्पादन बढ़ता है, रोजगार सृजित होते हैं और निवेश को प्रोत्साहन मिलता है।

यहां उल्लेखित है कि भारत की आर्थिक मजबूती का एक अन्य प्रमुख आधार सरकार द्वारा अवसंरचना क्षेत्र में किया जा रहा भारी निवेश है। राजमार्गों, बंदरगाहों और रेलवे परियोजनाओं में लगातार बढ़ते निवेश के कारण अवसंरचना और निर्माण सामग्री क्षेत्र में फरवरी में 11.5 प्रतिशत की उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई। निश्चित ही यह उस दीर्घकालिक दृष्टि का परिणाम है, जिसके तहत सरकार देश को एक मजबूत लॉजिस्टिक्स और कनेक्टिविटी नेटवर्क प्रदान कर रही है। इन परियोजनाओं का प्रभाव बहुआयामी है। एक ओर ये बड़े पैमाने पर रोजगार सृजित करती हैं, वहीं दूसरी ओर उद्योगों के लिए लागत कम करती हैं और प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ाती हैं। बेहतर सड़क और रेल नेटवर्क से माल परिवहन तेज और सस्ता होता है, जिससे निर्यात को भी बढ़ावा मिलता है। यदि व्यापक आर्थिक परिप्रेक्ष्य में देखें, तो भारत की अर्थव्यवस्था कई अन्य सकारात्मक संकेत भी दे रही है। देश की जीडीपी वृद्धि दर विश्व की प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में सबसे अधिक बनी हुई है। अंतरराष्ट्रीय संस्थान जैसे अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) और विश्व बैंक भी भारत को आने वाले वर्षों में सबसे तेजी से बढ़ने वाली बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में देख रहे हैं। भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआई) का प्रवाह लगातार बना हुआ है, जो वैश्विक निवेशकों के भरोसे को दशार्ता है। मेक इन इंडिया, आत्मनिर्भर भारत और पीएलआई (उत्पादन-आधारित प्रोत्साहन) जैसी योजनाओं ने मैन्युफैक्चरिंग और निर्यात को नई दिशा दी है। इलेक्ट्रॉनिक्स, मोबाइल निर्माण, रक्षा उत्पादन और फार्मास्यूटिकल्स जैसे क्षेत्रों में भारत तेजी से आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ रहा है। साथ में देखने में आ रहा है कि डिजिटल अर्थव्यवस्था भी भारत की ताकत का एक प्रमुख स्तंभ बनकर उभरी है। यूनिफाइड पेमेंट्स इंटरफेस (यूपीआई) जैसे प्लेटफॉर्म ने लेन-देन को सरल और पारदर्शी बनाया है। इससे न सिर्फ वित्तीय समावेशन बढ़ा है, बल्कि छोटे और मध्यम उद्यमों को भी नई ऊर्जा मिली है।

महंगाई पर नियंत्रण और वित्तीय अनुशासन भी भारत की आर्थिक स्थिरता को मजबूत बनाते हैं। सरकार द्वारा संतुलित राजकोषीय नीति और भारतीय रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीतियों ने अर्थव्यवस्था को स्थिर बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हालांकि वैश्विक स्तर पर कई चुनौतियां मौजूद हैं, जैसे भू-राजनीतिक तनाव, आपूर्ति श्रृंखला में व्यवधान और ऊर्जा कीमतों में उतार-चढ़ाव फिर भी यहां अच्छी बात यह है कि भारत ने अपनी नीतिगत दृढ़ता और आंतरिक मांग के बल पर इनका प्रभाव सीमित रखा है। अंततः, फरवरी 2026 के भारत का औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आईआईपी) आंकड़े सिर्फ एक महीने की उपलब्धि न होकर यह उस निरंतर प्रयास और नीति-निर्माण का परिणाम हैं, जोकि भारत को एक मजबूत, आत्मनिर्भर और वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था बनाने की दिशा में आगे बढ़ा रहे हैं। मैन्युफैक्चरिंग की गति, पूंजीगत निवेश में वृद्धि, उपभोक्ता मांग का विस्तार और अवसंरचना पर फोकस, कहना होगा कि ये सभी मिलकर आज एक ऐसे आर्थिक परिदृश्य का निर्माण कर रहे हैं, जोकि आने वाले वर्षों में भारत को विश्व की अग्रणी आर्थिक शक्तियों में स्थापित कर सकता है।

महिला सुरक्षा का सही रास्ता क्या है?

– डॉ. प्रियंका सौरभ

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति को लेकर बहस कोई नई बात नहीं है। समय-समय पर यह प्रश्न उठता रहा है कि क्या महिलाओं को दी गई आधुनिक स्वतंत्रता वास्तव में उनके लिए लाभकारी है या उन्हें शोषण के अधिक जोखिम में डाल रही है। हाल की घटनाओं और उन पर समाज की प्रतिक्रिया को देखते हुए यह बहस फिर तेज हो गई है। कुछ लोग मानते हैं कि महिलाओं की बढ़ती स्वतंत्रता ही उनके शोषण का कारण बन रही है, जबकि अन्य इसे एक संकीर्ण और गलत दृष्टिकोण मानते हैं। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि इस विषय को भावनाओं के बजाय तर्क, तथ्यों और संतुलित दृष्टि से समझा जाए।

सबसे पहले यह समझना जरूरी है कि शोषण का मूल कारण क्या है। क्या वास्तव में किसी महिला का पढ़ा-लिखा होना, आत्मनिर्भर होना या स्वतंत्र रूप से जीवन जीना उसके शोषण का कारण बन सकता है? इसका सीधा और स्पष्ट उत्तर है- नहीं। शोषण का कारण हमेशा उस व्यक्ति की मानसिकता होती है जो अपराध करता है। जब कोई व्यक्ति किसी महिला के साथ गलत व्यवहार करता है तो उसकी जिम्मेदारी केवल और केवल उसी व्यक्ति की होती है। इसे महिला स्वतंत्रता या उसके व्यवहार से जोड़ना न केवल गलत है बल्कि यह पीड़िता को ही दोषी ठहराने जैसा है।

समाज में एक धारणा यह भी है कि यदि महिलाएं पिता, भाई या पति की निगरानी में रहें तो वे अधिक सुरक्षित रहती हैं। यह विचार पारंपरिक सोच से उत्पन्न हुआ है, जहां सुरक्षा और नियंत्रण को एक ही माना गया। लेकिन वास्तविकता इससे कहीं अधिक जटिल है। अनेक ऐसे मामले सामने आए हैं, जहां महिलाओं के साथ शोषण उनके परिचितों या परिवार के भीतर ही हुआ है। इसका अर्थ यह है कि केवल निगरानी या नियंत्रण सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकता। सुरक्षा का संबंध व्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित करने से नहीं बल्कि समाज में न्याय, कानून और जागरूकता की मजबूती से है।

यह भी कहा जाता है कि महिलाएं स्वभाव से भावुक होती हैं और इसी कारण वे आसानी से किसी के प्रभाव में आ जाती हैं। हालांकि यह आंशिक रूप से सही हो सकता है कि महिलाएं भावनात्मक रूप से अधिक अभिव्यक्त होती हैं लेकिन इसे उनकी कमजोरी मान लेना बड़ी भूल है। भावनाएं मानव स्वभाव का हिस्सा हैं, चाहे वह पुरुष हो या महिला। असल समस्या तब उत्पन्न होती है जब कोई व्यक्ति इन भावनाओं का गलत फायदा उठाता है। इसलिए समाधान यह नहीं है कि महिलाओं की भावनाओं को दबा दिया जाए या उनकी स्वतंत्रता सीमित कर दी जाए बल्कि यह है कि समाज में ऐसे लोगों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई की जाए जो दूसरों का शोषण करते हैं।

आधुनिक समाज में महिलाओं को शिक्षा, रोजगार और अपने निर्णय लेने का अधिकार मिला है। यह एक सकारात्मक परिवर्तन है, जिसने उन्हें आत्मनिर्भर और सशक्त बनाया है लेकिन इसके साथ कुछ चुनौतियां भी आई हैं। स्वतंत्रता का सही उपयोग करना हर व्यक्ति की जिम्मेदारी है। यह केवल महिलाओं पर ही नहीं, बल्कि पुरुषों पर भी लागू होता है। यदि कोई व्यक्ति गलत निर्णय लेता है, तो उसका परिणाम उसे भुगतना पड़ सकता है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि स्वतंत्रता ही गलत है। स्वतंत्रता का दुरुपयोग और स्वतंत्रता स्वयं- दोनों में अंतर समझना आवश्यक है।

अक्सर यह तर्क दिया जाता है कि पहले के समय में महिलाएं अधिक सुरक्षित थीं क्योंकि वे घर की चारदीवारी में रहती थीं। लेकिन यह धारणा भी पूरी तरह सही नहीं है। उस समय भी महिलाओं के साथ अन्याय और शोषण होता था लेकिन वे आवाज नहीं उठा पाती थीं। आज के समय में कम-से-कम महिलाएं अपने अधिकारों के लिए खड़ी हो सकती हैं, अपनी बात कह सकती हैं और न्याय की मांग कर सकती हैं। यह बदलाव समाज के लिए एक सकारात्मक संकेत है।

रेप और अन्य अपराधों के बढ़ते आंकड़े निश्चित रूप से चिंता का विषय हैं। लेकिन इनका कारण महिलाओं की स्वतंत्रता नहीं बल्कि अपराधियों की मानसिकता, कानून का कमजोर क्रियान्वयन और समाज में व्याप्त गलत सोच है। यदि किसी समस्या का समाधान खोजना है तो उसके वास्तविक कारणों को समझना होगा। महिलाओं की स्वतंत्रता को सीमित करना समस्या का समाधान नहीं है बल्कि यह एक तरह से समस्या से भागने जैसा है। इसके विपरीत, हमें ऐसे समाज की कल्पना करनी चाहिए जहां महिलाएं सुरक्षित भी हों और स्वतंत्र भी। इसके लिए कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाने की आवश्यकता है। सबसे पहले, शिक्षा प्रणाली में लैंगिक समानता और सम्मान के मूल्यों को शामिल किया जाना चाहिए। बच्चों को बचपन से ही यह सिखाया जाना चाहिए कि हर व्यक्ति का सम्मान करना जरूरी है। दूसरा, कानून व्यवस्था को मजबूत करना होगा ताकि अपराधियों को जल्द और सख्त सजा मिल सके। तीसरा, महिलाओं को आत्मरक्षा और आत्मविश्वास के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, ताकि वे किसी भी स्थिति का सामना कर सकें। इसके अलावा, मीडिया और समाज को भी अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी। महिलाओं को केवल एक वस्तु के रूप में प्रस्तुत करना या उनके चरित्र पर सवाल उठाना बंद करना होगा। समाज को यह समझना होगा कि महिला की गरिमा उसके कपड़ों, उसके व्यवहार या उसके निर्णयों से नहीं, बल्कि उसके अस्तित्व से जुड़ी होती है।

माओवादी मुक्ति से शांति एवं संतुलन की नई संभावनाएं

भारत जैसे विशाल,विविधतापूर्ण और लोकतांत्रिक राष्ट्र के सामने आंतरिक सुरक्षा की चुनौतियां हमेशा से बहुआयामी रही हैं। इन चुनौतियों में नक्सलवाद या माओवादी हिंसा एक ऐसी समस्या रही,जिसने दशकों तक देश की आंतरिक शांति,विकास और सुशासन को गंभीर रूप से प्रभावित किया। विशेषकर छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा, बिहार और आंध्र प्रदेश के आदिवासी बहुल क्षेत्रों में माओवादी गतिविधियों ने न केवल विकास को अवरुद्ध किया, बल्कि हजारों निर्दोष नागरिकों और सुरक्षाकर्मियों की जान भी ली। लेकिन आज जब बस्तर जैसे माओवादी गढ़ से 25 लाख के इनामी सरगना पापा राव का अपने साथियों सहित आत्मसमर्पण करना एक निर्णायक मोड़ के रूप में सामने आया है,तब यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि भारत माओवादी मुक्ति की ऐतिहासिक दहलीज पर खड़ा है। नक्सलवाद की जड़ें सामाजिक-आर्थिक असमानता,उपेक्षा और शोषण में रही हैं, लेकिन समय के साथ यह आंदोलन अपने मूल उद्देश्यों से भटककर एक हिंसक और विध्वंसकारी विचारधारा में बदल गया। माओवादी संगठन न केवल विकास कार्यों में बाधा डालते रहे, बल्कि उन्होंने स्थानीय लोगों को भय और हिंसा के माध्यम से नियंत्रित किया। स्कूल, सड़क, स्वास्थ्य केंद्र जैसे बुनियादी ढांचे को नष्ट करना उनकी रणनीति का हिस्सा बन गया था। इससे यह स्पष्ट हो गया कि यह आंदोलन अब जनहित का नहीं, बल्कि सत्ता और नियंत्रण का माध्यम बन चुका है। भारत सरकार द्वारा 31 मार्च तक देश को नक्सलवाद/माओवाद से मुक्त करने का जो लक्ष्य निर्धारित किया गया था, वह अब लगभग अपनी अंतिम अवस्था में पहुंचता दिखाई दे रहा है। पिछले एक दशक में 10,000 से अधिक माओवादियों के आत्मसमर्पण, सुरक्षा बलों की आक्रामक एवं रणनीतिक कार्रवाई तथा प्रभावित क्षेत्रों में तेज़ी से हुए विकास कार्यों ने माओवादी आंदोलन की जड़ों को कमजोर कर दिया है। छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा और महाराष्ट्र जैसे राज्यों में माओवादी हिंसा की घटनाओं में उल्लेखनीय कमी आई है। विशेष रूप से शीर्ष नेतृत्व के आत्मसमर्पण, जैसे दंडकारण्य स्पेशल जोनल कमेटी के सदस्यों के सरेंडर ने संगठन को नेतृत्वहीन कर दिया, जिससे माओवादी संरचना भीतर से कमजोर पड़ गई। इस सफलता के पीछे सरकार की बहुआयामी रणनीति रही, जिसमें केवल सैन्य-पुलिस कार्रवाई ही नहीं, बल्कि विकास, पुनर्वास और प्रशासनिक पहुंच को भी समान महत्व दिया गया। रेड कॉरिडोर क्षेत्रों में सड़कों और पुलों का निर्माण, मोबाइल टावरों के माध्यम से 4जी नेटवर्क का विस्तार, स्कूलों और आईटीआई संस्थानों की स्थापना ने इन क्षेत्रों को मुख्यधारा से जोड़ा। वहीं 'फोर्टिफाइड पुलिस स्टेशनों' की रणनीति के माध्यम से सुरक्षा बलों ने माओवादियों के गढ़ों में घुसकर निर्णायक कार्रवाई की। आत्मसमर्पण करने वाले माओवादियों के लिए पुनर्वास नीति के तहत आर्थिक सहायता, रोजगार और समाज में पुनर्स्थापना की व्यवस्था ने भी माओवादी कैडर को हथियार छोड़ने के लिए प्रेरित किया। यह समन्वित रणनीति, दूरदर्शिता और दृढ़ राजनीतिक इच्छाशक्ति का परिणाम है कि देश आज नक्सलवाद के अंत के ऐतिहासिक चरण के निकट खड़ा दिखाई दे रहा है। निश्चित ही प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में केंद्र सरकार ने इस समस्या के समाधान के लिए बहुआयामी और दृढ़ रणनीति अपनाई। गृहमंत्री अमित शाह की सूझबूझ और स्पष्ट दृष्टिकोण ने इस अभियान को एक नई दिशा दी। सरकार ने एक ओर जहां सुरक्षा बलों को आधुनिक तकनीक, बेहतर प्रशिक्षण और संसाधनों से सशक्त किया, वहीं दूसरी ओर विकास योजनाओं को भी गति दी। 'सुरक्षा और विकास' के इस दोहरे दृष्टिकोण ने माओवादी प्रभाव वाले क्षेत्रों में सकारात्मक परिवर्तन की नींव रखी। पिछले कुछ वर्षों में सुरक्षाबलों द्वारा चलाए गए सघन अभियानों ने माओवादी नेटवर्क को गहराई से कमजोर किया है। बस्तर, जो कभी माओवादियों का सबसे मजबूत गढ़ माना जाता था, वहां आज आत्मसमर्पण की घटनाएं बढ़ रही हैं। पापा राव जैसे शीर्ष माओवादी नेता का आत्मसमर्पण इस बात का संकेत है कि माओवादी संगठन अब अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं। यह केवल एक व्यक्ति का आत्मसमर्पण नहीं, बल्कि एक विचारधारा के पतन का प्रतीक है। माओवादी मुक्ति का सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि देश के उन क्षेत्रों में शांति और स्थिरता स्थापित होगी, जो लंबे समय से हिंसा की चपेट में रहे हैं। जब बंदूकें खामोश होंगी, तब विकास की आवाज बुलंद होगी। सड़कें बनेंगी, स्कूल खुलेंगे, अस्पतालों में सुविधाएं बढ़ेंगी और सबसे महत्वपूर्ण, लोगों के जीवन में सुरक्षा और विश्वास का संचार होगा। आदिवासी और ग्रामीण समुदाय, जो अब तक भय और असुरक्षा में जी रहे थे, वे अब अपने अधिकारों और अवसरों का पूर्ण लाभ उठा सकेंगे। इसके साथ ही, माओवादी हिंसा के समाप्त होने से भारत की आंतरिक सुरक्षा मजबूत होगी। जब देश के भीतर शांति होगी, तब ही बाहरी खतरों का प्रभावी ढंग से सामना किया जा सकता है। नक्सलवाद जैसी समस्याएं अक्सर विदेशी शक्तियों और असामाजिक तत्वों के लिए भी अवसर प्रदान करती हैं, जिन्हें समाप्त करना राष्ट्रीय हित में अत्यंत आवश्यक है। इस दृष्टि से माओवादी मुक्ति न केवल आंतरिक, बल्कि सामरिक रूप से भी महत्वपूर्ण है। आदर्श शासन व्यवस्था की स्थापना के लिए कानून का शासन, पारदर्शिता, जवाबदेही और विकास की समान पहुंच आवश्यक होती है। माओवादी प्रभाव वाले क्षेत्रों में इन सभी तत्वों का अभाव था। वहां प्रशासन की पहुंच सीमित थी और लोकतांत्रिक संस्थाएं प्रभावी रूप से कार्य नहीं कर पा रही थीं। लेकिन अब जब माओवादी प्रभाव घट रहा है, तब सरकार के लिए यह अवसर है कि वह इन क्षेत्रों में सुशासन की मजबूत नींव रखे। पंचायतों को सशक्त किया जाए, स्थानीय नेतृत्व को प्रोत्साहित किया जाए और जनभागीदारी को बढ़ावा दिया जाए। यह भी आवश्यक है कि माओवादी विचारधारा के प्रभाव को केवल सुरक्षा उपायों से ही नहीं, बल्कि वैचारिक स्तर पर भी चुनौती दी जाए।

कटाक्ष | सुरेश मिश्र

भगदड़ देख बिहार में, माथा ठनका आज
इस्तीफा नीतीश का,और गिर गई गाज
और गिर गई गाज, बड़ी होगी रुसवाई
गर्मी में हो गईं गरम क्यों शीतल माई
कह सुरेश कविराय ठोक मत जइहो किल्ली
गर होवे अपशकुन पलटुवा जा मत दिल्ली

सफल लोकतंत्र की पहली शर्त है नागरिकों का जागरूक होना

> यदि नागरिक इस निगरानी की भूमिका निभाना बंद कर दें, तो शासन तंत्र में जवाबदेही कमजोर पड़ जाती है और भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद तथा सत्ता के दुरुपयोग की संभावना बढ़ जाती है। नागरिक जागरूकता का सीधा संबंध शिक्षा और सूचना तक पहुंच से है।

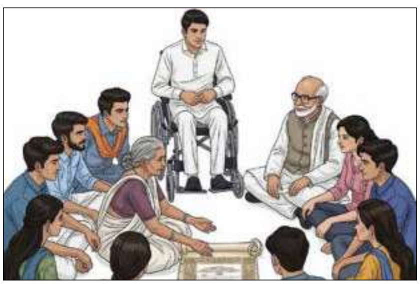

लोकतंत्र केवल एक शासन प्रणाली नहीं बल्कि एक जीवंत सामाजिक अनुबंध है, जिसमें राज्य की शक्ति अंततः नागरिकों की सहमति से संचालित होती है। संविधान, चुनाव, संसद और न्यायपालिका जैसी संस्थाएं लोकतंत्र की संरचनात्मक रीढ़ अवश्य हैं,परंतु इन संस्थाओं की वास्तविक शक्ति और प्रभावशीलता नागरिकों की जागरूकता, सहभागिता और नैतिक प्रतिबद्धता पर निर्भर करती है। यदि नागरिक अपने अधिकारों, कर्तव्यों और शासन की प्रक्रियाओं के प्रति सजग नहीं होते,तो लोकतंत्र केवल कागज़ी ढांचा बनकर रह जाता है। इसीलिए यह व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है कि किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की सफलता की पहली और सबसे महत्वपूर्ण शर्त है जागरूक, शिक्षित और सक्रिय नागरिक समाज। भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में यह तथ्य और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है,जहां लगभग 97.9 करोड़ से अधिक पंजीकृत मतदाता 2024 के आम चुनाव में मतदान के पात्र थे। चुनाव आयोग के आंकड़ों के अनुसार इस चुनाव में लगभग 64.64 करोड़ लोगों ने अपने मताधिकार का प्रयोग किया और कुल मतदान प्रतिशत लगभग 65.79 रहा। यह आंकड़ा एक ओर लोकतांत्रिक भागीदारी के बड़े स्तर को दर्शाता है,तो दूसरी ओर यह भी संकेत देता है कि अभी भी बड़ी संख्या में नागरिक मतदान प्रक्रिया से दूर रहते हैं। जब लगभग एक तिहाई योग्य मतदाता मतदान नहीं करते,तो यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि क्या लोकतंत्र की नीतियां और निर्णय वास्तव में पूरी जनता की इच्छा को प्रतिबिंबित कर पा रहे हैं। जागरूक नागरिक केवल मतदान करने वाला व्यक्ति नहीं होता बल्कि वह लोकतांत्रिक प्रक्रिया के प्रत्येक चरण में सक्रिय भूमिका निभाता है। वह राजनीतिक दलों के घोषणापत्रों को पढ़ता है, उम्मीदवारों की पृष्ठभूमि को समझता है, नीतिगत मुद्दों पर विचार करता है और चुनाव के बाद भी सरकार की कार्यप्रणाली पर निगरानी रखता है। लोकतंत्र में सरकार को पाँच वर्ष के लिए पूर्ण अधिकार नहीं दिया जाता,बल्कि यह अपेक्षा की जाती है कि नागरिक लगातार उसकी नीतियों और निर्णयों का मूल्यांकन करते रहें। यदि नागरिक इस निगरानी की भूमिका निभाना बंद कर दें, तो शासन तंत्र में जवाबदेही कमजोर पड़ जाती है और भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद तथा सत्ता के दुरुपयोग की संभावना बढ़ जाती है। नागरिक जागरूकता का सीधा संबंध शिक्षा और सूचना तक पहुँच से है। जिस समाज में शिक्षा का स्तर ऊँचा होता है और स्वतंत्र तथा विश्वसनीय सूचना माध्यम उपलब्ध होते हैं, वहाँ नागरिक अधिक विवेकपूर्ण निर्णय लेते हैं। लोकतंत्र में मतदाता केवल संख्या नहीं, बल्कि सूचित मतदाता होना चाहिए। यदि नागरिक बिना तथ्यों की जाँच किए केवल भावनाओं, जातीय या धार्मिक पहचान के आधार पर मतदान करते हैं, तो लोकतंत्र की गुणवत्ता प्रभावित होती है। विभिन्न अंतरराष्ट्रीय अध्ययनों में यह पाया गया है कि जहाँ नागरिकों की राजनीतिक साक्षरता अधिक होती है, वहाँ सार्वजनिक नीतियां अधिक स्थिर और दीर्घकालिक हितों को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं। भारत में नागरिक जागरूकता को बढ़ाने के लिए चुनाव आयोग द्वारा समय-समय पर मतदाता जागरूकता कार्यक्रम चलाए जाते हैं। स्कूलों, कॉलेजों और समुदाय स्तर पर मतदाता शिक्षा, जागरूकता अभियान और डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से नागरिकों को मतदान के महत्व के बारे में बताया जाता है। इसके बावजूद, शहरी क्षेत्रों में विशेष रूप से शिक्षित वर्ग के बीच मतदान प्रतिशत अपेक्षाकृत कम देखा गया है। यह विडंबना इस बात की ओर संकेत करती है कि केवल औपचारिक शिक्षा पर्याप्त नहीं है; नागरिकता की चेतना और लोकतांत्रिक जिम्मेदारी का भाव भी उतना ही आवश्यक है। जागरूक नागरिकों की उपस्थिति लोकतंत्र को केवल चुनाव तक सीमित नहीं रहने देती, बल्कि उसे सहभागी शासन में बदल देती है। सूचना का अधिकार अधिनियम, सामाजिक अंकेक्षण, जनहित याचिका और स्थानीय निकायों में भागीदारी जैसे उपकरण तभी प्रभावी हो सकते हैं जब नागरिक उनका प्रयोग करना जानते हों और करने का साहस रखते हों। भारत में सूचना का अधिकार कानून के माध्यम से लाखों लोगों ने सरकारी निर्णयों और खर्चों पर सवाल उठाए हैं, जिससे कई मामलों में भ्रष्टाचार उजागर हुआ और प्रशासनिक सुधार हुए। यह इस बात का स्पष्ट उदाहरण है कि जब नागरिक अपने अधिकारों के प्रति सजग होते हैं, तो लोकतंत्र अधिक पारदर्शी और उत्तरदायी बनता है। लोकतंत्र में मीडिया और नागरिक जागरूकता का भी गहरा संबंध है। स्वतंत्र और जिम्मेदार मीडिया नागरिकों तक सही और संतुलित जानकारी पहुँचाने का कार्य करता है, जबकि जागरूक नागरिक मीडिया के माध्यम से प्राप्त सूचनाओं का आलोचनात्मक विश्लेषण करते हैं। डिजिटल युग में जहाँ सूचना का प्रवाह अत्यंत तेज हो गया है, वहीं भ्रामक सूचनाओं और फर्जी खबरों का प्रसार भी बढ़ा है। यदि नागरिक डिजिटल साक्षर नहीं होंगे और सूचना के स्रोतों की विश्वसनीयता की जाँच नहीं करेंगे, तो वे आसानी से दुष्प्रचार का शिकार बन सकते हैं। इससे लोकतांत्रिक निर्णय प्रक्रिया प्रभावित होती है और समाज में ध्रुवीकरण बढ़ सकता है। एक सफल लोकतंत्र में नागरिक केवल अपने अधिकारों की ही नहीं, बल्कि अपने कर्तव्यों की भी उतनी ही समझ रखते हैं। संविधान नागरिकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, समानता और मतदान का अधिकार देता है, परंतु साथ ही उनसे यह अपेक्षा भी करता है कि वे कानून का पालन करें, करों का भुगतान करें, सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा करें और सामाजिक सद्भाव बनाए रखें। जब नागरिक केवल अधिकारों की माँग करते हैं, परंतु कर्तव्यों की अनदेखी करते हैं, तो लोकतंत्र का संतुलन बिगड़ जाता है। जागरूक नागरिक वह होता है जो इस संतुलन को समझता है और अपने आचरण में उसका पालन करता है। भारत जैसे बहुसांस्कृतिक समाज में नागरिक जागरूकता सामाजिक एकता के लिए भी आवश्यक है। जब नागरिक संविधान के मूल्यों, जैसे धर्मनिरपेक्षता, समानता और बंधुत्व को समझते हैं, तो वे सांप्रदायिक और जातीय विभाजन की राजनीति के प्रति अधिक सतर्क रहते हैं। इससे लोकतंत्र को कमजोर करने वाली शक्तियों को व्यापक जनसमर्थन नहीं मिल पाता। इसके विपरीत, जहाँ नागरिक जागरूकता कम होती है, वहाँ भावनात्मक और विभाजनकारी मुद्दे आसानी से लोगों को प्रभावित कर लेते हैं, जिससे लोकतांत्रिक विमर्श का स्तर गिर जाता है।

■ डॉ. शैलेश शुक्ला

क्यूबा के साथ रूस के खड़ा होने से ठिठके अमेरिकी पांव

क्षेत्रफल के हिसाब से दुनिया का सबसे बड़ा देश रूस ने चीन के प्रत्यक्ष और भारत के परोक्ष मदद से सोवियत संघ युगीन शीत युद्ध कालीन प्रतिष्ठा पुनः हासिल करने की ओर बढ़ चुका है। पिछले दिनों बेनेजुएला और ईरान के विरुद्धसख्त कार्रवाई के बाद मनबढ़ अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंफ ने कहा था कि क्यूबा के साथ मैं जो चाहूंगा करूँगा। इस बात को रूस ने नोट किया और बेनेजुएला और ईरान की गलतियों से सबक लेते हुए खुलकर क्यूबा के बताते पक्ष में उतर आया और अपना तेल टैंकर भेज दिया, जिसके विरुद्ध कार्रवाई करने का अमेरिका साहस इसलिए नहीं दिखा पाया, क्योंकि रूसी मदद से ईरान ने पश्चिम एशिया और अरब-खाड़ी के मध्य पूर्व देशों में अमेरिकी लंगोट खोलने पर उतारू हो चुका है। इससे अमेरिका एक और नया मोर्चा खोलने से परहेज कर गया। इसके वैश्विक मायने अहम हैं। अंतर्राष्ट्रीय कूटनीतिज्ञ बताते हैं कि क्यूबा के साथ रूस के समर्थन ने अमेरिका को प्रत्यक्ष सैन्य हस्तक्षेप से रोका, लेकिन ट्रंप प्रशासन ने आर्थिक प्रतिबंधों और दबाव से क्यूबा को कमजोर करने की रणनीति अपनाई। यही वजह है कि वैश्विक स्तर पर यह घटना 'महाशक्ति प्रतिस्पर्धा' को दर्शाती है, जहां रूस पश्चिमी गोलार्ध में अमेरिकी वर्चस्व को चुनौती दे रहा है। उल्लेखनीय है कि ट्रंप ने क्यूबा को "विफल राज्य" बताते हुए नियंत्रण की धमकी दी, लेकिन रूस ने क्यूबा के साथ सैन्य सहयोग समझौते को मंजूरी देकर एकजुटता दिखाई। वहीं, जब क्यूबा ऊर्जा संकट से जूझ रहा है, जहां अमेरिकी प्रतिबंधों ने वेनेजुएला से तेल रोक दिया, पर रूस ने खुलकर समर्थन का ऐलान किया। और अपना तेल टैंकर भेज दिया। इससे अमेरिका को सैन्य कार्रवाई

से पीछे हटना पड़ा। बताते चलें कि रूस ने अक्टूबर 2025 में क्यूबा के सैन्य बुनियादी ढांचे को मजबूत करने के लिए विशेषज्ञ भेजे, जो शीत युद्ध जैसी स्थिति पैदा करता है। यह कदम अमेरिका के पड़ोस में रूसी प्रभाव को पुनर्जीवित करता है, खासकर यूक्रेन युद्ध के बीच। रूस क्यूबा को "अटूट एकजुटता" का वादा देकर वैश्विक ध्रुवीकरण को तेज कर रहा है। जबकि अमेरिका ने क्यूबा को "आतंकवाद प्रायोजक" सूची में डालकर आर्थिक घुटन बढ़ाई, लेकिन रूसी समर्थन से प्रत्यक्ष आक्रमण टल गया। बहरहाल, ट्रंप का फोकस लैटिन अमेरिका में चीन-रूस को सीमित करना है, जो पश्चिमी गोलार्ध को अमेरिकी प्रभाव क्षेत्र मानता है। इससे कूटनीतिक दबाव बढ़ा लेकिन सैन्य जोखिम से बचा जा सका। इस अंतर्राष्ट्रीय घटना के वैश्विक प्रभाव स्पष्ट हैं। यह घटना बहुध्रुवीय दुनिया को रेखांकित करती है, जहां रूस लैटिन अमेरिका में पकड़ मजबूत कर अमेरिकी एकाधिकार तोड़ रहा। वहीं, ईरान, वेनेजुएला जैसे देशों के लिए रूस एक उदाहरण बन चुका है। उसके आचरण के साथ ही यह स्पष्ट हो चुका है की भले ही अमेरिका के खिलाफ खड़े होने पर आर्थिक तबाही मचती है, लेकिन रूसी समर्थन उन्हें सुरक्षा देता है। भारत जैसे उभरते देशों के लिए भी यह सबक है और क्षेत्रीय संघर्षों में महाशक्तियों के बीच का संतुलन बनाए रखना जरूरी होता है। वहीं, यह तनाव वैश्विक ऊर्जा बाजार और आपूर्ति श्रृंखलाओं को प्रभावित कर सकता है। अतीत पर नजर दौड़ाएं तो क्यूबा संकट के बाद रूस के समर्थन से अमेरिका के पीछे हटने वाली यह घटना शीत युद्ध जैसी नई प्रतिस्पर्धा को पुनर्जीवित करती है, लेकिन बहुध्रुवीय दुनिया में इसका स्वरूप बदला हुआ है। यह ऐतिहासिक समानता की पुनरावृत्ति करता है। मसलन, 1962 के क्यूबा मिसाइल संकट की तरह, रूस का क्यूबा में सैन्य सहयोग अमेरिका के पड़ोस में चुनौती पैदा करता है, जो द्विध्रुवीय तनाव को याद दिलाता है। बता दें कि तब पहले सोवियत मिसाइलों ने परमाणु युद्ध का खतरा बढ़ाया था, और अब ऊर्जा संकट और प्रतिबंधों के बीच रूस की एकजुटता अमेरिका को प्रत्यक्ष कार्रवाई से रोकती है। इससे शीत युद्ध की "प्रॉक्सी" रणनीति फिर उभरती है। वहीं, बदलाव की दिशा भी स्पष्ट है। शीत युद्ध के चरम में अमेरिका-सोवियत सीधे टकराव था, लेकिन अब रूस कमजोर होते हुए भी लैटिन अमेरिका में पैठ बढ़ा रहा है, जो अमेरिकी वर्चस्व को कमजोर करता है। ट्रंप की आक्रामकता के बावजूद आर्थिक दबाव पर जोर देना, सैन्य टकराव से बचने का संकेत है, इसलिए शीत युद्ध की तुलना में अब और अधिक सतर्कता की जरूरत है। अन्यथा वैश्विक प्रभाव तय है। क्योंकि यह नया "शीत युद्ध 2.0" बहुध्रुवीय है, जहां चीन-रूस गठजोड़ अमेरिकी एकाधिकार को अपनी कुशल रणनीतियों से तोड़ रहे हैं। यही वजह है कि जहां परमाणु जोखिम घटा, लेकिन साइबर, ऊर्जा और आर्थिक युद्ध बढ़े। खास बात यह कि भारत जैसे देशों के लिए यह अवसर तटस्थता बनाए रखकर लाभ उठाने का है और भारत यही कर रहा है। यह घटना शीत युद्ध को आधुनिक संदर्भ देती है, जहां प्रभाव क्षेत्रीय संघर्ष अब वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं को हिलाते हैं। आपको पता होना चाहिए कि क्यूबा मिसाइल संकट (1962) ने परमाणु हथियार नीतियों को मौलिक रूप से बदल दिया, क्योंकि दोनों महाशक्तियों को परस्पर सुनिश्चित विनाश (MAD) की वास्तविकता से रूबरू कराया। इसने प्रत्यक्ष टकराव के जोखिम को कम करने के लिए कूटनीति और संचार पर जोर दिया। इससे तात्कालिक बदलाव यह आया कि संकट के बाद मॉस्को-वाशिंगटन हॉटलाइन स्थापित हुई, जो आपातकालीन संवाद सुनिश्चित करती थी। वहीं,1963 में परमाणु परीक्षण प्रतिबंध संधि (PTBT) पर हस्ताक्षर हुए, जिसने वायुमंडलीय परीक्षण रोके। तब अमेरिका ने क्यूबा पर आक्रमण न करने का वादा किया, जबकि सोवियत ने मिसाइलें हटाईं और तुर्की से अमेरिकी मिसाइलें गुप्त रूप से हटीं।

■ कमलेश पांडेय

ऊर्जा व्यवस्था में शुरुआती दबाव के संकेत

पश्चिम एशिया में जारी भू-राजनीतिक तनावों के कारण भारत की ऊर्जा व्यवस्था में शुरुआती दबाव के संकेत दिख रहे हैं, हालांकि सरकार का कहना है कि देश इस स्थिति से निपटने के लिए पूरी तरह तैयार है। क्षेत्र में चल रहे संघर्ष ने वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं, विशेषकर ऊर्जा आपूर्ति मार्गों पर गंभीर असर डाला है, जिनमें हॉर्मुज़ जलडमरूमध्य शामिल है, जहां से भारत के कच्चे तेल, गैस और उर्वरक आयात का बड़ा हिस्सा गुजरता है। 23 मार्च को संसद को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इस स्थिति को "चिंताजनक" बताया और इसके वैश्विक अर्थव्यवस्था व दैनिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव को स्वीकार किया, साथ ही आश्वासन दिया कि भारत ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए सक्रिय कदम उठा रहा है। देशभर के औद्योगिक क्लस्टरों में पहले से ही स्थानीय स्तर पर दबाव देखने को मिल रहा है। सीएनजी और एलपीजी की आपूर्ति में कमी और व्यवधान के चलते व्यवसाय वैकल्पिक ईंधनों, विशेषकर कोयले, की ओर रुख कर रहे हैं। भारत अपनी प्राकृतिक गैस की लगभग 45–50% आवश्यकता एलएनजी आयात के माध्यम से पूरी करता है, जिससे औद्योगिक गैस उपभोक्ता वैश्विक आपूर्ति व्यवधानों और शिपिंग अनिश्चितताओं के प्रति अत्यधिक संवेदनशील हैं। एलएनजी की सीमित उपलब्धता और बढ़ती वैश्विक अनिश्चितताओं ने इस बदलाव को और गति दी है। साथ ही, सरकार ने यह भी रेखांकित किया है कि पिछले एक दशक में आयात स्रोतों के विविधीकरण, रणनीतिक भंडार के विस्तार और आपूर्ति श्रृंखला की बेहतर तैयारी के माध्यम से भारत ने अपनी ऊर्जा लचीलापन को काफी मजबूत किया है। भारत में गैस आधारित बिजली उत्पादन क्षमता अभी भी 25% से कम प्लांट लोड फैक्टर (PLF) पर उपयोग हो रही है, जबकि कोयला और नवीकरणीय ऊर्जा उत्पादन मिश्रण पर हावी हैं। जहां बिजली क्षेत्र कोयले और नवीकरणीय ऊर्जा पर निर्भरता के कारण अपेक्षाकृत सुरक्षित है, वहीं औद्योगिक क्षेत्र गैस की कमी का दबाव महसूस कर रहा है। ऐसे परिदृश्य में कोयला एक महत्वपूर्ण वैकल्पिक ईंधन के रूप में उभरा है, जो भारत की ऊर्जा सुरक्षा की रीढ़ को और मजबूत करता है। भारत में कुल कोयला मांग लगातार बढ़ रही है, जो अब सालाना 1.25 बिलियन टन से अधिक हो चुकी है। यह वृद्धि मुख्य रूप से बिजली क्षेत्र, सीमेंट, स्पंज आयरन और कैप्टिव औद्योगिक उपयोगकर्ताओं द्वारा संचालित है। कोयला बाजार से शुरुआती संकेत मांग और आपूर्ति के बीच संतुलन में कसाव की ओर इशारा कर रहे हैं। फरवरी 2026 में कोल इंडिया के ई-ऑक्शन प्रीमियम अधिसूचित कीमतों से लगभग 35% ऊपर पहुंच गए, जो खरीदारों के बीच आपूर्ति सुरक्षित करने की बढ़ती तात्कालिकता को दर्शाता है। यह वित्तीय वर्ष की शुरुआत में अपेक्षाकृत कमजोर मांग के रुझानों से एक बदलाव है। मांग में यह वृद्धि कई कारकों के कारण है, जिनमें एलएनजी व्यवधानों के कारण गैस का विकल्प तलाशना, मौसमी बिजली मांग में वृद्धि, और आयात में कमी के चलते घरेलू कोयले पर बढ़ती निर्भरता शामिल हैं। हालांकि, कोयले का विकल्प मुख्यतः बिजली क्षेत्र तक ही सीमित है। उर्वरक और रसायन जैसे औद्योगिक क्षेत्रों में संरचनात्मक और तकनीकी बाधाएं इसके व्यापक उपयोग को सीमित करती हैं। वर्तमान स्थिति पर टिप्पणी करते हुए, एमजंक्शन सर्विसेज लिमिटेड के एमडी और सीईओ, श्री विनय वर्मा ने कहा, "हम ईंधन खपत के पैटर्न में एक शुरुआती लेकिन स्पष्ट बदलाव देख रहे हैं। जैसे-जैसे एलएनजी की उपलब्धता घट रही है और कई औद्योगिक क्षेत्रों में सीएनजी/एलपीजी आपूर्ति प्रभावित हो रही है।

आज का कार्टून

साभार

मूर्ख दिवस पर विशेष

तनाव भरे दौर में मुस्कान का पर्व है मूर्ख दिवस

विश्वभर में 1 अप्रैल को मनाया जाने वाला 'मूर्ख दिवस' केवल एक साधारण दिन नहीं बल्कि हंसी, उल्लास और हल्के-फुल्के मजाक का ऐसा अवसर है, जो लोगों को रोजमर्रा की तनावपूर्ण जिंदगी से कुछ पल के लिए राहत प्रदान करता है। इस दिन छोटे-बड़े, बच्चे-बुजुर्ग, सभी एक-दूसरे के साथ मजाक करते हैं और बिना किसी दुर्भावना के हंसी-ठिठोली के माध्यम से माहौल को खुशनुमा बना देते हैं। इस दिवस की सबसे खास बात यह है कि इसमें किए जाने वाले मजाक आमतौर पर हानिरहित होते हैं। लोग ऐसी कल्पनात्मक या मनगढ़ंत बातें प्रस्तुत करते हैं, जिन पर सामने वाला आसानी से विश्वास कर ले और बाद में जब सच्चाई सामने आए तो दोनों पक्ष हंसी में डूब जाएं। कई बार तो बड़े-बड़े बुद्धिमान और चतुर लोग भी इस दिन मजाक का शिकार बन जाते हैं, जिससे वातावरण और भी मनोरंजक हो उठता है।

यह परंपरा केवल आम लोगों तक सीमित नहीं रही है बल्कि बड़े मीडिया संस्थान, प्रतिष्ठित कंपनियां और नामी ब्रांड भी इस दिन अनोखे और रचनात्मक 'प्रैंक्स' के जरिए लोगों का मनोरंजन करते हैं। इतिहास में कई रोचक उदाहरण मिलते हैं। 1957 में बीबीसी ने 'स्पेगेटी ट्री' की खबर प्रसारित की, जिसमें बताया गया कि स्विट्जरलैंड में पेड़ों पर स्पेगेटी उगती है। हजारों लोगों ने इस पर विश्वास कर लिया। इसी तरह 1996 में बर्गर किंग ने 'लेफ्ट-हैंड व्हॉपर' बर्गर की घोषणा कर लोगों को चौंका दिया। डिजिटल युग में यह परंपरा और भी व्यापक हो गई है। सोशल मीडिया और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स के जरिए ऐसे मजाक कुछ ही मिनटों में लाखों लोगों तक पहुंच जाते हैं। हालांकि, कभी-कभी लोग सच्ची खबरों को भी 'अप्रैल फूल' समझकर नजरअंदाज कर देते हैं और बाद में पछताते हैं।

मूर्ख दिवस की उत्पत्ति को लेकर विभिन्न मत हैं। एक प्रचलित धारणा के अनुसार, प्राचीन समय में कई देशों में नया वर्ष 1 अप्रैल से शुरू होता था। जब कैलेंडर प्रणाली में बदलाव हुआ और नए साल की शुरुआत 1 जनवरी से होने लगी, तब भी कुछ लोग पुरानी परंपरा का पालन करते रहे। ऐसे लोगों का मजाक उड़ाने के लिए 1 अप्रैल को 'मूर्ख दिवस' के रूप में मनाया जाने लगा। धीरे-धीरे यह परंपरा मनोरंजन का माध्यम बन गई। भारतीय संस्कृति में भले ही यह परंपरा पश्चिम से आई हो लेकिन इसके मूल में निहित भावना (हंसी, आनंद और आपसी मेलजोल) भारतीय जीवन मूल्यों से भी मेल खाती है। आज की भागदौड़ और तनावपूर्ण जीवनशैली में जहां लोगों के पास हंसने का समय भी कम हो गया है, वहां यह दिन एक सुखद अवसर प्रदान करता है। हालांकि, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि मजाक की सीमा शालीनता और संवेदनशीलता के भीतर ही होनी चाहिए। किसी की भावनाओं को ठेस पहुंचाने, अपमान करने या नुकसान पहुंचाने वाला मजाक इस दिवस की भावना के विपरीत है। मूर्ख दिवस का उद्देश्य किसी को नीचा दिखाना नहीं बल्कि सबको साथ लेकर हंसना और खुशियां बांटना है। वास्तव में, शुद्ध हास्य न केवल मानसिक तनाव को कम करता है बल्कि आपसी संबंधों को भी मजबूत बनाता है। यह मन में सकारात्मकता और भाईचारे की भावना का संचार करता है। ऐसे में मूर्ख दिवस आज के समय में और भी अधिक प्रासंगिक हो जाता है। अंततः कहा जा सकता है कि मूर्ख दिवस केवल मजाक का दिन नहीं बल्कि जीवन में खुशियों के छोटे-छोटे पल तलाशने और उन्हें साझा करने का उत्सव है। यदि इसे शालीनता और सद्भाव के साथ मनाया जाए तो यह दिन सचमुच हंसी के अनमोल पलों से जीवन को सराबोर कर सकता है।